अप्रैल १९६८

लोक संस्कृति



संपादक : कोमल कोठारी, विजयदान देथा

चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान, बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया

वर्ष ७ अंक १०

लोक संस्कृति

कथा, गीत, गाथा, कहावत, मुहावरा, धर्म, देवी-देवता, त्योहार, नाट्य, चित्र, मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

अनुक्रम



भैय्या मेरा भाई

एक था बामन । उसके थे दो बच्चे । बेटा सोलह वर्षों का और बेटी दस वर्षों की । बामन चालीस साल का हुआ तब पंडिताइन की मृत्यु हो गई । वर्ष डेढ़ वर्ष तक तो पंडित बच्चों की खातिर दृढ़ रहा , किन्तु बाद में नित्य के पीसने, पोने तथा रोटियों की मार से औरत के लिए मन विचलित हो उठा । ढलती उम्र में नई शादी तो नहीं हुई , नाता हो गया । पच्चीस वर्षों की नातायत के साथ दस बरस की एक बच्ची भी साथ आई । बच्ची काली-कलूटी और बदसूरत थी । कानी । दंतल । ठिगनी । सुस्त । हीन । तुच्छ । शरीर से भी कहीं अधिक उसका मन काला था ।

नई पंडिताइन खूबसूरत तो काफी थी , किन्तु मन की बेहद मलिन । घिनौनी । ईर्ष्यालु । झगड़ालू । कर्कश । प्रपंचमयी । घर में पांव रखते ही उसने सौतेले बच्चों का तो काले सांप की भांति पीछा करना आरंभ कर दिया । अपनी बिटिया को तो प्यार करती , लेकिन उस दोनों सौतेले बच्चों को हरदम

गालियां निकालती रहती। पीटती। दुर्व्यवहार करती। प्रति क्षण काम में लगाये रखती। नई घरवाली के सिखाये सिखाये बामन ने केवल पंडिताई के अलावा घर का सभी काम छोड़ दिया। तब खेलने की उम्र के बच्चों को खेलना छोड़ घर के काम-काजों में खटना ही पड़ा। खेती-पाती। दुहारी। सूड़-सबाड़। फूस-फांटा। और ढोर-डांगरों को चराना।

पानी सींचने के लिए जातीं तो पंडिताइन अपनी बिटिया को छोटा घड़ा और सौतेली बेटी को बड़ा मटका देती। अपनी बेटी को आसान काम और सौतली बेटी को कठिन व भारी काम बताती। स्वयं की बेटी को कंडे बीनने के लिए छोटी खारी और सौतेली बेटी को बड़ी खारी देती और साथ में उसे यह भुलावन भी देती कि वह लकड़ियों का बड़ा भारा लेकर आये। सौतेली बेटी थेपडियें थापती। झूंठे बरतन मांजती। पीसती। दलती। फिर भी बदशक्ल सौतेली बहिन उस पर ठौर जताती। चुगली-चकारी करती।

इस जो-तोड़ मेहनत के बाद भी खाने में एकदम भेदभाव। बासी, सूखी, ठंडी और जली हुई रोटियां। दूध, दही, घीं और गुड़ का कोई वास्ता ही नहीं। शेष तीनों व्यक्ति तो बढ़िया पौष्टिक खाना खाते। दोनों भाई बहिन कुछ ही दिनों में हैरान हो गये। चुपचाप रोते-बिसुरते। मां की मृत्यु के बाद उन्हें ममता की असली पहिचान हुई।

एक दिन की बात कि दोनों लड़कियें खेत में ईंधन लाने के लिए गईं। बेटा हल चला रहा था। उसने अपनी बहिन को तो लकड़ियों की छोटी और हलकी भारी उंचवाई। कानी छोरी की खारी में कंडों की ठौड़ बड़े बड़े पत्थर भरकर उसके सिर पर पटकी। उसे इतना धीरज व सब्र कहां! जोर जोर से रोती-चिल्लाती घर गई। एक की इक्कीस बातें मिलाकर बताई। पत्थरों की खारी आंगन में गिराकर खुद बुरी तरह रोने बैठ गई। सिर पर उभरा हुआ ढीम बताया। फिर क्या कहना! छेड़ी हुई नागन की पूंछ पर जैसे पैर लगा हो। पंडिताइन के क्रोध का पार नहीं रहा। बाल बिखेर, काजल-बिंदी मिटाकर, गहने-चूड़ियां उतार आंगन पर ही सो गई। चूल्हे में पानी गिराकर ऊपर ओंधा तवा रख दिया। कानी बेटी पास बैठकर रोने लगी। इसके पहिले पंडिताइन ने सोतेली बेटी को मार मारकर हाथों का खार निकाल लिया था।

धान-चून की फेरी लगाकर बामन घर आया। पत्नी का यह रंग-ढंग देखा तो हक्का-बक्का रह गया। बहुत निहोरे व आजीजी की तब कहीं घरवाली ने मसाले लगाकर सारी बात बताई। बीच बीच में सौतेली बेटी भी कहती जा

रही थी कि नालायक अपनी बहिन को तो साथ खिलाता है और उसे दुत्कारता है। उसे हमेशा खिजाता और पीटता है। फिर भी आज दिन तक शिकायत नहीं की। आज नींबू जितना बड़ा ढीम मां ने सिर धोते समय देखा तो उसे सब बात बतानी ही पड़ी।

रो-धोकर सारी बातें बताने के बाद पंडिताइन ने अंत में ऐसी हीन व गंदी बात कही, जिससे बामन के मन में जहर-सा घुल गया। घरवाली आंखें बंद करके कहने लगी — जवानी एक तुम्हारे बेटे ही के तो नहीं आई, सो वह मां को भी बुरी नजर से देखे। मैंने तो लज्जावश तुमसे कहा नहीं। सौ बातों की एक बात कि अपने लाडले बेटे का काम तमाम करो तो तुम्हारे साथ घरवास रखूं, नहीं तो अपनी बेटी को लेकर पीहर चली जाऊंगी। तुम्हारे घर का पानी भी नहीं पीऊंगी।

यह बात सुनते ही बाप पर तो मानो भूत ही सवार हो गया। उबलते स्वर में कहा — 'ऐसे नीच बेटे जिन्दा रहकर भी क्या निहाल करेंगे! तू रूठना बंद कर, मैं आज ही उसे ठिकाने लगा दूंगा।' पास ही बैठी बहिन छबर-छबर रो रही थी। पिता के मुंह से यह बात सुनते ही उसके आंसू सूख गये। वह पत्ते की तरह कांपने लगी। कलेजा धक-धक करने लगा। मुश्किल से खड़ी हुई। चुपचाप घर से रवाना हुई। भाई को यह दुखद समाचार सुनाने के लिए भागी।

और इधर घरवाली का हाथ पकड़कर बामन बोला — 'लो, अब खड़ी हो जाओ। तुम्हारे रूठने से मेरे एक दिन भी निभ सकता है भला!' पंडित को आज एक नये ही ज्ञान का अनुभव हुआ कि साधारण कपड़े पहनी हुई, आभूषण-रहित रूठी हुई औरत, सोलह श्रृंगार की हुई औरत से कहीं ज्यादा खूबसूरत व सुहानी लगती है।

ओरी का दरवाजा खोल दोनों पति-पत्नी आखिर बाहर आये। कानी बद-सूरत लड़की आंगन में बैठी रो रही थी। ओढ़नी के पल्ले से आंसू पोंछ मां ने पुचकारते हुए कहा—बस, अब रो मत। आज के बाद यह नालायक तुझे कभी तंग नहीं करेगा।

बामन हाथ में एक भारी-भरकम लकड़ी थामे बाहर जाने को हुआ तो पंडिताइन ने मीठे स्वर में कहा—'तुम्हारे तो हर काम में फुर्ती बहुत है। अभी खाना पका देती हूं, खाकर ही जाना।' बामन ने दृढ़ता मिश्रित क्रोध के स्वर में कहा — अब तो वापस आकर ही खाऊंगा। तुम रसोई बनाकर तैयार रखो।

बामन की आंखों में काल की हिंस्र भावना खेल रही थी। जलती आंखों से चिनगारियां उछालता वह बाहर निकल आया।

हल चलाते भाई को जब बहिन ने उसके मारने की सूचना दी तो भाई ने कहा — 'जब पिता ने ही मारना तय कर लिया तो बेटे के जीने में क्या सार ! तू रो मत। मरते ही वन का कौआ बनूंगा। तुझे मीठे मीठे आम खिलाऊंगा।' बहिन कुछ कहना चाह रही थी कि उसे बाप आता हुआ दिखाई दिया। वाणी गले में ही चिपक रह गई। घबराकर अप्रतिभ गति से गांव की तरफ दौड़ पड़ी।

बेटा हल को कुछ ठीक-ठाक कर रहा था। पांवों की आहट सुन खड़ा हुआ। बोला—' आपने खाना लाने का कष्ट क्यों उठाया, मैं खुद ही आ जाता।' पिता तो प्रत्यक्ष यमराज का रूप धारण करके आया था। उसके मुंह से सुलगते हुए शब्द निकले — सारी उम्र का खाना तुझे आज एक साथ ही खिलादूं। चंडाल, तूने मां का रिश्ता भी नहीं छोड़ा !

यह कहकर उसने बेटे के माथे पर लट्ठ का भरपूर प्रहार किया सो वह तो चक्कर खाकर नीचे गिरता ही नजर आया। सिर के दो हिस्से हो गये। रक्त की धारा बह चली। अस्पष्ट स्वर में रिरियाते हुए कुछ बोला, किन्तु समझ कुछ भी नहीं पड़ा। वह रिरियाता बंद हुआ तो उसी पल आम के पेड़ पर एक कौआ मीठे सुर में कांव कांव करता सुनाई दिया।

दोनों पति-पत्नी प्यार से साथ बैठकर खाना खाने लगे। किन्तु मृत भाई की बहिन दिन भर चुपचाप रोती रही। दिन भर भूखी रही। कौन मनुहार करता ! दूसरे दिन दोनों लड़कियें ईंधन लेने के लिए गईं। आम के उसी वृक्ष पर बैठा कौआ कांव कांव की मीठी वाणी बोल रहा था। बहिन को भाई का कहा याद आया। वह दौड़कर आम के पेड़ तले खड़ी हो गई। कानी बहिन भी पीछे की पीछे वहां चली आई। कौए ने अपनी बहिन को पके व मीठे आम तोड़ तोड़कर दिये। पर कानी के सिर पर गुठलियों की तड़ातड़ ही बजाता रहा।

वह रोती-बिसुरती घर पहुंची। मां को कौए वाली सारी कारस्तानी बताई। पंडिताइन तुरत समझ गई कि इस कौए में ही मरे बेटे के प्राण हैं। वह तो उसी क्षण आटीपाटी लेकर जमीन पर ही सो गई। पति ने खूब निहोरे किये, उसे हाथ जोड़ तब भी वह नहीं मानी। आखिर मन का असली भेद प्रकट किया। बोली—आम के पेड़ पर बैठे उस कौए को मारो तो तुम्हारे साथ घरवास रखूं, नहीं तो यह पीहर चली।

बामन ने दिलासा देते हुए कहा — ' जब सगे बेटे को हाथ से मार दिया

तो अब इस कौए को मारने में कौन-सी बड़ी बात ! इस छोटी-सी बात के लिए तुमने नाहक रूठना किया।' पास बैठी बहिन यह बात सुन रही थी। उसका कलेजा धकधक करने लगा। मुश्किल से खड़ी हुई। फिर तेजी से उस आम वाले जंगल की ओर दौड़ी। रोते रोते आखिर आम के पेड़ तले पहुंची। कौए ने बहिन को देखा तो वह कांव कांव का मीठा सुर घोलने लगा। पके और मीठे आम तोड़ तोड़कर फेंके, किन्तु उसने एक भी नहीं चखा। बोली — उस कानी बेहया ने घर जाकर चुगली खाई। मां रिसाना करके जमीन पर सो गई। उसके कहने से पिताजी खुद तुझे मारने के लिए आ रहे हैं। मुझे ये तीनों राक्षस भूखी रख रखकर मार डालेंगे।

भाई बहिन को दिलासा देते हुए कहने लगा — तू इस बात की कतई चिंता मत कर। मैं मरकर बगिया का सुग्गा बनूंगा। तुझे पके हुए कई फल खिलाऊंगा — अंगूर, अनार, सेव, अमरूद, नारंगी, पपीता, सीताफल इत्यादि कई रसीले मीठे फल। तू बिरथा सोच क्यों कर रही है ! मैं जिन्दा हूं तब तक तुझे कभी भूखों नहीं मरने दूंगा।

बहिन खुशी खुशी वहां से रवाना हो गई। रास्ते में बाप मिला। बेटी के सिर पर लकड़ियों का भारी गट्ठर देखकर कुछ भी पूछताछ नहीं की। सीधा आम के पेड़ की तरफ बढ़ा। कौआ उसी तरह कांव कांव कर रहा था। खींचकर तीर चलाया। कौआ तीर सहित नीचे आ गिरा।

कौए के मरते ही पास के बाग में एक हरा सुग्गा मीठे सुर में बोलने लगा।

दूसरे दिन दोनों लड़कियें ईंधन बीनने के लिए जंगल में आईं। बगिया के पास होकर निकलीं तो सुग्गे की मीठी बोली सुनाई दी। बहिन को भाई का कहा याद आया। दौड़ी दौड़ी बाग में आई। कानी छोकरी भी पीछे की पीछे दौड़कर वहां पहुंची।

सुग्गे भैय्या ने अपनी बहिन को बहुत सारे मीठे फल खाने को दिये। बहिन तो मीठे फल खाकर पूर्ण तृप्त हो गई। कानी बहिन का मन तो बहुत ही ढुला पर जोर क्या करती। बोली —सुग्गे भैय्या, मुझे भी मीठे फल खाने को दे रे !

तब सुग्गे ने तड़ातड़ उसके माथे पर गुठलियां फेंकीं। माथा ठौड़ ठौड़ से फूल गया। वह रोती रोती घर आई। मां समझ गई कि तोते में कौए के प्राण रम गये हैं। वह तो पहिले की तरह फिर आटीपाटी लेकर जमीन पर सो गई। पति ने बहुत ही निहोरे किये, पर तब भी उसकी बात नहीं मानी। कहा —

इस सुग्गे को मारो तो घरवास रखूं। नहीं तो मैं आज रात ही अपने पीहर चली जाऊंगी।

बामन ने वही बात दुहराई — जब बेटे को मारते समय भी तेरा कहा नहीं टाला तो अब सुग्गे को मारने में क्या बड़ी बात! इस नाकुछ बात के लिए तूने व्यर्थ रिसाना किया। पास बैठी बहिन ने यह सारी बात सुनी। थरथर कांपी। कलेजा धक-धक करने लगा। मुश्किल से खड़ी हुई। बाग की तरफ दौड़ी। रोते रोते आखिर बगीचे में पहुंची। सुग्गे ने बहिन को देखते ही पहिचान लिया। मीठे सुर में बोलने लगा। पके हुए और मीठे फल तोड़ तोड़कर फेंके पर उसने तो चखा भी नहीं। कहने लगी — उस बेहया ने घर जाकर फिर चुगली खाई। मां फिर आटी-पाटी लेकर सो गई। पिताजी स्वयं तुझे मारने को आ रहे है। मुझे ये तीनों दुष्ट भूखों रख रखकर मार डालेंगे।

भाई बहिन को दिलासा देते हुए कहने लगा— 'तू किसी बात की चिंता मत कर। में मरकर पानी का मेंढ़क बनूंगा। तुझे हमेशा अमोलक मोती लाकर दूंगा। मोती बेचकर जो इच्छा हो सो खाना। मैं जिन्दा हूं तब तक तुझे भूख से मरने नही दूंगा।' बहिन खुशी खुशी वहां से रवाना हो गई। रास्ते में बाप मिला। कंधे पर तीर-कबान लटक रहा था। बेटी के सिर पर लकड़ियों का बड़ा गट्ठर देखा तो उसने कुछ भी पूछताछ नहीं की। सीधा बाग में आया। तोता उसी तरह मीठी बोली बोल रहा था। खींचकर तीर चलाया। वह तो तीर सहित नीचे आ गिरा।

सुग्गे के मरते ही पास के तालाब में एक मेंढ़क टर्र टर्र का मिठास घोलने लगा।

दूसरे दिन दोनों बहिनें तालाब पर पानी भरने गईं। मेंढ़क ने बहिन को आते देखा तो वह बाहर निकला। टर्र टर्र का मीठा गीत सुनाने लगा। बहिन को भाई का कहा याद आया। वह दौड़कर उधर ही पहुंची। बेहया कानी बहिन भी पीछे की पीछे दौड़कर आई।

मेंढ़क ने अपनी बहित को तो अमूल्य मोती लाकर दिये। निर्मल नीर से भर कर गगरी उंचवाई। कानी का मन भी मोतियों के लिए बेहद डुला पर जोर क्या करती। बोली — 'मेंढ़क भैय्या, मुझे भी अमूल्य मोती लाकर दे रे!' तब मेंढ़क ने उसकी तरफ जल-सांप और जोंकें फेंकीं। ठौड़ ठौड़ जोंकें चिपक गईं। वह बहुत ही चिल्लाई। पानी को गदला कर उसके घड़े में कीचड़ भर दिया। जोंकें उसका खून चूस चूसकर एकदम फूल गईं।

वह रोती रोती घर आई। मेंढ़क की नीचता का बढ़ा - चढ़ाकर वर्णन किया। मां तुरत समझ गई कि मेंढ़क में सुग्गे के प्राण रम गये हैं। वह तो उसी भांति आटी - पाटी लेकर जमीन पर हो सो गई। बाल बिखेर, काजल - बिंदी मिटाकर, गहने-चूड़ियां उतार एकदम श्रीहीन हो गई। चूल्हे में पानी गिराकर ऊपर औंधा तवा पटक दिया।

धान-चून की फेरी लगाकर पंडित घर आया तो फिर वही का वही रंग-ढंग। बहुत ही निहोरे किये। हाथ जोड़े। तब कहीं घरवाली ने मुंह खोला। कहने लगी — 'मेंढ़क का कचूमर निकालो तो तुम्हारे साथ घरवास रखूं। नहीं तो अपनी बेटी को लेकर पीहर चली जाऊंगी। जिंदगी भर इधर मुंह भी नहीं करूंगी।' पंडित ने तो वापस वही बोल दुहराये—जब बेटे को मारने का कहा नहीं टाला तो फिर यह मेंढ़क मारना कौन सी बड़ी बात ! छोटी-सी बात के लिए फिजूल रूठी।

पास बैठी बहिन ने यह बात सुनी। थर थर कांपी। कलेजा धक धक करने लगा। मुश्किल से खड़ी हुई। तालाब की तरफ दौड़ी। रोते रोते किनारे तक पहुंची। मेंढ़क ने बहिन को आते देखा तो वह टर्रं टर्रं का मिठास घोलने लगा। अमूल्य मोतियों का किनारे पर ढेर लगा दिया, पर उसने एक भी नहीं उठाया। रोते रोते कहने लगी — उस चंडाल काली कलूटी ने फिर बदला लिया। मां रूठकर सो गई। पिताजी तो उसका एक भी कहा नहीं टालते। तुझे मारने के लिए वे एक बड़ा पत्थर उठाकर ला रहे हैं। मुझे ये तीनों दुष्ट भूखों मार देंगे।

भाई ने बहिन को दिलासा देते हुए कहा — तू किसी बात की चिंता न कर। कहे तो मोतियों का और ढेर लगा दूं। घड़ा भरकर लेजा। हमेशा एक एक मोती घर पर देना, वे लालची तुम्हें आराम से रखेंगे। तुम्हें प्यार करेंगे। चार योनि बदली तो भी उन्होंने पीछा नहीं छोड़ा। राजा के यहां उनका वश नहीं चलेगा। निसंतान रानी के गर्भ से जन्म लूंगा। नौ महीने तो तुझे जैसे-तैसे निकालने हैं। रानी की कोख से पैदा होते ही मैं जोर जोर से रोने लगूंगा। सो एक क्षण के लिए भी नहीं रुकने वाला। किसी के भी रखे नहीं रहूंगा। तू झूला झुलाते गायेगी तब रोना बंद करूंगा। रानी तुझे वहीं रख लेगी। रह जाना।

फिर वह घड़े में मोती भरकर वहां से रवाना हो गई। पाज उतरते ही पिता मिला। सिरपर बड़ा पत्थर था। किनारे पर बैठा मेंढ़क टर्र-टर्र कर रहा था। बाप ने तो पास आते ही उस पर पत्थर गिरा दिया। मेंढ़क का कचूमर निकल

गया। सहसा एक बड़ी हिलोर आई सो मरे हुए मेंढ़क को अन्दर लेती गई।

उसी रात निसंतान रानी के आशा रही।

हमेशा एक एक मोती देकर वह अभागिन अपने लालची घरवालों का मन रखने लगी। इस प्रकार नौ महिनों तक उसने दुख के दिन तोड़े। नवमे महीने रानी के राजकंवर पैदा हुआ। गर्भ से बाहर निकलते ही पलाय-पलाय रोने लगा सो एक क्षण भर के लिए भी नहीं रुका। राजा-रानी दोनों जबरदस्त हैरान। बहुत ही इलाज करवाये, टोने-टोटके व मंत्र करवाये पर कुछ भी लाभ नहीं हुआ।

राजा ने विवश होकर डोंडी पिटवाई कि जो कोई राजकंवर का रोना बंद करेगा, उसे मुंह मांगा इनाम मिलेगा। सारे राज्य की प्रजा लोरियां गा गाकर थक गई पर राजकंवर का रोना बंद नहीं हुआ। आखिर उस बामन के घर की बारी आई। बाप, मां और कानी छोकरी सभी ने इनाम के लोभ में बहुत चेष्टाएं कीं, पर मनचाही नहीं हुई। सौतेली बेटी ने डरते डरते कहा: मां, मैं राजकंवर का रोना बंद कर सकती हूं।

घरवाले तो सारे मना करने वाले ही थे, पर राज के सवारों ने इस बात को सुन लिया। उसको साथ लेने के बाद ही वहां से रवाना हुए। राजकंवर को गोद में लेकर ये पंक्तियां मधुरता-पूर्वक गाने लगी:

पहिले बामन के पेट
फिर वन का कौआ
फिर बगिया का सुग्गा
फिर जल का मेंढ़क
अब रानी के पेट
सोजा रे भैय्या

कहते ही राजकंवर का रोना बंद हो गया। वापस रोना तो दूर की बात, मधुर मधुर हसने लगा। रानी को राजकंवर के हंसने की, उसके जन्म से भी ज्यादा खुशी हुई। कंवर को खिलाने के लिए उसे वहीं रख लिया। इनाम देने के लिए बहुत ही निहोरे किये, किन्तु वह नहीं मानी। बार बार यह बात दुहराती कि भैय्या को खिलाने से बढ़कर और क्या दूसरा इनाम हो सकता है!

हर वक्त राजकंवर को गोद में लिए केवल यह एक ही लोरी गाती:

पहिले बामन के पेट
फिर वन का कौआ

फिर बाग का सुग्गा
फिर जल का मेंढ़क
अब रानी के पेट
सोजा रे भैय्या एक घड़ी
तुझे मगा दूं चांद की दड़ी

बहिन को छोड़ कर राजकंवर किसी के भी पास नहीं जाता। राजकंवर तिल बढ़ता जौ बढ़ने लगा और जौ बढ़ता तिल बढ़ने लगा। देखते देखते पांच बरस का हो गया। बोलना सीखते ही उसने राजा-रानी को बाप व सौतेली मां के सारे काले-कारनामे बताये कि उन्होंने बार बार किस निर्दयता-पूर्वक उसे मारा। आखिर रानी की कोख से पैदा होने पर उन हत्यारों का वश नहीं चला। अब उन तीनों दुष्टों को नहीं मारने से वह जीवित नहीं बचेगा।

अधर्म और पाप की इतनी बातें सुनने के बाद राजा के क्रोध का तो क्या कहना। जल्लादों को भेज उन तीनों को बुलवाया। काला मुंह करवाकर काले ही कपड़े पहिनाये। जिन्दा ही दीवार में चुनवाने का आदेश दिया। राजा का आदेश सुनने के बाद कैसी ढील! वे रोते-चिल्लाते रहे और जल्लादों ने उन्हें दीवार में चुन दिया। बड़ी कठिनाई से उनके प्राण निकले।

राजकवर बड़ा होकर राजा बना। धूमधाम से बहिन का ब्याह रचाया। दहेज में हीरे-मोतियों के सात कलश भरकर दिये। दोनों भाई बहिन वर्षों तक जीये। सुख और वैभव के झूले में झूले। दुख का तो उन्हें फिर सपना भी नहीं आया।

इतनी ही रात और यही मेरी बात। पसंद न आई हो तो नारियल में डालकर वापस लौटा देना।

दुष्ट प्रकृति

एक थोरी [जाति विशेष] स्वभाव से ही बड़ा दुष्ट, तुच्छ व हीन-प्रकृति का था। सीधे मुंह तो किसी से बात ही नहीं करता था। एक दफा वह खेत बो रहा था। एक राहगीर ने उससे पूछा — 'थोरी, क्या बो रहा है?' लेकिन उसने तो अपनी लत मुजब वैसा ही रूखा जवाब दिया — 'क्यों, क्या मतलब है तुम्हें? जाओ नहीं बताता!' राहगीर ने तो भी विनम्रता के साथ कहा — 'कोई बात नहीं। उगेगा तब देख लूंगा!' थोरी ने आत्म तुष्ठि के भाव से कहा: पाबू [एक देवता विशेष] करे एक दाना भी नहीं उगे, फिर देखेगा क्या?



मेंढ़क की चतुराई

एक था मेंढ़क। एक बार तालाब का निवास छोड़कर वह घूमने के लिये बाहर निकला। वह अपने ध्यान में मगन व निश्चित होकर फदाफद फुदकता हुआ जा रहा था कि अचानक उसे मालूम हुआ कि पीछे से किसी ने उसकी टांग पकड़ली है; और टांग पकड़ते ही कोई उसे एकदक सीधा आकाश की ओर ले उड़ा। एक पैर से टंगा हुआ वह तो ऊपर की ओर उड़ता ही गया — जैसे मेंढ़क के पंख लग गये हों। उसने सोचा कि भगवान का दूत उसे जिन्दा ही स्वर्ग ले जा रहा है। उसके मन में काफी अभिमान हुआ, कि सहसा उसकी नजर भगवान के दूत पर पड़ी तो तुरत पहिचान गया कि अरे यह तो कौआ है! आज तो बुरा फंसा। कैसे बचाव होगा? किन्तु अब डरने से भी क्या गरज सरेगी! वह तनिक-सा भी नहीं घबराया। मरने से तो अधिक हानि नहीं। कुछ न कुछ उपाय सोचना चाहिये!

उड़ते उड़ते वह कौआ मेंढ़क को खाने के लिए एक बड़ी शिला पर आकर बैठा, क्योंकि उड़ते उड़ते खा सकना संभव नहीं था! कठोर शिलाखंड पर मेंढ़क को धरने के बाद उसे मारने की खातिर चोंच का प्रहार करने ही वाला था कि मेंढ़क जोर से हंसा। मेंढ़क का इस प्रकार खिल-खिल हंसना देख कौए को बड़ा आश्चर्य हुआ! मरने की दुखद वेला यह हंसना कैसा! कौए ने उससे पूछा —

'बात क्या है ? इस प्रकार खिल-खिल हंस क्यों रहा है ?' तब मेंढ़क ने पूर्ण संयत स्वर में उत्तर दिया — यहां मेरा एक अजीज मित्र सांप रहता है। सच ही तू मुझे बहुत ही बढ़िया जगह पर लाया। मुझे मारने के पहिले ही वह तुझे खा जायेगा। मौत मेरी नहीं तेरी आई है। इस कारण मुझे बरबस हंसी छूट गई।

मेंढ़क की बात सुनकर कौआ डरा। उसने उसी क्षण मेंढ़क की टांग पकड़ली और वहां से उड़ा। उड़ते उड़ते वह एक पेड़ पर आकर बैठा। एक बड़ी डाल पर रखने के बाद चोंच का प्रहार करने ही वाला था कि मेंढ़क फिर खिल-खिल हंसा। कौए का तो दिल ही बैठ गया। कैसा पगला मेंढ़क है सो मरने के समय रोने के बजाय हंस रहा है। शैतान कहीं का! पूछा — अरे बावले यों बार बार हंस क्यों रहा है ? इस बार क्या बात हुई ? मौत के सामने हंसते हुए तो तुझे ही देखा।

मेंढ़क ने हंसते हंसते ही जवाब दिया — 'मौत मेरी नहीं, तुम्हारी आई है। यहां मेरी धर्म बहिन एक बिल्ली रहती है। तू जरा मुझ पर चोंच का प्रहार करके तो देख, फिर तेरी क्या गत बिगड़ती है। इस बुरी कदर मारेगी कि फिर तू सपने में भी किसी मेंढ़क को पकड़ने की हिम्मत नहीं करेगा।' मेंढ़क की यह बात सुनकर कौआ बेहद डरा। चोंच में मेंढ़क की टांग दबाकर वहां से उड़ा। उड़ते उड़ते वह भैरूंजी के चबूतरे पर आकर बैठा। भैरूंजी की मूर्ति के सामने मेंढ़क को पटक उस पर चोंच मारने वाला ही था कि मेंढ़क फिर खिल-खिल हंसा। इस बार कौए ने भी एक हलकी-सी मुस्कान के साथ पूछा — 'पगले, अब यहां तुझे बचाने वाला कौन है ? तू हंसा तो हंसा ही क्यों ? तुझ पर मौत मंडरा रही है और तू बावले की तरह हंस रहा है !' मेंढ़क ने उसी निडरता पूर्वक दृढ़ता के स्वर में जवाब दिया — मौत मुझ पर नहीं, तुझ पर मंडरा रही है। मुझे इसी काल-भैरव का इष्ट है। मैं दर्शन करने के लिए यहीं आ रहा था कि तूने बीच रास्ते में ही पकड़ लिया। बिना दर्शन किये पानी का घूंट तक नहीं पीता। संयोग से तू खुद ही मुझे यहां ले आया। अपने इष्ट के ऐसे चमत्कार का तो आज ही पता चला! काल-भैरव की शरण में आने के बाद मुझे क्या डर ? चोंच का वार करना तो दूर की बात, तू मन में इसका विचार भी कर तो सही, फिर देखना मेरा इष्टदेव तुझ में क्या बिताता है ! तू यहीं का यहीं भस्म न हो जाये तो मुझे कहना।

यह बात सुनते ही कौआ तो थर-थर कांपने लगा। उसी क्षण मेंढ़क की टांग पकड़ वहां से उड़ा। उड़ता उड़ता उसी तालाब के किनारे वापस लौट

आया, जहां उसने फुदकते मेंढ़क की टांग पकड़ी थी। कौए को प्यास लगी। मेंढ़क को खाने के बाद वह डटकर पानी पीना चाहता था। उस तालाब के किनारे एक चिकनी व समतल शिला पड़ी थी। कौए ने मेंढ़क को शिला पर पटक, उसे खाने के लिए चोंच का प्रहार करने की चेष्टा की, पर इस बार मेंढ़क कतई नही हंसा। तब कौए ने पूछा — शायद यहां तेरा कोई भी हिमायती नहीं है। यदि कोई हिमायती होता तो तू हंसता जरूर। मेंढ़क ने उदास मुंह करके धीमे स्वर में जवाब दिया — तुम बिलकुल ठीक कह रहे हो! यहां मुझे बचाने वाला कोई नहीं। अब तुम मुझे निश्चिंत होकर खा सकते हो। किन्तु मारने के पहिले मुझ पर थोड़ी सी दया करें तो आपकी बड़ी मेहरबानी होगी। आपकी चोंच बहुत ही भोटी है। मुझे मरते हुए तकलीफ होगी। यदि आप चोंच को पानी में भिगोकर इस शिला पर घिस डालें तो वह एकदम तेज व तीखी हो जायेगी। मुझे मरते हुए तकलीफ नहीं होगी। फिर आपकी जंसी मरजी। मुझे तो मरना है ही। चाहे दुख से मरूं और चाहे दुख से। मैंने तीन बार आपके प्राण बचाये, यदि उसके बदले में इतनी सी दया कर दें तो मैं मरता हुआ भी आपको आशिष दूंगा।

कौए ने सोचा कि इसमें क्या हानि? चोंच तेज करलूं तो मेरा क्या बिगड़ता है? बेचारे मेंढ़क की बात रह जायेगी और मेरी भूख मिट जायेगी। मेंढ़क की तरफ आंख की पुतली घुमाकर बोला—पानी में भिगोकर अभी इसी शिला पर चोंच भाले के समान तेज करता हूं। तू डर मत। यहीं बंठे रहना। इधर-उधर मत फुदकना। अभी वापस आया

मेंढ़क कहने लगा — इधर-उधर फुदक कर मुझे कहां जाना है। यदि आपको विश्वास न हो तो न जायें, मुझे क्या? मरने का क्या तो दुख और क्या सुख!

कौए ने नम्रता के साथ कहा — इस में अविश्वास की क्या बात? अभी वापस आया। तब तक तू अपने इष्टदेव को याद करले।

कौआ पानी में चोंच भिगोकर आया तब तक मेंढ़क फुदक कर तालाब के पानी में घुस गया। पानी में जाते ही उसका कलेजा ठंडा हुआ। सोचने लगा— आज तो बचा जंसे ही बचा! अब कभी भी पानी से बाहर नहीं निकलूंगा।

उधर कौए को मारने के जोश में कुछ भी दूसरा खयाल नहीं था। शिला पर फटाफट अपनी चोंच घिसने लगा। जब चोंच काफी तेज हुई तो मेंढ़क पर प्रहार करने के लिए गर्दन ऊंची की, पर शिला पर मेंढ़क कहीं नजर नहीं आया।

कौए ने इधर-उधर देखा। मेंढ़क की छाया तक नहीं। तब कौए ने मेंढ़क को आवाज लगाते हुए पुकारा — तू कहां चला गया रे! देख तेरे सुख की खातिर मैं चोंच कितनी तेज करके लाया। भाले की नोक के समान। जहां से भी हो जल्दी आ।

मेंढ़क पानी के अन्दर ही से टर्र-टर्र करते हुए बोला — 'चोंच से भी तेरी बुद्धि कहीं ज्यादा भोटी है। पहिले उसे तेज करके ला। फिर मुझे मारने की युक्ति सोच।' कौआ मेंढ़क का जवाब सुनकर बड़ा लज्जित हुआ। मुंह नीचा करके वहां से उड़ गया। धैर्य और दृढ़ता के बल पर मेंढ़क ने सिर पर आई हुई मौत से भी अपना बचाव कर लिया।

रुपये की महिमा

बनिये का बच्चा तो जन्म के साथ ही दस वर्षों जितनी अक्ल लेकर पैदा होता है। बोलने सीखना तक तो उसकी बुद्धि पांवों में ठोकरें खाती फिरती है। एक बनिये के एक ऐसा ही होशियार लड़का था। सात बरस तक पहुंचते पहुंचते तो उसके दुकान का सारा काम संभाल लिया — कम तोलना, कम नापना और झूठ बोलना। बाप को भी जब बेटे की बुद्धि पर पूरा विश्वास हो गया तो वह सारे दिन रकम बटोरता रहता। दुकान की देहरी पर भी नहीं चढ़ता। लोग बच्चे को ठगने के वहम में खुद हमेशा ठग लिए जाते। उन्हें कुछ भी मालूम नहीं पड़ता।

एक दिन एक जाट उसी दुकान पर सौदा-सूत लेने आया। बनिये के छोकरे को हाथ का इशारा करते हुए आदेश दिया — एक रुपये का मालवी गुड़ देना तो! जाट ने सोचा कि मौका लग गया तो उधार ही सही, नहीं तो मांगने पर रुपया देना ही है। इधर बनिये के छोकरे ने सोचा कि सवेरे सवेरे कौन उधार करे? नकद–नारायण का आसामी न देख उसने कहा —पिताजी उगाही पर गये हुए हैं, वे शाम तक वापस आ सकेंगे, मुझे भाव-ताव का कुछ भी पता नहीं।

दो बित्ते के छोकरे की डेढ़ होशियारी देख जाट को भी गुस्सा आ गया। झटपट रुपया निकाल कर बोला — यह देख, तेरे पिताजी मेरी अंटी में हैं, अब तो सौदा दे। इतना कहकर उसने रुपया दुकान के अन्दर फेंक दिया। फिर कहा— पिताजी को गल्ले में डाल और मुझे फुरती से सौदा दे, देर हो रही है।







कीड़ी की करामात

एक था कौआ और एक थी चिड़िया। एक दिन दोनों साथ ही चुग्गे के लिए उड़े। उड़ते उड़ते वे एक समंदर के किनारे पहुंचे। वहां चिड़िया को मिला मोती और कौए को मिली लाल। चिड़िया ने कहा कि मेरा मोती ज्यादा क़ीमती और कौए ने कहा कि मेरी लाल ज्यादा मूल्यवान। वे एक जौहरी के पास मोती और लाल को परख करवाने उड़े। जौहरी ने पहिले लाल परखी और बाद में मोती। लाल तो थी लाख रुपयों की और मोती था सवा लाख रुपयों का। कौए के मन में छल करने की जची। बोला — चिड़िया बहिन, जरा तेरा सवा लाख का मोती तो बता। चिड़िया बेचारी थी भोली-भाली। कौए के कहते ही झट मोती उसके सामने कर दिया। कौआ तुरत उसका मोती लेकर उड़ गया। उड़ता उड़ता एक पीपल के वृक्ष पर बैठा। चिड़िया भी पीछे की पीछे आ धमकी। उसने कहा — कौए भाई, मेरा मोती दे। कौए ने कहा — चल हट यहां से, मैंने तेरा मोती कब लिया? चिड़िया ने कौए के बहुत निहोरे किये, हाथ जोड़े पर

कौए ने उसका मोती नहीं दिया सो नहीं दिया। आखिर तंग आकर चिड़िया ने उस पीपल के पेड़ से कहा — पीपल ओ पीपल, जरा इस कौए को उड़ा दे।

पीपल ने खड़खड़ाते स्वर में कहा—मैं क्यों उड़ाऊं भाई, मेरा क्या लिया ? तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती एक खाती के पास गई। उसे कहा — खाती भाई ओ खाती भाई, उस पीपल को काट दे। खाती ने कहा — मैं क्यों काटूं भाई, मेरा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती राजा के पास गई। राजा से कहा — राजाजी ओ राजाजी, जरा उस खाती को सजा दो। राजा ने कहा — मैं क्यों सजा दूं भाई, मेरा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती रानी के पास गई। उनसे कहा — रानीजी ओ रानीजी, तुम जरा राजा से रूठो। रानी बोली — मैं क्यों रूठूं भाई, मेरा क्या लिया !

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती चूहों के पास गई। उनसे कहा — चूहों रे ओ चूहों, तुम जरा रानी के कपड़े कुरटो। उन्होंने कहा — हम क्यों कुरटें भाई, हमारा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती बिल्लियों के पास गई। उनसे कहा — बिल्ली मौसी ओ बिल्ली मौसी, तुम जरा चूहों को खाओ। उन्होंने जवाब दिया— हम क्यों खायें भाई, हमारा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती कुत्तों के पास मई। उनसे कहा — कुत्तों रे ओ कुत्तों, जरा तुम बिल्लियों का मारो। उन्होंने कहा—हम क्यों मारें भाई, हमारा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती लाठियों के पास गई। उनसे कहा—लाठियों ओ लाठियों, जरा तुम कुत्तों को पीटो। उन्होंने कहा — हम क्यों पीटें भाई, हमारा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती अग्नि के पास गई। उनसे कहा — अगन राजा, अगन राजा, जरा तुम लाठियों को जलाओ। अग्नि बोली — मैं क्यों जलाऊं भाई, मेरा क्या लिया ?

तब वह चिड़िया उड़ती उड़ती एक सरबर के पास गई। उससे कहा — सरवर ओ भैय्या सरवर, जरा तुम आग को बुझाओ। उसने कहा — मैं क्यों बुझाऊं भाई, मेरा क्या लिया ?

तब बह चिड़िया उड़ती उड़ती एक हाथी के पास गई। हाथी से कहा—

हाथी भाई ओ हाथी भाई, जरा तुम सरवर को झकोलो ? हाथी बोला — मैं क्यों झकोलूं भाई, मेरा क्या लिया !

उड़ते उड़ते वह चिड़िया पूरी हैरान हो गई। आखिर हार कर वह एक कीड़ी के पास गई। उससे कहा — कीड़ी ओ कीड़ी, मेरे लिये क्या तुम हाथी के कान में घुसोगी ?

कीड़ी ने कहा—हां, क्यों नहीं, जरूर घुसूंगी। तुम्हारे दुख में काम आने का ऐसा सुअवसर और कब मिलेगा! तब चिड़िया ने कहा — चलो बहिन, अब देरी किस बात की, जरा जल्दी करो। चिड़िया के कहते ही कीड़ी ने पानी में डुबकी लगाई। सिर धोया। चोटी की। बिंदी लगाई। सुरमा-काजल लगाया और सोलह शृंगार करके झमाझम करती हाथी के कान में घुसने के लिए रवाना हुई।

कीड़ी को देखते ही हाथी थरथर कांपने लगा। डरता डरता बोला — ना ना, मेरे कान में मत घुसो, मैं सरवर झकोलने के लिए तैयार हूं, जरूर झकोलूंगा।

सरवर बोला — ना ना, मुझे मत झकोलो, मैं आग बुझाऊंगा, सौ बार बुझाऊंगा।

आग बोली — ना ना, मुझे मत बुझाओ, मैं लाठियां जलाऊंगी, जरूर जलाऊंगी।

लाठियां बोली — ना ना, हमें मत जलाओ, हम कुत्तों को पीटेंगी, जरूर पीटेंगी।

कुत्ते बोले — ना ना, हमें मत पीटो, हम बिल्लियां मारेंगे, जरूर मारेंगे!

बिल्लियां बोली — ना ना, हमें मत मारो, हम चूहे खायेंगी, जरूर खायेंगी।

चूहों ने कहा — ना ना, हमें मत खाओ, हम रानी के कपड़े कुरटेंगे, सौ बार कुरटेंगे!

रानी बोली — ना ना, हमारे कपड़े मत कुरटो, हम राजा से रूठेंगी, हजार बार रूठेंगी।

राजा बोला — ना ना, मुझ से मत रूठो रानी, मैं खाती को सजा दूंगा, जरूर दूंगा।

खाती बोला — ना ना, मुझे सजा मत दो, मैं पीपल काटूंगा, जरूर

काटूंगा।

पीपल बोला — ना ना, मुझे मत काटो भाई, मैं कौए को उड़ाऊंगा, जरूर उड़ाऊंगा।

तब कांव कांव करता हुआ कौआ चिल्लाया — ना ना, मुझे मत उड़ाओ, मैं चिड़िया का मोती दे दूंगा, जरूर दे दूंगा!

तब चिड़िया उसी क्षण बोली — ला मेरा मोती, अभी का अभी दे। और कौए ने डरते डरते झट चिड़िया को उसका मोती दे दिया।

चिड़िया अपना सवा लाख का मोती लेकर अपने बच्चों के पास गई। सभी बच्चे सवा लाख का मोती देखकर बहुत ही खुश हुए। चिड़िया ने एक रानी को सवा लाख में वह मोती बेच दिया। मोती बेचकर सोने के एक पेड़ पर सोने ही का एक आलीशान महल बनवाया। अपने बच्चों के साथ वह चिड़िया सदियों तक उस महल में रही, खूब मौज उड़ाई। और उधर उस दुष्ट कौए की लाल खो गई। वह खूब रोया — मेरी लाल खो गई, मेरी लाल खो गई। किसी को मिली हो तो दे दो रे भाई। पर कौए की वह लाल किसी को भी नहीं मिली। वह कौआ लाख रुपयों की उस लाल की खातिर रोते रोते आखिर मर गया।

बुरा रास्ता, बुरी लीक

एक बनिया अपने चार-पांच साथियों के साथ गांव जा रहा था। आपस में बातें करते जा रहे थे कि बनिये के पांवों के बीच से दौड़ता हुआ एक खरगोश निकल गया। पहिले तो बनिया थोड़ा चौंका। फिर तो वहीं का वहीं सिर थाम कर नीचे बैठ गया। एक दीर्घ निश्वास छोड़कर आह भरते हुआ बोला — गजब हो गया! अब क्या करूं?

साथियों ने पूछा — ऐसा क्या गजब हो गया। पैरों के बीच से निकला तो एक खरगोश ही है, इसमें चिंता की क्या बात! बनिये ने फिर वैसी ही आह भरते हुए जवाब दिया — मैं खरगोश के गुजरने की चिन्ता नहीं करता। पर यह तो रास्ता ही बुरा है! आज खरगोश निकला तो कल शेर और चीते निकलेंगे। बड़े अचरज की बात है कि खरगोश ने यह रास्ता कैसे बनाया। रास्ता बनने के बाद तो सिंह भी गुजरने का अधिकार जतायेंगे। बुरे रास्ते की तो लीक ही बुरी।



दुष्टता का अंत

एक था कौआ और एक थी चिड़िया। एक दिन उस कौए ने चिड़िया को अपने पंजों में पकड़ लिया। चिड़िया चीं चीं करने लगी। कौआ बोला—चिड़िया ओ चिड़िया, मैं तेरी चोंच खाऊंगा। मौत के पंजे में फंसी चिड़िया को एक उपाय सूझा। बोली—कौए भाई, मेरी चोंच ही खानी है तो मजे से खा, मैं कौन सी मना करती हूं, पर यों कैसे खा रहा है ?

कौए ने पूछा—तो कैसे खाऊं ? चिड़िया बोली—मेरी चोंच को पहिले पानी में खूब धो, यह गंदी हो गई है। धोने के बाद तेरी इच्छा हो वैसे खाना। कौए की बुद्धि जरा मोटी थी। उसने फिर पूछा—मगर चोंच को धोऊं कैसे ?

चिड़िया बोली — कुम्हार से एक छोटा घड़ा ला। उसमें पानी भरकर ला। उस पानी में चोंच को अच्छी तरह धो ले। फिर खाना। चिड़ियों की चोंच तो कौओं के खाने के लिए ही होती है। चिड़िया की बात सुनकर कौआ बहुत खुश हुआ। बोला — तुम यहीं बैठी रहना मैं कुम्हार से अभी घड़ा लेकर

आया, फिर उसमें पानी भरते क्या देर लगेगी। यह बात कहकर कौआ वहां से उड़ा। उड़ते उड़ते वह एक कुम्हार के घर पहुंचा। उससे कहा — कुम्हार कुम्हार, तुम कुम्हार राजा, मैं खज राजा, दे घड़ा, भरूं पानी, धोऊ चिड़ी की चोंच, बड़बड़ खाऊं, बड़ूका बोले।

कुम्हार ने कहा — मेरे पास माटी नहीं है। तू माटी लाकर दे तो अभी अभी घड़ा बना दूं।

कौए ने तो आगे की बात सुनी ही नहीं। वह उड़ता उड़ता एक गड्ढे के पास गया। बोला—माटी माटी, तू मिट्टी रानी, मैं खज-राजा, दे माटी, दूं कुम्हार को, घड़ा बनाये, भरूं पानी, फिर धोऊ चिड़ी की चोंच, बड़बड़ खाऊ, बड़ूका बोले।

माटी बोली — सींग के बिना मिट्टी खुदेगी कैसे ? तू जाकर हिरण का एक सींग लेकर आ। फिर तेरी इच्छा हो उतनी मिट्टी खोदना। कौआ उड़ता उड़ता एक हिरण के पास गया। कहने लगा—हिरण हिरण, तुम हिरण राजा मैं खज राजा, देओ सींग, खुदेगी माटी, दूंगा कुम्हार को, घड़ा बनाये, पानी भरूंगा, फिर धोऊं चिड़ी की चोंच, बड़बड़ खाऊं, बड़ूका बोले।

हिरण ने कहा — बिना मरे सींग भी हाथ कैसे लगेगा ! तू जाकर एक कुत्ता ले आ। वह कुत्ता मुझे मारेगा। फिर कहीं हिरण का सींग हाथ लगेगा। कौआ उड़ता उड़ता एक कुत्ते के पास गया। कहने लगा — श्वान श्वान ओ तुम श्वान राजा, मैं खज राजा, मार हिरण को, हिरण देगा सींग, खुदेगी माटी, दूंगा कुम्हार को, घड़ा बनाये, भरूं पानी, फिर धोऊं चिड़ी की चोंच, बड़बड़ खाऊं, बड़ूका बोले।

कुत्ते ने कहा — कौए भाई, मैं बहुत दिनों से भूखा हूं। इस थकी हालत में हिरण का पीछा नहीं कर सकता। तू जाकर गाय का दूध ला। दूध पीकर मैं मोटा-ताजा होऊं तो फिर हिरण का शिकार करते मुझे क्या देर लगेगी। कौआ उड़ता उड़ता एक गाय के पास पहुंचा। बोला — गैया गैया तू गौ माता, मैं खज राजा, मीठा दूध दे, पिलाऊं श्वान को, मारे हिरण को, हिरण देगा सींग, खुदेगी माटी, दूंगा कुम्हार को, घड़ा बनेगा, भरूंगा पानी, फिर धोऊं चिड़ी की चोंच, बड़बड़ खाऊं, बड़ूका बोले।

गाय ने कहा — कौए भाई, मेरा तो श्वास आंखों में समाया, जीना तक दूभर हो रहा है, तब दूध का तो वास्ता ही क्या ? घास चरे दिन गुजर गये। तू जाकर घास ला। घास खाकर मोटी-ताजी होने दे, फिर देखना दूध की वर्षा

कर दूंगी ।

कौआ उड़ता उड़ता घास के पास गया । बोला—घास घास , तुम वन के राजा, मैं खज राजा, देओ घास, चरेगी गैय्या , गैय्या देगी दूध , पिलाऊं श्वान को , मारे हिरण को , हिरण देगा सींग , खुदेगी माटी , दूंगा कुम्हार को , घड़ा बनेगा , पानी भरूंगा , फिर धोऊं चिड़ी की चोंच , बड़बड़ खाऊं , बड़्का बोले । घास ने कहा — पर खुरपी बिना घास खुदेगा कैसे ? तू लुहार के पास जा । एक तीखी खुरपी ला । फिर घास के भारे बांधकर ले जाना । घास तो चरने के लिए ही होता है ।

कौआ उड़ता उड़ता एक लुहार के पास । गया बोला — लुहार लुहार , तू लुहार राजा , मैं खज राजा , घड़ दे खुरपी , घास खुदेगी , चरेगी गैय्या , देगी मीठा दूध , पिलाऊं श्वान को , मारे हिरण को , हिरण देगा सींग , खुदेगी माटी , दूंगा कुम्हार को , घड़ा बनेगा , पानी भरूंगा , फिर धोऊं चिड़ी की चोंच , बड़बड़ खाऊं , बड़्का बोले ।

लुहार ने सोचा कि खुरपी देने से तो कौए के सारे काम बन जायेंगे । बेचारी चिड़िया की चोंच यह दुष्ट खाकर ही रहेगा । झट आरण सुलगाकर खुरपी को गरम करने लगा । जब खुरपी एकदम अंगारों-सी लाल लाल हो गई तो उसने वह जगमगाती खुरपी कौए की चोंच में थमा दी । अंगारों-सी दहकती खुरपी को चोंच में पकड़ते ही कौए की चोंच जल गई और वहीं उसके प्राण निकल गये । भोली चिड़िया ने काफी देर तक कौए के लौटने का इंतजार किया । आखिर तंग आकर वह अपने घोंसले की ओर उड़ी । बच्चे मां को देखकर बहुत खुश हुए और मां बच्चों को देखकर हर्ष से अभिभूत होकर चीं चीं करने लगी ।

सच्चाई का भ्रम

एक बामनी ने जटिये से घरवास किया । कुंड में भीगे हुए कच्चे चमड़े की दुर्गंध से बामनी के नाकों दम हो गया । उसका सिर फटने-सा लगा । हर वक्त नाक में इत्र के फोहे रखती और मुंह पर कपड़ा रखती । दिन बीतते बरस नहीं लगते । एक दिन बामनी ने अभिमान के स्वर में जटिये से कहा— देखो मेरी करामात ! मेरे आने से तेरे घर की बदबू ही मिट गई । जटिये ने जवाब दिया — बदबू तो वैसी ही है ! तू ही इसकी अभ्यस्त हो गई । तेरे नाक की घ्राण-शक्ति ही मर गई ।



शैतान चुहिया

एक थी चिड़िया और एक थी चुहिया। परस्पर धरम-बहिनें हुईं। एक दिन चुहिया ने चिड़िया से कहा — चलो, अपन पहाड़ के झरने में नहाने चलें। चिड़िया ने कहा — चलो, तुम्हारी इच्छा है तो मैं मना क्यों करूं? दोनों बहिनें नहाने चलीं। चिड़िया तो फड़ाफड़ स्नान करके बाहर निकल आई, पर चुहिया गुचलकिये खाने लगी। डूबती डूबती बोली—चिड़कल बहिन बाहर निकाल ए! तब चिड़िया ने फुर्र से उड़कर डूबती चुहिया की पूंछ को चोंच में पकड़ बाहर निकाल लिया।

चुहिया थी बेहद चंचल। जिन्दा बाहर निकलते ही मरने की बात भूल गई। बोली — चलो अपन, बेर खाने चलें। चिड़िया ने कहा—चलो, तुम्हारी इच्छा है तो मैं मना क्यों करूं? दोनों बहिनें एक बोरड़ी के मीठे बेर खाने लगीं। चिड़िया ने तो झपाझप बेर खा लिए। पर चंचल चुहिया कांटों में फंस गई। बोली — चिड़कल बहिन, जरा कांटों से बाहर निकाल ए!

चिड़िया ने तो उसी क्षण अपनी बहिन का संकट देख उसे कांटों से बाहर निकाल लिया। पर चुहिया तो बाहर निकलते ही पिछला संकट भूल गई। रास्ते में एक भेंस पर उसकी नजर पड़ी तो बोली — चलो अपन इस भेंस का दूध पीयें? चिड़िया तो कहते ही फुर्र से उड़ी सो भेंस के उवाड़े पर जाकर बैठ गई। छक कर दूध पीया। लेकिन चुहिया अपने तीखे दांतों से भेंस के स्तन कुरटने लगी तो भेंस ने पूंछ की फटकार से चुहिया को नीचे गिरा दिया। ऊपर से पोटा किया सो वह चंचल चुहिया उसके नीचे दब गई। दबे स्वर में बोली: चिड़कल बहिन, जरा बाहर निकाल ए!

सुनते ही चिड़िया ने अपनी चोंच व अपने पंजों से पोटा बिखेरना चालू किया सो देखते देखते दबी चुहिया को बाहर निकाल लिया। परन्तु चुहिया की चंचलता का कोई अंत थोड़े ही था। एक ऊंट सामने आया तो बोली—चलो,

अपन ऊंट की सवारी करें। चिड़िया तो सुनते ही फुर्र से उड़ी, सो ऊंट के सिर पर बैठ गई, फिर उसकी पीठ पर बैठकर मजे से सवारी गांठली। किन्तु चुहिया के चढ़ने से ऊंट के पैर पर खाज चलती तो वह जोर से टांग पटकता और चुहिया नीचे गिरती। यों करते करते एक बार चुहिया पांव के नीचे दब गई। ऊंट के वजन से उसका श्वास ही थम गया। चीं चीं करती बोली — चिड़कल बहिन मेरे प्राण बचा ए, मैं तो मरी।

चिड़िया ने बहिन को उबारने के लिए तुरत उपाय सोच लिया। कान में सट कर पंख फड़फड़ाने लगी तो ऊंट भड़क कर दौड़ा। चुहिया का कचूमर निकलते निकलते बच गया। फिर चिड़िया उसे समझाते हुए कहने लगी — बहिन, ज्यादा चंचलता अच्छी नहीं, कभी बेमौत मारी जायेगी। पर चुहिया ने उसकी सीख पर कान ही नहीं दिया।

आगे जाते जाते चुहिया को एक रोटी मिली। चिड़िया ने कहा—चुहिया बहिन, थोड़ा टुकड़ा तो मुझे भी दे। पर चुहिया ने तो बिलकुल ही मना कर दिया। बोली — मुझे मिली है रोटी, तुझे क्यों दूं। तब चिड़िया ने कहा — मैंने तुझे झरने से डूबती हुई को बचाया था न, इतनी जल्दी भूल गई। चुहिया बोली — मुझे क्यों बचाया री क्यों बचाया, मैं तो हर हर गंगा नहा रही थी।

तब चिड़िया ने कहा — मैंने तुझे बेर के कांटों से बचाया था न, इतनी जल्दी भूल गई। चुहिया बोली मुझे क्यों बचाया री क्यों बचाया, मैं तो कच कच कान छिदवा रही थी। तब चिड़िया ने कहा — क्यों री, मैंने तुझे भेंस के पोटे से दबती हुई को निकाला था न, इतनी जल्दी भूल गई। चुहिया बोली—मुझे क्यों बचाया री क्यों बचाया, मैं तो अपनी कमर खुंदवा रही थी।

तब चिड़िया ने कहा — मैंने तुझे ऊंट के पैर से मरती को बचाया था न, इतनी जल्दी भूल गई। चुहिया बोली—मुझे क्यों बचाया री क्यों बचाया, मैं तो कट-कट चनक निकलवा रही थी। चिड़िया ने सब तरह से समझाना चाहा, किन्तु शैतान चुहिया नहीं मानी। कुट कुट करती अकेली ही सारी रोटी खा गई। चिड़िया को एक कतरा भी नहीं दिया।

जाते जाते वे दोनों एक बामन के खेत पर पहुंचीं। बामन अपने खेत में ज्वार काट रहा था। उसने एक बड़ा भारा बांधकर उठाया। घर की ओर जाने लगा तो चुहिया बोली — चलो अपन इसके घर चलें। तब चिड़िया ने कहा— मैं अब तेरे साथ कहीं नहीं चलने की। यहीं खेत में ठहरूंगी। ज्वार का चुग्गा

चुगूंगी। बच्चों को संभालूंगी। तेरी शैतानी तू भुगत। पर चुहिया तो बेहद चंचल थी। कुछ न कुछ शैतानी किये बिना उसे सुहाता ही नहीं था। बोली— जैसी तेरी मरजी, मैं तो इसके घर जाऊंगी। पर एक बात याद रखना, तेरी सोहर के वक्त मुझे इस बामन के मारफत खबर भिजवाना, तब तक मैं इसी के घर रहूंगी। खबर मिलते ही दौड़ी चली आऊंगी।

चिड़िया ने कहा — अच्छा, मैं तुझे खबर भिजवा दूंगी। यह कहकर चिड़िया तो अपने घोंसले की तरफ उड़ गई। और उधर वह शैतान चुहिया, बामन का पीछा करती हुई, आखिर उसके घर पहुंच ही गई। कुछ ही देर में सारे घर को छान मारा। बिल बनाने के लिए कोई ठीक जगह नहीं मिली। अंत में चाकी के नीचे बिल खोदकर उसमें डेरा जमाया।

एक दिन वह बामन अपने खेत में भारा बांध रहा था कि चिड़िया बोली:

बांमणिया करण मांगणिया, पग दे पूळो बांधणिया,
मूसादे नैं जा'यर कंजे, चिड़कल बेटा जाया है।

बामन ने इधर-उधर देखा, पर कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा। जाना कि यों ही कोई भनक सुन पड़ी होगी। वापस भारा बांधने लगा तो चिड़िया ने फिर कहा:

बांमणिया करण मांगणिया, पग दे पूळो बांधणिया,
मूसादे नैं जा'यर कंजे, चिड़कल बेटा जाया है।

इस बार बामन डरा। सोचा कोई भूत-पलीतों की लीला तो नहीं है।? डर के मारे सरपट भागा। घर आकर ही श्वास लिया। आंगन में पैर रखते ही अपनी घरवाली को हांफते हांफते सारी बात बताई। कहने लगा—अपने खेत में भूत-पलीतों की शुरुआत हो गई। आज बड़े अचरज की बात हुई। आंखों से दिखाई तो कुछ भी नहीं पड़ा, किन्तु कानों से दो बार साफ सुनाई दिया।

बांमणिया करण मांगणिया, पग दे पूळो बांधणिया,
मूसादे नैं जाय'र कंजे, चिड़कल बेटा जाया है।

चाकी के नीचे बिल में बैठी चुहिया सारी बात सुन रही थी। उसे इतना धैर्य कहां? उसी क्षण चाकी साफ करने वाले कपड़े की ओढ़नी ओढ़ बाहर आई। बोली:

कद जाया जो कद जाया
वारी जाऊं कद जाया
चिड़कल बेटा कद जाया

कुड़तो सिवाड़ूं कद जाया
टोपी सिवाड़ूं कद जाया

चुहिया की आंखों के सामने कपड़े का घूंघट था, इसलिए दिखाई पड़ने का तो सवाल ही नहीं था। पास ही एक बिल्ली ताक में खड़ी थी। एकदम झपटी और चुहिया को मुंह में पकड़ लिया। चुहिया चीं चीं करती बहुत ही चिल्लाई, पर वहां चिड़िया बहिन के बिना कौन बचाये? देखते देखते बिल्ली उसे मार-कर निगल गई। बामन और उसकी घरवाली दोनों अचरज भरी निगाहों से यह तमाशा देखते रहे। उनकी कुछ भी समझ में नही पड़ा कि यह क्या माजरा हो गया?

अपना अपना स्वभाव

किसी एक नदी के किनारे दिनचर्या से निवृत हो एक महात्मा पद्मासन लगाकर पूजा-पाठ करने बैठे ही थे कि बिच्छू ने उनकी जंघा में डंक मार दिया। महात्मा बिलकुल ही विचलित नहीं हुए। पुचकार कर एक हाथ से बिच्छू को दूर कर दिया। पर बिच्छू ने अपनी लत नहीं छोड़ी। डंक झुकाकर ऐंठते हुए झम्मक झम्मक उसने फिर महात्मा की दूसरी जंघा में डंक मार दिया। महात्मा ने फिर उसी भांति पुचकार कर बिच्छू को दूसरे हाथ से अलग कर दिया। पर बिच्छू तो जैसे महा-त्मा की परख ही करना चाह रहा हो। उसने तो तीसरी मर्तबा फिर महात्मा की पिंडुली पर डंक मार दिया। लेकिन वे तो उसी भांति अविचल बैठे रहे। बिच्छू बार बार डंक मारता और वे बार बार पुचकार कर उसे दूर कर देते। जैसे महात्मा बिच्छू की परख करना चाह रहे हों।

पास बैठे शिष्य ने यह तमाशा देखा तो हाथ जोड़कर बोला — आपकी आज्ञा हो तो इस चंडाल बिच्छू का कचूमर निकाल डालूं। पांच मर्तबा हुई यह अपनी आदत से बाज नहीं आया। ये दुष्ट यों नही मानने वाले।

तब महात्मा ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया — वत्स, जब दुष्ट अपनी बुरी लत पर दृढ़ रह सकते हैं तो संत को अपने स्वभाव से डिगना शोभा नहीं देता। डंक मारना बिच्छू का स्वभाव है और मेरा स्वभाव है उसे क्षमा करना। एक अकिंचन बिच्छू अपने बुरे स्वभाव को नहीं छोड़ता तो हम महात्मा अपना अच्छा स्वभाव कैसे छोड़ें?

शिष्य ने गुरु के चरणों में सिर नवाकर अपनी गलती के लिए क्षमा-याचना की।



बैर का बदला

एक धोबन तालाब पर कपड़े धो रही थी कि प्यासा चिड़ा वहां आया। तालाब के किनारे चोंच डुबो कर पानी खींचना प्रारंभ किया — सड़ड़, सड़ड़। धोबन आश्चर्य-चकित-सी देखती रही और सारा सरवर खाली हो गया। धोबन को बहुत सारे कपड़े धोने थे। अब करे तो क्या करे? दिखती आंखों अहमक चिड़े ने पानी से हिलारें भरती तलैया को बेपानी कर दिया। उसने तो फिर भला-बुरा कुछ भी नहीं सोंचा, खींच कर हाथ से घोटी फेंकी। निशाना ठीक लगा। चिड़े का पेट फूट गया और वहीं पांखें फड़फड़ा कर उसने दम तोड़ दिया। पेट फूटते ही मानो पानी के नाले ही शुरू हुए। पल भर में तलैया पहिले की भांति ठंडी हिलारें भरने लगी।

शाम को चिड़ा वापस नहीं आया तो चिड़ी उसकी खोज में उड़ी। उड़ते उड़ते वह पूरी हैरान हो गई, पर चिड़े का पता नहीं लगा। आखिर प्यास से व्याकुल वह चिड़िया पानी पीने के लिए उसी तालाब पर आई तो क्या देखती है कि चिड़ा तो पाज पर मरा पड़ा। पेट फूटा हुआ। चींटियें घिरी हुईं। चिड़िया अपने पति की यह दशा देख जोर जोर से रोने लगी तब मरे हुए चिड़े ने कहा—यों निर्बल की तरह रो क्या रही है? धोबन ने मुझे घोटी से मारा। यदि तू उससे बदला ले तो मैं वापस जिन्दा हो सकता हूं।

पति की यह बात सुनने के बाद चिड़िया के इतनी ढील कहां! घर आकर कच्चे तांतनियों की गाड़ी बनाई। बैलों की ठौड़ चूहे जोते। चूहे तो टचकारी देते ही तेजी से दौड़े। जाते जाते रास्ते में एक सांप मिला। उसने चिड़िया से पूछा—चिड़कल बाई, सांझ की वेला इतनी जल्दी कहां जा रही हो? चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली:

ऊंदरयळ रा बळदिया नै तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़को मारयो, म्हैं बैर लेवा चाली।

सांप ने कहा—चिड़कल बाई, तू कहे तो मैं भी तेरे साथ चलूं। चिड़िया बोली — चल मेरे भैय्या, दुख की वेला में इस तरह कौन याद करता है? औरत की जात अकेली क्या करती! सांप को अच्छी तरह अपनी गाड़ी पर बिठाने के बाद उसने फिर टचकारी दी। और टचकारी देते ही चूहे तो अत्यंत तेजी के साथ भागे। जाते जाते रास्ते में एक बिच्छू मिला। उसने चिड़िया से पूछा—चिड़कल बाई, इतनी तेजी से शाम की वेला कहां जा रही हो? चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली:

ऊंदरथळ रा बळदिया नैं तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़कौ मारचौ, म्हैं बैर लेवा चाली।

बिच्छू ने कहा — चिड़कल बाई, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं। चिड़िया बोली — चल मेरे भैय्या दुख की वेला में इस तरह कौन याद करता है? इतना कहकर सांप के पास उसने बिच्छू को भी अपनी गाड़ी पर बिठा लिया। फिर टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो बेहद तेजी के साथ भागे। जाते जाते रास्ते में एक कमेड़ी मिली। उसने पूछा — चिड़कल बाई, इतनी तेजी से शाम की वेला कहां जा रही हो? चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली:

ऊंदरथळ रा बळदिया नैं तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़कौ मारचौ, म्हैं बैर लेवा चाली।

कमेड़ी ने कहा — चिड़कल बाई, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं! चिड़िया बोली: चल मेरी बहिना, दुख की वेला में इस तरह कौन याद करता है? उन दोनों के साथ कमेड़ी को भी गाड़ी पर बिठलाने के बाद उसने टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो तेजी के साथ भागे। जाते जाते रास्ते में पत्थर की एक लम्बी पट्टी मिली। उसने चिड़िया से पूछा — चिड़कल बाई, इतनी तेजी के साथ शाम की वेला कहां जा रही हो। चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली:

ऊंदरथळ रा बळदिया नैं तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़कौ मारचौ, म्हैं बैर लेवा चाली।

पत्थर की पट्टी ने सुकोमल स्वर में कहा — चिड़कल बाई, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं। चिड़िया बोली — चल मेरी बहिना, दुख की वेला में इस तरह कौन याद करता है। एक तरफ पट्टी को बिठा कर उसने टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो तेजी के साथ दौड़े। सांप, बिच्छू, कमेड़ी और पट्टी की फौज लेकर चिड़िया धोबन की झोंपड़ी के सामने आकर रुकी। सभी साथियों को पूरी हिदायतें देकर समझाइश की।

उन्हें अपने अपने काम का जिम्मा समझा दिया। आधी रात के समय चिड़िया ने धोबन के कान से सटकर पंख फड़फड़ाये, धोबन चौंक कर खड़ी हुई। सोचा कि उठने का समय हो गया। रोजमर्रा के काम रोज ही सलटा देने अच्छे हैं। चूल्हे में दबी आग पर कंडे रखने के लिए गई तो कमेड़ी ने तत्क्षण जोर से पंख फड़फड़ाये। धोबन की आंखें राख से भर गईं। वह हक्की-बक्की सी रह गई। आंखें मसलती मसलती वह चाकी फेरने के लिए सफाई करने लगी तो छिपे हुए सांप ने मौका मिलते ही उसे काट लिया। धोबन जोर से चीत्कार कर उठी। सवेरे सवेरे ये क्या बुरे शकुन हुए ? शाम कैसे आयेगी ? रोती रोती दीया जलाने गई तो वहां बिच्छू डंक ताने बैठा ही था। हाथ का स्पर्श होते ही डंक मार दिया। चोटी से लेकर एड़ी तक बिजली-सी झंकृत हो उठी और जोर से चीत्कार कर उठी। धोबी ने रोने की आवाज सुनी तो चौंककर उठा। घबरा कर झोंपड़ी से बाहर निकलने लगा तो पत्थर की पट्टी उस पर गिर पड़ी। धोबी का तो वहीं सांस निकल गया। उधर सांप का जहर ऐसा फैला कि धोबन के भी प्राण पंखेरू उड़ गये।

चिड़िया ने पूरा बदला लेने के बाद सारे साथियों को गाड़ी पर बिठाया। टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो सरपट दौड़ने लगे। सीधी तालाब के किनारे आकर रुकी। मरे चिड़े के पास गई तो क्या देखती है कि चिड़ा तो खुशी में फुदक रहा है। चिड़िया ने उसे सारी दास्तान सुनाई। सभी साथियों को न्योता देकर अपने घोंसले पर लाई। बत्तीस व्यंजन करके खिलाये। आभार माना, बार बार आशिष दी।

खटपट की साधना

एक सवार ने रहट की आवाज सुनी तो घोड़े को पानी पिलाने के लिए उधर ही मुड़ा। पर घोड़ा तो पानी के पास मुंह ले जाने ही को तैयार नहीं था। पनड़ी की खड़िद खड़िद से घोड़ा बार बार बिदक उठता था। सवार ने कुआ चलाने वाले को रौब गांठते हुए कहा—ए गंवार, तेरी यह खटपट बंद कर, मेरा घोड़ा भड़क रहा है ! तुझे दिखाई नही देता क्या ? कुआ चलाने वाले ने कहा—हुजूर, दिखाई क्यों नहीं देता, पर खटपट बंद होने पर तो पानी भी बंद हो जायेगा ! घोड़े को पिलाना हो तो इस खटपट में ही पिला लो। यह खटपट नहीं तो पानी भी नहीं।

सांप ने कहा—चिड़कल बाई, तू कहे तो मैं भी तेरे साथ चलूं। चिड़िया बोली — चल मेरे भंय्या, दुख को वेला में इस तरह कौन याद करता है? औरत की जात अकेली क्या करती! सांप को अच्छी तरह अपनी गाड़ी पर बिठाने के बाद उससे फिर टचकारी दी। और टचकारी देते ही चूहे तो अत्यंत तेजी के साथ भागे। जाते जाते रास्ते में एक बिच्छू मिला। उसने चिड़िया से पूछा—चिड़कल बाई, इतनी तेजी से शाम की वेला कहां जा रही हो? चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली :

ऊंदरथळ रा बळदिया नें तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़को मारची, म्हैं बंर लेवा चाली।

बिच्छू ने कहा — चिड़कल बाई, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं। चिड़िया बोली — चल मेरे भंय्या दुख की वेला मे इस तरह कौन याद करता है? इतना कहकर सांप के पास उसने बिच्छू को भी अपनी गाड़ी पर बिठा लिया। फिर टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो बेहद तेजी के साथ भागे। जाते जाते रास्ते में एक कमेड़ी मिली। उसने पूछा — चिड़कल बाई, इतनी तेजी से शाम की वेला कहां जा रही हो? चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली :

ऊंदरथळ रा बळदिया नं तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़को मारची, म्हैं बंर लेवा चाली।

कमेड़ी ने कहा — चिड़कल बाई, मैं भी तुम्हारे साथ चलू! चिड़िया बोली: चल मेरी बहिना, दुख को वेला में इस तरह कौन याद करता है? उन दानों के साथ कमेड़ी को भी गाड़ी पर बिठलाने के बाद उसने टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो तेजी के साथ भागे। जाते जाते रास्ते में पत्थर की एक लम्बी पट्टी मिली। उसने चिड़िया से पूछा — चिड़कल बाई, इतनी तेजी के साथ शाम की वेला कहां जा रही हो। चिड़िया ने रास खींचकर गाड़ी रोकी। बोली :

ऊंदरथळ रा बळदिया नं तणातोड़ री गाड़ी,
धोबण चिड़को मारची, म्हैं बंर लेवा चाली।

पत्थर की पट्टी ने सुकोमल स्वर में कहा — चिड़कल बाई, मैं भी तुम्हारे साथ चलू। चिड़िया बोली — चल मेरी बहिना, दुख की वेला में इस तरह कौन याद करता है। एक तरफ पट्टी को बिठा कर उसने टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो तेजी के साथ दौड़े। सांप, बिच्छू, कमेड़ी और पट्टी की फोज लेकर चिड़िया धोबन की झोंपड़ी के सामने आकर रुकी। सभी साथियों को पूरी हिदायतें देकर समझाइश की।

उन्हें अपने अपने काम का जिम्मा समझा दिया। आधी रात के समय चिड़िया ने धोबन के कान से सटकर पंख फड़फड़ाये, धोबन चौंक कर खड़ी हुई। सोचा कि उठने का समय हो गया। रोजमर्रा के काम रोज हो सलटा देने अच्छे हैं। चूल्हे में दबी आग पर कंडे रखने के लिए गई तो कमेड़ी ने तत्क्षण जोर से पंख फड़फड़ाये। धोबन की आंखें राख से भर गईं। वह हक्की-बक्की सी रह गई। आंखें मसलती मसलती वह चाकी फेरने के लिए सफाई करने लगी तो छिपे हुए सांप ने मौका मिलते ही उसे काट लिया। धोबन जोर से चीत्कार कर उठी। सवेरे सवेरे ये क्या बुरे शकुन हुए? शाम कैसे आयेगी? रोती रोती दीया जलाने गई तो वहां बिच्छू डंक ताने बैठा ही था। हाथ का स्पर्श होते ही डंक मार दिया। चोटी से लेकर एड़ी तक बिजली-सी झंकृत हो उठी और जोर से चीत्कार कर उठी। धोबी ने रोने की आवाज सुनी तो चौंककर उठा। घबरा कर झोंपड़ी से बाहर निकलने लगा तो पत्थर की पट्टी उस पर गिर पड़ी। धोबी का तो वहीं सांस निकल गया। उधर सांप का जहर ऐसा फैला कि धोबन के भी प्राण पखेरू उड़ गये।

चिड़िया ने पूरा बदला लेने के बाद सारे साथियों को गाड़ी पर बिठाया। टचकारी दी। टचकारी देते ही चूहे तो सरपट दौड़ने लगे। सीधी तालाब के किनारे आकर रुकी। मरे चिड़े के पास गई तो क्या देखती है कि चिड़ा तो खुशी में फुदक रहा है। चिड़िया ने उसे सारी दास्तान सुनाई। सभी साथियों को न्योता देकर अपने घोंसले पर लाई। बत्तीस व्यंजन करके खिलाये। आभार माना, बार बार आशिष दी।

खटपट की साधना

एक सवार ने रहट की आवाज सुनी तो घोड़े को पानी पिलाने के लिए उधर ही मुड़ा। पर घोड़ा तो पानी के पास मुंह ले जाने ही को तैयार नहीं था। पनड़ी की खड़िद खड़िद से घोड़ा बार बार बिदक उठता था। सवार ने कुआ चलाने वाले को रौब गांठते हुए कहा—ए गंवार, तेरी यह खटपट बंद कर, मेरा घोड़ा भड़क रहा है! तुझे दिखाई नही देता क्या? कुआ चलाने वाले ने कहा—हुजूर, दिखाई क्यों नहीं देता, पर खटपट बंद होने पर तो पानी भी बंद हो जायेगा! घोड़े को पिलाना हो तो इस खटपट में ही पिला लो। यह खटपट नहीं तो पानी भी नहीं।



भैय्या तू ही तू

पिछले वर्षों की भांति इस वर्ष भी सावन की सुरंगी तृतीया आई। डाल डाल पर झूले चरमराने लगे। तीजणियों के झूलरे इंद्र की परियों के समान बाग-बगीचों में झूलने जा रहे थे। तीजणियां सुरंगी चूंदड़ियां व पीले पोमचे ओढ़, गहनों से सजधज कर प्रकृति की शोभा बढ़ा रही थीं।

तीजणियों का ऐसा निराला ठाट देखकर एक चिड़ी को भी झूला झूलने की इच्छा हुई। उसने अपने चिड़े से कहा — चलो अपन भी झूला बांधकर झूलें और सावन की सुरंगी तीज का उत्सव मनायें। चिड़ा चिड़ी की बात मान गया। तब चिड़िया ने भी घोंसले में जाकर सोलह-शृंगार किया। लम्बा घूंघट निकाल अपने चिड़े के साथ जब नूपुरों की क्वणन ध्वनि बजाती हुई निकली तब प्रकृति का कण कण खुशी में झूम उठा।

आम की डाल पर चिड़िया ने कच्चे तांतण का भूला बांधा। दोनों पति-पत्नी आमने-सामने मुंह करके भूलने लगे। कच्चे तांतण की इतनी क्या मजबूती! पहिले भटके में ही टूट गया। आम की डाल के नीचे कुआ था। चिड़ी गहनों से लदी थी, संभल नहीं पाई, सीधी कुए में गिर पड़ी। पानी पर जाकर ही ठहरी। चिड़ा तो फुर्र से उड़ गया। चिड़िया के गिरने की आवाज सुनकर वापस कुए पर बैठ गया। गहरे कुए से चिड़िया को बाहर निकाले भी तो कैसे! क्या उपाय करे? कुछ भी समझ नहीं बैठी। इतने में रेवड़ का गड़रिया उधर से निकला। चीड़े ने रुंधे गले से प्रार्थना की:

रेवड़ के गड़रिये रे भैय्या तू ही तू
खाली भूला लटक रहा भैय्या तू ही तू
मेरी चिड़िया को बाहर निकाल भैय्या तू ही तू
तुझे घी-पुड़ियों का न्योता भैय्या तू ही तू

रेवड़ के गड़रिये ने अपनी ओर से कुछ भी कसर नहीं रखी, फिर भी वह गहरे कुए से चिड़िया को बाहर नहीं निकाल सका। लाचार होकर उसे आगे रवाना होना ही पड़ा। उसके जाते ही गायों का एक ग्वाला आया। चिड़े ने रुंधे गले से फिर प्रार्थना की:

गायों के ग्वाले रे भैय्या तू ही तू
खाली भूला लटक रहा भैय्या तू ही तू
मेरी चिड़िया को बाहर निकाल भैय्या तू ही तू
तुझे घी-पुड़ियों का न्योता भैय्या तू ही तू

गायों के ग्वाले ने अपनी ओर से कुछ भी कसर नहीं रखी, फिर भी वह गहरे कुए से चिड़िया को बाहर नहीं निकाल सका। लाचार होकर उसे आगे रवाना होना ही पड़ा। उसके बाद भैंस्यों का झुंड आया। चिड़े ने भैंस्यों के ग्वाले से रुंधे स्वर में फिर प्रार्थना की:

भैंस्यों के ग्वाले रे भैय्या तू ही तू
खाली भूला लटक रहा भैय्या तू ही तू
मेरी चिड़िया को बाहर निकाल भैय्या तू ही तू
तुझे घी-पुड़ियों का न्योता भैय्या तू ही तू

भैंस्यों के ग्वाले ने अपनी ओर से कुछ भी कसर नहीं रखी, फिर भी वह गहरे कुए से चिड़िया को बाहर नहीं निकाल सका। लाचार होकर उसे आगे

रवाना होना ही पड़ा। उसके बाद ऊंटों का एक झुंड आया। चिड़े ने रुंधे स्वर में फिर प्रार्थना की :

ऊंटों के ओठी रे भैय्या तू ही तू
खाली झूला लटक रहा भैय्या तू ही तू
मेरी चिड़िया को बाहर निकाल भैय्या तू ही तू
तुझे घी-पुड़ियों का न्यौता भैय्या तू ही तू

ऊंटों के उस ओठी ने अपनी ओर से कुछ भी कसर नहीं रखी, फिर भी वह गहरे कुए से चिड़िया को बाहर नहीं निकाल सका। लाचार होकर उसे आगे रवाना होना ही पड़ा। उसके बाद एक बिल्ली वहां से गुजरी। अध-पगले चिड़े को कुछ भी ध्यान नहीं था। उसने तो बिल्ली से भी उसी प्रकार रुंधे स्वर में प्रार्थना की :

बिल्ली तेरे गुण गाऊंगा बहिन तू ही तू
खाली झूला लटक रहा बहिन तू ही तू
मेरी चिड़िया को बाहर निकाल बहिन तू ही तू
तुझे मक्खन-मिश्री का न्यौता बहिन तू ही तू

बिल्ली एकदम भूखी थी। चिड़े के कहते ही उसी क्षण तैयार हो गई। गड्ढों में पंजे रोपती रोपती नीचे उतरी और उसी वक्त चिड़िया को मुंह में दबाकर वापस बाहर आ गई। चिड़िया तो पानी में भीगी हुई तथा बेहोश थी। बाहर आते ही बिल्ली उसे खाने लगी तो चिड़े ने कहा—बिल्ली मौसी, इतनी भी जल्दी क्या है ? भीगी चिड़िया पेट में हजम नहीं होगी। खाने का स्वाद भी नहीं आयेगा। जरा सूखने दे। फिर मजे से खाना। बिल्ली उसकी बात मान गई। पर सूखते ही चिड़िया को होश आया और वह फुर्र करती उड़ गई। चिड़ा भी उसके साथ हो गया। उड़ते उड़ते ही बोला — बिल्ली मौसी अलविदा ! कष्ट के लिए माफ करना। तूने मेरा कलेजा ठंडा किया तो तेरा भगवान करेंगे। तेरे मुंह से जिस प्रकार चिड़िया बची, उसी भांति राम तुझे कुत्तों से बचायें। अच्छी तरह जाना, आराम से रहना। मेरा जुहार मानना। बिल्ली मौसी मुंह लटकाये हतप्रभ-सी वहीं खड़ी रही।

चित्रसेन पद्मावती रतनसार मंत्री चौपई

[एक लोक तात्विक अध्ययन]

डॉ. रामगोपाल गोयल

लोक साहित्य के मनीषी डा. सत्येन्द्र ने राजवल्लभ कृत चित्रसेन पद्मावती कथा का लोक तात्विक अध्ययन बड़े विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया है। इस कृति का परिचय श्री नाहटा जी ने नागरी प्रचारिणी पत्रिका में दिया था। इसकी एक हस्तलिखित प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में उपलब्ध है। यह एक बहुचर्चित लोक कथा पर आधारित रचना है। इस लोक कथा के मूल रूप को पाश्चात्य विद्वानों ने बहुत प्राचीन, लगभग ईसा से दो सहस्र वर्ष पूर्व का बताया है। राजवल्लभ ने यह रचना संस्कृत में लिखी थी। किन्तु इस कथा का राजस्थानी रूप मुनि राजविजय कृत चित्रसेन पद्मावती रतनसार मंत्री चौपई में उपलब्ध हुआ है और एक अन्य रूप 'फूलमती री वारता' के नाम से भी उपलब्ध है।

डा. सत्येन्द्र ने इस लोक कथा के विविध प्रादेशिक रूपों का उल्लेख किया है। ब्रज में यह कहानी 'यारु होय तौ ऐसो होय' के रूप में प्रचलित है तो बुन्देलखण्ड में मित्रों की प्रीति नाम से। इस कथा का सबसे प्राचीन लिखित रूप हमें सोमदेव कृत कथा-सरित्सागर में 'मदन मंचुका' शीर्षक से छठे खण्ड के अट्ठाइसवें अध्याय में राजकुमार और सौदागर की कहानी के रूप में मिलता है। कथा-सरित्सागर गुणाढ्य कृत पैशाची भाषा में लिखी गई बड्डकहा का संस्कृत भाषा में किया गया रूपान्तर है। गुणाढ्य राजा सातवाहन की राजसभा का कवि था। विभिन्न इतिहासकारों के मत से सातवाहन वंश की स्थापना का समय २७१ वर्ष ईसा पूर्व से ७३ ई. ठहरता है। अतः इस लोक कथा के लेखबद्ध रूप की साक्षी आज से लगभग दो सहस्र वर्ष पूर्व की मिलती है। इससे यह विदित होता है कि इस लोक कथा की मौखिक परम्परा और भी प्राचीन रही होगी।

सर जी. काक्स महोदय ने माइथालॉजी आफ दि आर्यन नेशन्स में इस कहानी पर विस्तार

से विचार किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इस कहानी का मूल ढांचा इतिहास-पूर्व युग में उस समय निर्मित हुआ होगा जब आर्य लोग अपने मूल निवास स्थान में रहते होंगे और यूरोप तथा भारत में फैले नहीं होंगे। इस दृष्टि से इस कहानी का जन्म-काल दूर अतीत तक चला जाता है जब कि आधुनिक आर्य जातियों की सभ्यता का नाम भी नहीं था। इसका संकट विषयक मूल अभिप्राय ईसवी २००० वर्ष पूर्व मिश्र में प्रचलित था।

यह लोक कथा इतनी लोक प्रिय रही है कि देश एवं कालोचित परिवेश के अनुरूप यह विभिन्न रूपों सहित पाश्चात्य देशों में भी खूब प्रचलित रही। इस कहानी का मौखिक रूप ग्रिम द्वारा संग्रहीत जर्मन कहानियों में द रद्रिपुई जोहेन्नेस में मिलता है। अंग्रेजी में इसे फेथफुल जॉन नाम दिया गया है।

यही कथा पेन्टामेरोन [penta merone] में दक्रो नाम से है। बर्नार्ड श्मिद के गिस्करये मार्चेन में तीसरी संख्या की कहानी इसी के अनुरूप है। यह कहानी मोइरी [Moi-rei] है। इसमें भावी सकटों की सूचना मिलती है। राजकुमारी की बहिन, राजकुमार को बचपन में जलने से तथा गिरने से बचाती है और विवाह के दिन सर्प से रक्षा करती है। पैंट्रोसो की पुर्तगाली 'फोक टेल्स' में भी ऐसी ही कहानी है। इस कहानी के समस्त उपलब्ध रूपों पर विचार करके स्टिथ थामसन ने इसका जो आदर्श रूप खड़ा किया है, वह अपनी पुस्तक द फोक टेल में दिया है। उसने सबसे आरम्भ में ही लिखा है – समस्त लोक कहानियों में सबसे अधिक रोचक है — स्वामीभक्त जॉन [टाइप संख्या ५१५] जिसका संबंध एक नौकर की स्वामीभक्ति से है। यद्यपि इस कहानी के, कुछ संस्करणों में कभी नौकर के स्थान पर भाई, धर्म अथवा हितू मित्र का उल्लेख मिलता है। बेन्फी ने इस कहानी को हितोपदेश के स्वामी-भक्त सेवक वीरवर के तुल्य माना है। यह वीरवर की कहानी बैताल पंचविंशति तथा कथा-सरित्सागर में भी मिलती है।

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि यह लोक कथा अत्यन्त महत्व-पूर्ण है। इस कहानी के मूल अभिप्राय स्वामीभक्त सेवक का जन्म भारत में ही हुआ और यह कथा लगभग दो हजार अथवा इससे भी पूर्व भारत से यूरोप गयी। लोकवार्ता तत्व अन्वेषक कार्ल क्रोहन महोदय ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है।

कथा वस्तु के विकास चरण —

जिस प्रकार एक जीवित भाषा के विकास की प्रक्रिया में आगम, लोप, स्थानापन्न, विपर्ययता आदि अनेक कारण होते हैं और भाषा विकासमान होती चलती है, उसी भांति कथाकार की मानसिक भिन्नता के आधार पर इसी प्रकार के अनेक कारणों से कथा-वस्तु का

विकास होकर एक ही कथा के अनेक रूपान्तर बन जाते हैं। पाश्चात्य लोक-तत्व वेत्ता ऐण्टी आर्ने और एंडरसन ने कहानी के परिवर्तन और परिवर्धन के कारणों का विस्तृत निरूपण किया है, जिनमें कहानी की किसी कड़ी का छूट जाना [लोप], आदि और अन्त में ऐसी कड़ी जोड़ देना जो मूल में नहीं है [आगम], मूल या अक्षर कथा के तन्तुओं को दोहराना, सामान्य से विशेषीकरण से पुनः सामन्यीकरण, किसी अन्य कहानी की सामग्री को संयुक्त कर देना, चरित्रों का विपर्यय हो जाना आदि अनेक कारण सम्मिलित किये हैं।

चित्रसेन पद्मावती की कथा-वस्तु के विकास, परिवर्तन एवं परिवर्धन में भी मूलतः यही कारण काम करते हैं। मुख्य रूप से इस कथा वस्तु के चार लिखित रूपान्तरण मिलते हैं जो काल-क्रमानुसार निम्नलिखित हैं:

अ. कथा सरित्सागर में वर्णित राजकुमार और सौदागर के पुत्र की मित्रता वाला रूप। रचनाकाल, ११ वीं शती का उत्तरार्द्ध।

ब. राजवल्लभ कृत चित्रसेन पद्मावती कथा का काव्य रूप। लिपिकाल संवत् १६७६।

स. राजविजय कृत चित्रसेन पद्मावती रतनसार मन्त्री चौपई नामक राजस्थानी प्रेमाख्यान का कथा रूप। रचनाकाल सं० १८१४ ई.।

द. फूलमती री वारता नामक राजस्थानी लोक कथा का कथा रूप। रचनाकाल १६ वीं शती।

उपर्युक्त चार कथा रूपों में से प्रथम दो कथा रूप 'अ' और 'ब' की कथा वस्तु के विकास की तुलनात्मक व्याख्या डा. सत्येन्द्र ने अपने ग्रंथ लोक-साहित्य का विज्ञान एवं मध्यकालीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्विक अध्ययन में प्रस्तुत की है। राजस्थानी भाषा के प्रेमाख्यानों की खोज करते समय 'स' और 'द' कथा रूप और उपलब्ध हुए। इन चारों कथानकों का यहां तुलनात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया जा रहा है:

अ. कथारूप

१. पुष्करावती के राजा गुहसेन के पुत्र और सौदागर ब्रह्मदत्त के पुत्र में मित्रता।

२. दोनों विवाह के निमित्त यात्रा करते हुए मार्ग में एक नदी किनारे ठहरते हैं।

३. वहां एक कहानी कहते कहते राजकुमारी कहानी अधूरी छोड़कर सो जाती है।

४. सौदागर पुत्र जागता रहता है। वह दो क्रुद्ध आवाजें सुनता है कि कहानी अधूरी छोड़ देने के दण्ड स्वरूप इसे —

क. हार दिखायी पड़ेगा जिसे यह पहिन लेगा तो गला घुट जायेगा और मर जायेगा, किन्तु इससे बच जाने पर,

ख. एक आम खायेगा और मर जायेगा, किन्तु इससे भी बच जाने पर —

ग. विवाह के समय घर में प्रवेश करते समय द्वार गिर पड़ने से दबकर मर जायेगा। यदि इस दुर्घटना से भी बच गया तो —

घ. रात्रि में शयन कक्ष में आने पर सौ बार छींकेगा और यदि वहां उपस्थित कोई व्यक्ति इसके लिए इतनी ही बार ईश्वर रक्षा करे नहीं कहेगा तो वह मर जायेगा।

ङ. जो व्यक्ति हमारी बातें सुनकर उसे रक्षार्थ भेद बतायेगा वह भी मर जायेगा।

५. सौदागर-पुत्र, चारों संकटों से राजकुमार की रक्षा करता है। अन्तिम बार रक्षा करने के लिए वह राजकुमार के पलंग के नीचे लेटा रहता है।

६. सौ बार ईश्वर रक्षा करे कह चुकने पर वह चुपचाप जाने लगता है किन्तु राजकुमार उसे देख लेता है।

७. सौदागर पुत्र के चरित्र पर सन्देह हो जाने पर राजकुमार उसे प्राण दण्ड की आज्ञा देता है।

८. तब मित्र उसे सब रहस्य समझाता है और सभी प्रसन्न होकर रहते हैं।

ब. कथा रूप

१. कलिंग के राजा वीरसेन के पुत्र चित्रसेन की, मंत्री बुद्धिसार के पुत्र रत्नसार से मित्रता।

२. क. चित्रसेन की सुन्दरता के कारण जनता परेशान अतः चित्रसेन का राज्य से निष्कासन, मंत्री पुत्र भी साथ।

ख. रात्रि में किन्नरियों की ध्वनि सुनकर ऋषभदेव के मन्दिर में जाता है तथा वहां एक पुतली देखकर उस पर मोहित।

ग. एक ज्ञानी मुनि वहां आये; और उनसे पता चला कि यह पुतली पद्मपुर के राजा पद्मरथ की पुत्री पद्मावती है।

घ. वह पुरुष द्वेषिणी है। पूर्व भव में एक हंस हंसी का जोड़ा था। हंस की दुष्टता से पुरुषों के प्रति द्वेष। पुरुष द्वेष दूर करने का उपाय— पूर्वजन्म की घटना का चित्र बनाकर हंस के प्रति द्वेषभाव दूर किये जाने पर स्त्री का द्वेष त्यागना तथा चित्रसेन को पद्मावती की प्राप्ति।

३. पद्मावती को साथ लेकर लौटते समय मार्ग में विश्राम करते हुए पद्मावती और राजकुमार सो जाते हैं।

४. मंत्री पुत्र जागता रहता है। वह वृक्ष पर यक्ष-यक्षणी की बातें सुनता है। राजकुमारी की विमाता आ गई है। वह इसे मारने के तीन उपाय करेगी —

क. नगर प्रवेश से पूर्व एक दुष्ट घोड़ा भेजेगी।

ख. मंत्र से नगर प्रवेश पर द्वार गिराकर मृत्यु ।

ग. विष निर्मित भोजन [लड्डू] खाकर मृत्यु तथा इन सबसे बच निकले तो –

घ. रात्रि में सर्प डस लेगा ।

ङ. जो व्यक्ति सुन लेगा और बातें प्रकट कर देगा वह पत्थर का हो जायेगा ।

५. मंत्री पुत्र राजकुमार की चारों संकटों से रक्षा करता है ।

६. सर्प के विष की बूंद पद्मावती की जांघ पर जा पड़ती है । मंत्री पुत्र द्वारा उसे पोंछते समय चित्रसेन देख लेता है ।

७. चित्रसेन राजकुमारी के शरीर पर हाथ रखने का कारण जानना चाहता है ।

८. विवश हो मंत्री पुत्र को रहस्य प्रकट करना पड़ता है और वह पत्थर का हो जाता है ।

९. कुछ वर्ष बाद पद्मावती के पुत्र होने पर जब वह गोद में बालक को लिए मंत्री पुत्र की प्रतिमा को स्पर्श करती है तो वह पुनर्जीवित हो जाता है ।

स. कथा रूप :

१. कलिंग के राजा वीरसेन के पुत्र चित्रसेन की मंत्री सुत रतनभार से मित्रता ।

२. राजकुमार रतनसार के साथ वन में एक राजकुमारी के चित्र को देखकर मोहित होता है और उसे प्राप्त करने के लिए स्वयंवर में पहुंचकर तथा धनुष से निर्दिष्ट लक्ष्य वेध कर राजकुमारी से विवाह करता है ।

३. राजकुमार को साथ लेकर लौटते समय मार्ग में विश्राम करते हुए राजकुमार और पद्मावती सो जाते हैं ।

४. मंत्री सुत जागता रहता है । वह भविष्य वाणी सुनता है कि –

क. दुष्ट घोड़े पर राजकुमार बैठेगा तो घोड़ा उसे लेकर भाग जायेगा और राजकुमार की मृत्यु होगी ।

ख. द्वार में प्रवेश करते समय द्वार गिरने से वह मरेगा । यदि इससे बच गया तो—

ग. विष के लड्डू खायेगा और उससे मरण होगा । यदि इससे बच गया तो –

घ. सर्प के डसने से मृत्यु होगी । यदि इन सब दुर्घटनाओं से बच गया तो विघ्न-बाधा रहित राज्य का भोग करेगा ।

ङ. जो व्यक्ति यह बातें सुन रहा होगा और इस रहस्य को प्रकट कर देगा तो वह पत्थर का हो जायेगा ।

५. मंत्री सुत इन संकटों से राजकुमार की रक्षा करता है ।

६. सर्प के विष की बूंद राजकुमारी की जांघ पर जा पड़ती है । जब मंत्री सुत उसे हानि-

कारक समझकर पोंछने लगता है तो राजकुमार जाग पड़ता है और उसे मंत्री सुत पर दुराचरण का सन्देह हो जाता है।

७. राजकुमार मंत्री सुत से अपने इस अनुचित कार्य का कारण जानना चाहता है।

८. राजकुमार के विवश करने पर मंत्री पुत्र घुड़साल में जाकर रहस्य प्रकट करता है और वहीं पत्थर का हो जाता है।

९. कुछ वर्ष बाद पद्मावती के पुत्र होता है। वह अपनी गोद में पुत्र को लेकर घुड़साल की ओर जाती है और रतनसार की पत्थर की मूर्ति को छूती है तो वह पुनर्जीवित हो उठता है।

ह. कथा रूप

१. एक राजकुमार की मंत्री के पुत्र उतमीचन्द से मित्रता।

२. क. राजकुमार अपने मित्र उतमीचन्द के साथ वन में शिकार खेलने जाता है और वहां बावड़ी की भींत पर एक सुन्दर स्त्री का चित्र देखकर मोहित हो जाता है।

ख. राजकुमार उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करता है। उसे पता चलता है कि वह राजकुमारी फूलमती है जो फूलों से तुलती है।

ग. वह पुरुष द्वेषिणी है, क्योंकि पूर्व जन्म में जब वह सुवटी थी, तब सुवटे ने उसे धोखा दिया था।

घ. राजकुमार पूर्व जन्म का चित्र बनवाकर चित्रकार बनता है और फूलमती के पूर्व जन्म का सन्देह मिटाकर उसका पुरुष के प्रति द्वेष भाव का अन्त करता है और फूलमती को विवाह में प्राप्त करता है।

३. लौटते समय मार्ग में राजकुमार और राजकुमारी विश्राम करते हैं।

४. मार्ग में उतमीचन्द को चकवा चकवी की वार्ता से राजकुमार पर आने वाले संकटों का पता चलता है।

क. मार्ग में हीरों का कोड़ा दृष्टिगोचर होगा। यदि राजकुमार उसे उठा लेगा तो वह सांप बनकर उसे डस लेगा। यदि इस संकट से बच गया तो —

ख. तालाब के किनारे वट वृक्ष के नीचे विश्राम करेगा और वट वृक्ष के गिरने से उसकी मृत्यु हो जायेगी। यदि इस संकट से बच गया तो—

ग. शयनागार में सोते समय राजकुमारी के कपोल पर छत पर से विषैला कीट पड़ेगा और चुम्बन लेते समय उस विष से राजकुमार की मृत्यु हो जायेगी। कीट सांप बनकर चल देगा।

घ. जो व्यक्ति इन बातों को सुनता होगा, वह इन बाधाओं को टाल देगा किन्तु रहस्य प्रकट करने पर पत्थर का हो जायेगा।

५. मंत्री सुत राजकुमार की इन संकटों से रक्षा करता है।

६. सोते समय राजकुमारी के कपोल पर विषैला कीट छत पर से गिर पड़ता है, तब उतमीचन्द के द्वारा विषैला कीट हटाते समय राजकुमार जाग जाता है और उसके चरित्र पर सन्देह करता है।

७. राजकुमार उतमीचन्द से इस तरह छिपकर राजकुमारी के कपोल छूने का कारण जानना चाहता है।

८. राजकुमार के विवश करने पर उतमीचन्द सब रहस्य प्रकट करता है और पत्थर का हो जाता है।

९. एक दिन राजकुमार घुड़साल में जाता है और उतमीचन्द की प्रस्तर प्रतिमा से सिर टकराने पर उसके रक्त की बूंद प्रतिमा पर पड़ जाती है और वह पुनर्जीवित हो उठता है।

उक्त चार कथारूपों की तुलना करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि कथा रूप 'ब' और 'स' समान है। केवल कथा रूप 'ब' के क्रमांक १. का विवरण कथा रूप 'स' के इसी क्रमांक से विस्तृत है। इसमें नायिका का पुरुष द्वेषिणी होना तथा उसके पूर्व जन्म का वृत्तान्त कथा रूप 'द' के समान है। कथा रूप 'ब' में भावी संकटों की भविष्यवाणी यक्ष-यक्षणियां करती हैं जो जैन-कथानक रूढ़ि है। कथा रूप 'द' में यही कार्य चकवा चकवी के द्वारा होता है। पक्षियों का वार्तालाप, यक्ष-यक्षणियों द्वारा भविष्यवाणी से बहुत प्राचीन है। यह सम्भवत: पचतंत्र के रचनाकाल से भी बहुत प्राचीन बौद्ध जातकों की देन है। तीन संकटों वाली बाधा (जो वस्तुत: चार संकट हैं) कथा रूप 'ब' और 'स' में समान है। किन्तु 'अ' में द्वार गिरने से तथा सांप से मृत्यु के अतिरिक्त दो संकट (क) और (ख) भिन्न हैं। कथा रूप 'द' में तो केवल तीन ही संकट हैं जो वस्तुत: तीन संकट के प्राचीन अभिप्राय को सार्थक करते हैं। इसमें सांप से मृत्यु का संकट दो बार आया है। कथा रूप 'अ' में सांप से मृत्यु के स्थान पर सौ बार छींकने और उतनी ही बार रक्षा करें का वर्णन है जो इस कथा रूप पर शैवमत के प्रभाव का द्योतक है। केवल कथा रूप 'अ' को छोड़कर शेष सब कथा रूपों में रहस्य खोलने पर राजकुमार के मित्र का पत्थर हो जाना लिखा है। कथा रूप 'ब' और 'स' में मंत्रीपुत नायिका के बालक होने पर उसके स्पर्श से पुनर्जीवित होता है जो जैन अभिप्राय हैं, पर कथा रूप 'द' में राजकुमार के रक्त की बूंद गिरने पर जीवित होना 'रक्त लेप से प्राण-

सचार' आदि मानव के विश्वास की देन है। यह कथा रूप ब और स के क्रमांक ६. में उल्लिखित अभिप्राय से अधिक प्राचीन है। इस प्रकार कथा रूप 'द' में अन्य कथा-रूपों की अपेक्षा निम्नलिखित लोक कथा तत्व अधिक प्राचीन मिलते हैं —

१. वर्जित स्थान, किसी बावड़ी पर राजकुमारी का चित्र देखना और उस पर मुग्ध होना। यह चित्र दर्शन का अभिप्राय अत्यन्त प्राचीन है। जर्मन लोक कथा फैथ फुल जॉन राजकुमार वर्जित कक्ष में राजकुमारी का चित्र देख कर मोहित होता है।

२. चकवा चकवी के वार्तालाप द्वारा भावी संकटों की भविष्य वाणियां। पक्षियों द्वारा भविष्यवाणी वाला मोटिफ ब्रज लोक कथा [यार होय तौ एसौ होय], जर्मन लोक कथा फैथ फुल जॉन [कव्वे द्वारा भविष्य वाणी] व दक्षिणी लोक-कथा, राम लक्ष्मण [उल्लूओं द्वारा भविष्य वाणी] में भी मिलता है।

३. तीन संकटों वाला मोटिफ: कथा रूप द के तीन संकट वाले मोटिफ के समान जर्मन लोक कथा फैथ फुल जॉन तथा दक्षिण भारत की लोक कथा राम लक्ष्मण में भी उल्लेख है जबकि ब्रज लोक कथा और बगाल की लोक कथा में चार संकटों का उल्लेख है। इनमें सांप के द्वारा मृत्यु वाला मोटिफ जर्मन लोक कथा को छोड़कर सब कथा रूपों में मिलता है। कथा रूप द की भांति वट-वृक्ष के गिरने पर से मृत्यु वाला सकट ब्रज लोक कथा, दक्षिण की राम लक्ष्मण की लोक कथा में समान रूप से मिलता है। द्वार गिरने से मृत्यु, हाथी घोड़े से मृत्यु, विषयुक्त भोजन से मृत्यु, जर्मन लोक कथा में वैवाहिक कमीज पहिनने से नृत्यशाला में मृत्यु आदि के सकट प्रथम द्वितीय एवं तृतीय संकट रूप में हेर फेर के साथ विद्यमान हैं और अन्तिम सकट सांप के मृत्यु का मोटिफ तो जर्मन लोक कथा को छोड़कर सब लोक कथाओं में समान रूप से मिलता है।

४. मित्र के द्वारा रहस्य खोलने पर पत्थर का हो जाना यह मोटिफ [कथा सरित्सागर] के कथा रूप को छोड़कर उक्त सब लोक कथाओं में मिलता है।

५. रक्त लेप से मित्र का पुनर्जीवित होना यह मोटिफ अपने विभिन्न रूपों में जर्मन लोक कथा को छोड़कर इस कहानी में राजकुमारी के स्तन से रक्त की बूंदे निकालने पर जीवित होने का वर्णन है। रक्त सब लोक कथाओं में मिलता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि फूलमती री वारता नामक राजस्थानी लोक कथा अपने मूल रूप के अधिक निकट है। इसके आधार पर इस लोक कथा के मूल रूप की कल्पना निम्नलिखित रूप में की जा सकती है—

१. एक राजकुमार और उसका एक मित्र।

२. दोनों साथ साथ रहते हैं।

३. राजकुमार वर्जित स्थल पर जाकर किसी राजकुमारी का चित्र देखकर मुग्ध हो जाता है।

४. वह अनेक बाधाओं को पार करके राजकुमारी को प्राप्त करता है।

५. राजकुमारी को लेकर लौटते समय राजकुमार का मित्र पक्षियों के वार्तालाप द्वारा आने वाले सकटों के विषय में भविष्यवाणी सुनता है। मुख्य संकट शयनागार में सांप द्वारा काटने का है।

६. जो कोई व्यक्ति भविष्यवाणी को सुनता होगा यदि वह इसका रहस्य प्रकट करेगा तो पत्थर का हो जायेगा।

७. मित्र, राजकुमार की संकटों से रक्षा करता है किन्तु अंतिम संकट से रक्षा करते समय राजकुमार को अपने मित्र के चरित्र पर सन्देह हो जाता है और उसे रहस्य खोलना पड़ता है।

८. रहस्य खोलने के बाद वह पत्थर का हो जाता है।

९. रक्त लेपन से राजकुमार का मित्र पुनर्जीवित हो जाता है।

देश कालोचित वातावरण तथा संस्कृति के अनुरूप एवं कथाकार के मानस, उसकी मान्यताओं एवं विश्वासों के अनुसार इस मूल कथा का विकास होकर उपर्युक्त वर्णित अनेक कथारूप प्रचलित हो गये हैं।

संदर्भ ग्रंथ

लोक साहित्य का विज्ञान : डॉ. सत्येन्द्र

मध्य युगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन : डॉ. सत्येन्द्र

नागरी प्रचारिणी पत्रिका : श्री अगरचंद नाहटा का लेख

चित्रसेन पद्मावती कथा : हस्तलिखित ग्रंथ, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

चित्रसेन पद्मावती रतन सार मंत्री चौपई : हस्तलिखित ग्रंथ, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

कथा-सरित्सागर : हिन्दी रूपान्तर, श्री गोपाल कृष्ण कौल

आंध्र सातवाहन साम्राज्य का इतिहास : श्री चंद्रभान पाण्डेय

द स्टेंडर्ड डिक्शनरी ऑफ फोकलोर

राजस्थान के लोक वाद्य — घन वाद्य

कोमल कोठारी

[राजस्थान के लोक वाद्यों पर क्रमिक रूप से लेख छापे जा रहे हैं। दिसंबर, ६७ में डडिया, घुंघरू, रमझोल एवं भोपों के बड़े घुंघरू तथा जनवरी, ६८ में घंटा, घंटी, टिकोर, थाली, झालर एवं घड़ियाल पर लिखा जा चुका है। इन निबन्धों में वाद्यों के राजस्थान में प्रचलन पर ही मुख्य ध्यान रखा गया है। उनके ऐतिहासिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप को केवल पृष्ठ-भूमि के रूप में स्वीकृत किया गया है।]

मंजीरा

पीतल के साथ टिन के मिश्रण या कांसे से निर्मित धातु के दो छोटे प्यालों से मंजीरों को बनाया जाता है। इन दोनों प्यालों को परस्पर आघात करके लयपूर्ण ध्वनि-पेटर्न्स का सृजन किया जाता है। निश्चय है कि वाद्य में स्वर के अनुक्रम को बदलने की संभावना नहीं है। विर्मिति के समय ही जिस ध्वनि का संचार बन जाता है, वही मजीरे के वादन में कायम रहता है। इन दोनों छोटे प्यालों जैसे आकार के मजीरों के पेंदों में एक एक छेद होता है और उनमें से कच्चे सूत की रस्सी को निकाला जाता है। दोनों प्याले पृथक पृथक रस्सी के छोर पर बांध लिये जाते हैं। बाहर की ओर निकली हुई रस्सी को अगूठे एवं अंगुलियों पर लपेट लिया जाता है और तब वादक का क्रम प्रारंभ होता है। कोई कोई वादक सुविधा के लिए इन रस्सियों के सहारे छोटी छोटी लकड़ियां भी बांध लेते हैं जिन्हें सुविधा से मुट्ठी में पकड़ा जा सकता है।

लयपूर्ण ध्वनि में सुन्दरता उत्पन्न करने के लिए वाद्यगत-ध्वन्य-वैविध्य का उत्पन्न होना



अत्यंत आवश्यक होता है। इस दृष्टि से मंजीरे में बहुत कम संभावनायें हैं किन्तु राजस्थान के लोक वादक मंजीरों को बजाने में इस वैविध्य को लाने का बराबर प्रयत्न करते हैं। छोटे प्यालों जैसे एक एक मंजीर के उठे हुए किनारों को सहज एवं वजन से आघातित करने से कम और अधिक ध्वनि का प्रसारण होता है और उससे एक प्रकार का पेटर्न बन जाता है। इसी प्रकार एक मंजीरे के पूरे किनारों को दूसरे किनारों के मुंह पर पूर्ण रूप में आघातित करने पर अन्य प्रकार की ध्वनि मिल जाती है। मंजीरों के लिए माना गया है कि उनके निर्माण में ही दोनों मंजीर की ध्वनि में कुछ अन्तर रह जाता है। इस दृष्टि से अधिक ध्वनि वाले मंजीरे को नर एवं लघु ध्वनि वाले मंजीरे को मादा कहा जाता है। नर को बांये हाथ में नीचे की ओर तथा मादा को ऊपर दाहिने हाथ में रखने का आग्रह किया जाता है।

मंजीरों के वादन के द्वारा केवल लयानुगत ध्वनि-पेटर्न प्राप्त किया जाता है अतः यहां लय की वृत्ति के विषय में लिखा जाना आवश्यक है। लय मुख्यतया सुनिश्चित काल का सम-मात्रिक या विषम मात्रिक क्रमानुगत प्रयोग है जिसमें काल के पेटर्न विशेष को एक प्रवृत्ति के अनुसार कायम रखा जाता है। लय एवं ताल का सूक्ष्म भेद भी इसी परिभाषा के साथ समझ

में आता है। शास्त्रीय ताल-व्यवस्था में लय को भी विशिष्ट क्रमानुपात में निबद्धित किया गया है और उसमें खाली, भरी और सम की स्थापना के द्वारा सुनिश्चित रूप निर्धारित किया गया है। किन्तु स्वतंत्र लय की वृत्ति में ताल जैसा नियमन नहीं होता। इस स्थिति के कारण मंजीरे एवं अन्य घन वाद्यों में तालानुक्रम का आभास स्वतंत्र वादन के समय नहीं हो सकता। यह घन वाद्यों की अपनी सीमा है। किन्तु इन्हीं वाद्यों को विकसित ताल-वाद्यों के साथ बजाने पर निश्चय ही वजन की स्थितियों से खाली, भरी और सम के आभास भी मिल जाते हैं। घनवाद्यों में से मंजीरा एक ऐसा वाद्य सिद्ध हुआ कि जिसका प्रयोग शास्त्रीय गायन एवं शास्त्रीय नृत्य के साथ भी रहा और इसलिये उसके वादन के वैशिष्ट्य के साथ उपरोक्त ताल-मयता का अनुगतीय रूप में उपयोग किया गया। दक्षिण भारत के भारत-नाट्य, मोहिनी-अट्टम, ओडिसी आदि शास्त्रीय नृत्यों में मंजीरों का प्रयोग प्राप्त होता है। कत्थक नृत्य की परम्परा के वयोवृद्ध कलाकार शंभु महाराज का कहना है कि अपने प्रारंभिक नृत्य शिक्षण में उनकी वाद्य संगत में मंजीरों का प्रयोग होता था। वे स्वयं मंजीरों को अत्यंत सुन्दर रूप में बजाया करते हैं। उनका कहना है कि नृत्य के बोलों में 'किट' पाठाक्षर का आगम मंजीरों के माध्यम से ही हुआ। मंजीरों के इस शास्त्रीय प्रयोग के बाद भी यह सत्य है कि इसका प्रमुखतया लयात्मक प्रयोग लोक संगीत के साथ ही जीवित रह पाया।

राजस्थान के लोक संगीत की कुछ विशिष्ट विधाओं के साथ ही मंजीरों का प्रयोग मिलता है। इन गीतात्मक विधाओं का संबंध धार्मिक अभिव्यंजनाओं से जुड़ा हुआ है। हरजस, वाणी और भजन के साथ मंजीरों को अनिवार्य रूप से प्रयुक्त किया जाता है। संगीत की दृष्टि से ये धार्मिक गीतात्मक अभिव्यक्तियां भी लोक संगीत की एक उन्नत अवस्था को व्यक्त करती हैं। सामान्यतया लोकगीतों की रचना में 'व्यक्ति' का महत्व नहीं होता अर्थात् सामाजिक क्रिया-कलाप एवं प्रेरणा से सामुदायिक व्यंजना के परिणामस्वरूप लोक गीत का रूप निखर कर सामने आता है। किन्तु धर्म-सापेक्ष गीतों में हमें समुदाय की इस अचेतन प्रेरणा का रूप नहीं मिलता। यह निश्चित रूप से देखा जा सकता है कि धर्म-सापेक्ष गीतों के साथ अधिकांशतया कवि की छाप (रचयिता का नाम) रहती है। अर्थात् इन गीतों को रचने में एक 'व्यक्तित्व' का प्रतिफलन अवश्य होता है। इस दृष्टि से राजस्थान के धर्म-सापेक्ष एवं लोक-धर्मी हरजसों, वाणियों एवं भजनों का संगीतात्मक अध्ययन करते समय यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये कि जहां गीत की संरचना में व्यक्ति महत्वपूर्ण है, ठीक वहीं संगीतात्मक धुन के निर्माण में भी एक आन्तरिक व्यवस्था एवं प्रयत्नसाध्य संगीत-रचना के तत्व भी निहित हैं। इतना ही क्यों कहें, लोकवाद्यों के अध्ययन के साथ यह बात राजस्थान में तो

स्पष्टत: देखी जा सकती है कि जिस लोक संगीतात्मक अभिव्यक्ति के साथ छोटा से छोटा वाद्य भी जुड़ा हुआ है, वह अभिव्यक्ति कुछ उन्नत संगीत के तत्वों को अपने में आत्मसात किये हुए है। बहुत संभव यही है कि अन्य प्रदेश एवं विश्व के धर्म-सापेक्ष संगीत एवं लोकवाद्यों के साथ गाये जाने वाले गीतों के साथ भी यही तथ्य महत्वपूर्ण सिद्ध हो।

धर्म-सापेक्ष लोकसंगीत की चर्चा करते हुए, इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि शास्त्रीय धर्म-व्यवस्था एवं लोक-धर्म के बीच भी अन्तत: विभेद है। शास्त्रीय धर्माचरण के पीछे एक दर्शन, ज्ञान को आत्मसात करने के विभिन्न तत्व एवं एक तार्किक व्यवस्था होती है। लोक धर्म वस्तुत: सामान्य विश्वासों, दैनिन्दिन आचार-व्यहार के नियमों, शकुन-अपशकुन, जादू-टोनों, छोटे-मोटे देवी देवताओं आदि तक ही सीमित रहता है। अनेक बार लोक-धर्माचरण शास्त्रगत मान्यताओं के साथ मेल नहीं भी खाता है किन्तु उससे सामान्य लोगों में किसी चिन्ता का जन्म नहीं होता। लेकिन धर्म एक ऐसा तथ्य है जहां शास्त्रीय और लोक तत्वों का संगम निश्चित रूप से मिलता है। उच्च संस्कृति एवं लोक सस्कृति का मुख्यतया यदि कहीं आदान-प्रदान मिलता है तो वह धर्मानुगत परम्पराओं में ही पाया जाता है।

मंजीरे का प्रयोग धर्म-सापेक्ष लोकगीतों के साथ है अत: उसके वादन में भी हमें शास्त्रीय व्यवस्था के प्रारंभिक तत्व मिलने लग जाते हैं। हरजस, हेली, वाणी और भजन धर्म-सापेक्ष गीत-प्रकार हैं और इनका काव्यगत गठन तथा सांगीतिक गठन भी अपनी अपनी विशिष्टता लेकर चलता है। काव्यगत रूप में हरजस, हेली और वाणी निर्गुणी भावधारा की अभिव्यक्तियां है और भजन में निर्गुण-सगुण दोनों रूप मिल जाते हैं। हरजसों में मुख्यतया कूट, दृष्टिकूट और तांत्रिक रूपकों का प्रयोग प्राप्त होता है। गेय रूप में ये तीनों प्रकार अपनी भिन्नता को कायम रखते हैं। वाणी के गेय रूप में हमें प्रत्येक टेर की पंक्ति के साथ आलापात्मक स्वरूप का प्रयोग मिलता है। वाणी की धुनों में वैविध्य होता है परन्तु टेर के आलापात्मक अंश-रूप में निरन्तर एकता रहती है। इसी प्रकार हेली नामक धार्मिक गीतों में भी 'हेली ओ म्हारी' कहकर टेर की पंक्ति को गीतात्मक रूप प्रदान किया जाता है। भजन का सामान्य-स्वरूप संगीत-प्रेमियों के लिए नवीन नहीं है। मंजीरों का प्रयोग इन गीतात्मक रूपों के साथ मुख्यतया किया जाता है।

मंजीरों का वादन स्वतंत्र रूप से नहीं होता। अर्थात मंजीरे के साथ कुछ अन्य वाद्यों की संगत अवश्यंभावी रूप से होती है। एक तारा, दो तारा, चौतारा [वीणो या तंदूरो] जैसे तार-वाद्य एवं ढ़ोलक व उसके अनेक रूप यथा मादळ, ढ़ोल जैसे अवनद्ध वाद्य तथा चिंपिया, ताल, झांझ, करताल जैसे घन वाद्यों का प्रयोग मिलता है। इससे सहज ही अनुमान हो

सकता है कि मंजीरों का वादन अपने आपमें एक वृंद-वादन की कल्पना को लेकर चलता है। उपरोक्त सभी वाद्यों का प्रयोग भी मुख्यतया धर्म-सापेक्ष लोक संगीत के साथ मिलता है।

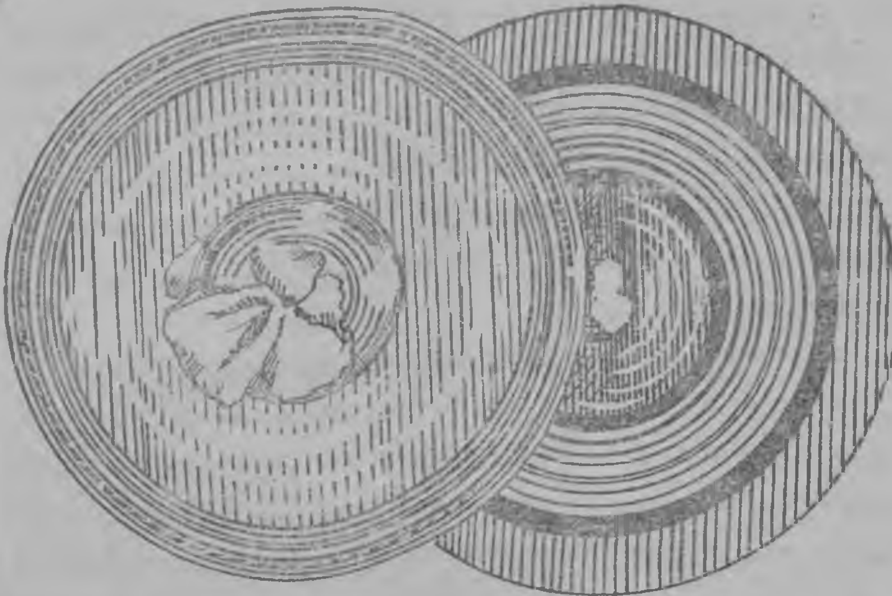
राजस्थान में मंजीरों के उपयोग से एक विशिष्ट प्रकार का नृत्य भी प्रचलित हुआ है। नृत्य का नाम है : तेरताळी। यह नृत्य एक जाति विशेष द्वारा अदा किया जाता है। जाति का नाम है: कामड़। यह महिलाओं का नृत्य है। एक महिला, दो महिलायें अथवा तीन या चार महिलायें इस नृत्य को एक साथ किया करती हैं। महिलायें अपने दाहिने पांव के अंगूठे, पगनली, टखने से लेकर घुटने तक की पिंडली पर दस-बारह अथवा तेरह मंजीरों को बांध लेती हैं। साथ ही, हाथ की दोनों कोहनियों, भुजाओं एवं कंधों के पिछले भाग पर भी मंजीरे बांधती हैं। बाद में दोनों हाथों में लंबी रस्सी के साथ दो मंजीरे बांधकर नृत्य प्रारंभ करती हैं। यह नृत्य बैठकर ही किया जाता है। बांये पांव को समेटकर एवं दाहिने पांव को आगे फैला दिया जाता है। हाथ में पकड़े हुए, लंबी रस्सी के मंजीरों से शरीर के विभिन्न अंगों पर बंधे मंजीरों को आघातित किया जाता है। कुशल तेरताळी नृत्य करने वाली महिला अत्यंत सुन्दर संचालन के साथ इस आघात को अदा किया करती है। इस नृत्य में बैठे हुए ही कमर का भाग आगे या पीछे जाता है अथवा दाहिने या बांये जाता है अथवा पूर्ण अग्रभाग को दाहिने या बांये पार्श्व की ओर घुमाया जा सकता है। आगे व पीछे आने व जाने की क्रिया में सिर को पांव के घुटने तक एवं पीछे लेट जाने तक भी किया जा सकता है। इस प्रकार के अंग-संचालन के साथ ही साथ मंजीरों को क्रमानुसार भिन्न भिन्न अवयवों पर बंधे मंजीरों के साथ बजाया जाता है। हाथों को खुला रखा जाता है और उससे आघात को संचालित करने में अनेक प्रकार के पेटर्न्स का निर्माण किया जा सकता है। इन्हीं हाथ के पेटर्न्स की सुविधा के कारण दही बिलोने, धान फटकने, मक्खन निकालने जैसी क्रियात्मक स्थितियों को व्यक्त करने का क्रम भी नृत्य में प्राप्त होता है। इन क्रिया-कलापों में हाथ का जो अतिशयोक्त प्रयोग होता है, वह मंजीरों के वादन एवं बैठक की सुविधा के साथ सहज ही संभाव्य है।

इसी नृत्य को अधिक आकर्षक बनाने की दृष्टि से कामड़ जाति की महिलाओं ने कुछ तत्व और भी जोड़ लिये हैं। हर नृत्यानुगत अंग-संचालन में मंजीरों का वादन तो रहता ही है। एक नृत्य रूप में वे मुंह से तलवार ले लेती हैं और दोनों ओर निकली हुई तलवार के ऊपर और नीचे से हाथ का संचालन करते हुए मंजीरों का वादन करती हैं। इसी रूप में पूर्णतया लेटकर भी वादन की क्रिया को संपन्न कर लेती हैं। दूसरे नृत्य रूप में अपने सिर पर पुष्पों से सज्जित कलश या प्रज्वलित अग्नि के कलश को रख कर भी नृत्य किया करती हैं।

जिस समय दो तीन या चार महिलायें एक साथ इस नृत्य को अदा करती हैं तो सुन्दर एवं आकर्षक लय के साथ पूर्ण शरीर का सचालन अदभुत लालित्य को व्यक्त करने में समर्थ बन जाता है। इस नृत्य के साथ तंदूरा अथवा चौतारा (जिसे वीणो या निसांण भी कहते है), ढोलक एवं ताल की सगत अवश्य रूप से दी जाती हैं। इन वाद्यों के वादक पुरुष होते हैं जो वाणी, हेली, हरजस या भजन का गायन करते हैं। कुशल नृत्यकार महिला इस गायन में भी सम्मिलित रहती है। अंग के त्वरित संचालन के साथ महिला के ऊंचे स्वर संयोग से गीतात्मक सौन्दर्य और भी बढ़ जाता है।

राजस्थान के सामाजिक सगठन की दृष्टि से कामड़ जाति और उनके नृत्य रूप (तेरा-ताळी) की पृष्ठभूमि को समझना भी महत्वपूर्ण है। कामड़ जाति को समाज में अत्यंत निम्नतम माना गया है। यह जाति वस्तुत: उन राजस्थानी जातियों में से है जो उच्च या निम्न जातियों के अनुरंजनार्थ अर्थात धर्मार्थ गायन, वादन या नर्तन करने के लिए, जजमानी प्रथा के रूप में पहुंचा करती हैं। कामड़ों की जजमानी भांभी जाति में है जो वस्त्र बुनने या चमड़े को साफ करने का कार्य किया करती है। सामाजिक उच्चता-निम्नता के रूप में भांभी स्वयं काफी नीची श्रेणी में आते हैं और उन्हीं की जजमानी के रूप में कामड़ जाति का अस्तित्व बना हुआ है। इस जजमानी की बात कहते हुए यह कहना भी आवश्यक है कि कामड़ों का नृत्य व गायन मनोरजन के रूप में नहीं होता अपितु हरजस, वाणी, हेली एवं भजन आदि गीतों को अभिव्यक्त करने की दृष्टि से होता है। अर्थात कामड़ों के तेरा ताळी नृत्य को लोक धार्मिक भावना के साथ ही जोडना आवश्यक होगा।

राजस्थानी लोक वाद्यों के अध्ययन में सामाजिक पक्ष के उल्लेख से धीरे धीरे यह ज्ञात होता जाता है कि वादन के लिए प्रयुक्त लोक वाद्यों का संबंध निश्चित रूप से कुछ विशिष्ट गायक जातियों के साथ जुड़ा हुआ है और जातियों के इस प्रयोग के कारण ही शताब्दियों पुराने संगीत-वाद्य हमें जीवित रूप में आज प्राप्त हो रहे हैं। यों मंजीरों का सामान्य वादन जातिगत रूप से प्रतिबंधित नहीं हैं किन्तु तेरा ताळी जैसे उन्नत रूप में वह निश्चय ही कामड़ जाति की अपनी उपलब्धि है और उसके कलात्मक सौन्दर्य की सुरक्षा का श्रेय भी उन्हीं को है। यहां एक बात का उल्लेख करना भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में मंजीरों का नृत्य भी होता है जो पुरुषों द्वारा वृत्ताकार नृत्य-रूप में अदा किया जाता है। इसमें पुरुष गोलाकार खड़े रहते हैं और विभिन्न लयात्मक प्रयोगों के साथ सामूहिक नृत्य की अवतारणा करते हैं। मंजीरों पर आधारित अन्यत्र ऐसे नृत्यों को देखने अथवा पढ़ने का अवसर नहीं मिला।



ताल

मंजीरे से कुछ ही बड़े आकार का कांस्य से ढ़ला हुआ वाद्य ताल कहलाता है। ताल एवं मंजीरे की बनावट में मुख्य भेद यही है कि मंजीरे के मध्य का भाग अधिक गोलाई व गहराई लिये होता है और ताल में यह गोलाई व गहराई कम होती है। परिणाम स्वरूप आघात किये जाने वाली समतल प्लेट का भाग अधिक रहता है।

इसी बनावट के कारण इसका वादन-विधान भी मंजीरे से भिन्न होता है। जहां मंजीरों की कोरों को आघात करके बजाया जाता है वहां ताल को एक दूसरे से पूरी तरह भिड़ा कर ध्वनि प्राप्त की जाती है। मंजीरों में सूक्ष्म लयपूर्ण बोलों को निकालने की सुविधा रहती है, वहां ताल में केवल लय के मुख्य वजन को ही बताने का काम अदा किया जा सकता है। ताल का प्रयोग मुख्यतया मंजीरों के वादन के साथ ही प्रचलित रहा है अथवा ढ़ोलक जैसे अवनद्ध वाद्य के साथ भी बजाया जाता है। यह वाद्य भी धर्म-सापेक्ष लोक संगीत के साथ प्रचलन में रहा है। सामान्य सामाजिक एवं पारिवारिक संगीत के साथ इसका वादन नहीं मिलता। नृत्यानुगत लय-प्रधान वाद्यों के साथ भी यदा-कदा ताल का प्रयोग मिल जाता है। मंजीरे की भांति ही बजने वाले वाद्य यथा तिकोण या करताल जैसे वाद्यों के साथ भी ताल को बजाया जाता है।

तेराताळी नृत्य के साथ ताल-वादन अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। क्योंकि इससे मंजीरों

के नृत्य में लय के धातुप्रधान ध्वन्यात्मक वजन को बताने में सहायता मिलती है। ताल केवल लय के मुख्य वजन के साथ कहीं कहीं आन्तरिक बोलों के रूप में भी कार्य दे देता है। इस वाद्य की बनावट और वादन-विधान की इस सीमा को समझना सबसे महत्वपूर्ण तथ्य है। घन-वाद्य के रूप में इससे नि:सृत ध्वनि की निर्मिति वाद्य बनाते समय ही निर्धारित हो जाती है।

झांझ

कांस्य की दो बड़ी गोलाकार तश्तरियों-नुमा वाद्य को झांझ कहते हैं। इन तश्तरियों का डायमीटर दस, बारह, चौदह, सोलह इंच तक होता है। बीच के दो तीन इंच के डायमीटर की गोलाई का भाग दबा हुआ रहता है जिसके छेदों से कुछ मोटी रस्सी को निकाल कर बाहर के भाग पर मुट्ठी में पकड़ने के लिए उसे गुंफित कर लिया जाता है। इन दोनों तश्तरियों को दोनों हाथों में लेकर जोर से आघात किया जाता है जिससे झनझनाहट की ध्वनि नि:सृत होती है। इस ध्वनि का कारण धातु की गोलाकृत चद्दर होती है। आघात से झंकृत करके उसकी स्वरात्मक आस को लय रूप के साथ प्रयोग में लेने का प्रयास किया जाता है। लय का मुख्य वजन तो झांझ के आघात से मिलता है और पुनः आघात करने के पूर्व झंकार की ध्वनि लय के काल को परिपूरित करती रहती है।

झांझ अपने आकार-प्रकार में अनेक विभेद लिये हुए होते हैं। मोटे कांस्य के बने हुए झांझों का डायमीटर आठ-दस इंच से अधिक नहीं होता। किन्तु इनकी चद्दर की मोटाई दो-तीन सूत तक की मिल जाती है। दूसरी ओर पतली कांस्य चद्दर की बनी हुई झांझों में डायमीटर काफी होता है और झंकार भी अधिक मिलती है। झांझ वादक आकार में छोटी और मोटी झांझ को अधिक अच्छा मानते हैं।

झांझ से उत्पन्न रव काफी होता है और निश्चय है कि उसका प्रयोग गायक के साथ नहीं होता। राजस्थान में मुसलमानों के मोहर्रम के बड़े ढोलों और तासों के साथ इसका मुख्य प्रयोग देखने को मिलता है। मेवाड़ के इलाकों में विवाह एवं अन्य सामाजिक व धार्मिक जुलूसों के साथ भी इसका प्रयोग प्राप्त होता है। इस वाद्य में घोर अनुरणन की शक्ति होती

है और प्रयोग रूप में घोर रव वाले वाद्यों के साथ ही इसे बजाने की बात सोची जा सकती है। मध्ययुगीन राजस्थानी काव्य में युद्ध वर्णनों के समय बजने वाले वाद्यों में झांझ का खूब वर्णन किया गया है। राजाओं के किलों एवं गढ़ों में बजने वाली नौबत एवं दमामों व घूसों जैसे वाद्यों के साथ भी झांझ का प्रयोग मिलता है। किन्तु इस समय झांझ का प्रयोग मुख्यतया मोहर्रम एवं ढोलों पर आधारित जुलूसों के वृंद-वादन के साथ ही शेष रहा है।

लयानुवृत्ति के रूप में यह वाद्य केवल मुख्य लयात्मक वजन के साथ चलता है। ढोल के संगत के रूप में लयानुवृत्ति के अनुरूप पेटर्न बनाने का प्रयास करता है। सामान्यतया झांझ का सांगीतिक प्रयोग थाली या कटोरे के रूप में समझने का उपक्रम किया जा सकता है। झांझ का स्वतंत्र वादन असंभव है। अतः यह निपट अवनद्ध वाद्यों के संगत का ही वाद्य समझा जाता है।

यहां एक सांगीतिक समस्या की ओर इंगित करना अप्रासंगिक नहीं होगा। झांझ जैसे वाद्य को पश्चिमीय संगीत में विभिन्न रूपों में प्रयुक्त किया गया है। यथा वृंद-वादन में एक झांझ को एक लकड़ी के आघात द्वारा, केटल-ड्रम, साइडड्रम के साथ धातु की गोल वस्तु के आघात द्वारा, सर्कस के ऑरकेस्ट्रा में विभिन्न तरीकों के आघात द्वारा वैविध्य उत्पन्न किया गया है। किन्तु हमारे प्रदेश में खड़े हुए वर्टिकल या होरिजोंटल रूप से परस्पर आघात के अलावा कोई नया प्रयोग नहीं मिलता। लोक संगीत में प्रयोग-वैविध्य की ओर ध्यान जाना तो संभव नहीं भी हो, किन्तु हमारे शास्त्रीय संगीत में ऐसे वाद्यों की उपयोगिता की न खोज ही की गई है और न वह प्रवृत्ति ही दृष्टिगत होती है। वाद्य की इस स्थिरता को हम ऐतिहासिक रूप से कितना ही महत्वपूर्ण क्यों न मानलें, हमारे सांगीतिक विकास की दृष्टि से निश्चय यह एक अवरुद्ध विकास का चिह्न माना जायेगा। कुछ कम-अधिक रूप में यही प्रासंगिक तथ्य सभी लोक वाद्यों में देखने को मिलेगा। वृंद-वादन के रूप में ऐसे लोक वाद्यों की सांगीतिक संभावनाओं को उपयोग में लिया जाना निश्चय ही हमारे संगीत के लिए एक स्वस्थ तत्व का समावेश होगा।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध, सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का
राजस्थान पुरातन ग्रंथमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

राजस्थानी - हिन्दी

प्रकाशन नाम	सम्पादक	मूल्य — रुपये.
कान्हड़दे प्रबंध	प्रा० के० बी० व्यास	१२. २५
क्यामखां - रासा	डा० दशरथ शर्मा और अगरचंद भंवरलाल नाहटा	४. ७५
लावा - रासा	श्री महताब चन्द खारैड़	३. ७५
बांकीदास री ख्यात	श्री नरोत्तमदास स्वामी	५. ५०
राजस्थानी साहित्यसंग्रह भाग १	श्री नरोत्तमदास स्वामी	२. २५
राजस्थानी साहित्यसंग्रह भाग २	डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया	२. ७५
कवीन्द्र - कल्पलता	रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत	२. ००
जुगलविलास	रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत	१. ७५
भगत - माळ	श्री उदयराज उज्जवल	१. ७५
राजस्थान पुरातत्त्व मंदिर के हस्त-लिखित ग्रंथों की सूची भाग १	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	७. ५०
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान हस्त-लिखित ग्रंथों की सूची भाग २	श्री गोपाल नारायण बहुरा	१२. ००
राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथ सूची भाग १	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	४. ५०
राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथ सूची भाग २	डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया	२. ७५
स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रंथ संग्रह सूची	श्री गोपालनारायण बहुरा	६. २५
मुहता नैणसी री ख्यात भाग १	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ५०
मुहता नैणसी री ख्यात भाग २	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	६. ५०
मुहता नैणसी री ख्यात भाग ३	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ००
मुहता नैणसी री ख्यात भाग ४	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ७५
राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग ३	श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी	५. ५०
सूरजप्रकाश भाग १	श्री सीताराम लाळस	८. ००
सूरजप्रकाश भाग २	श्री सीताराम लाळस	६. ५०
सूरजप्रकाश भाग ३	श्री सीताराम लाळस	६. ७५
नेहतरंग	श्री रामप्रसाद दाधीच	४. ००
मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन	डा० मोतीलाल गुप्त	७. ००

पुस्तक विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है।

[राजस्थान सरकार द्वारा प्रसारित]

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित – डी. ५५१ | ६७ | ४१४६ बी.

रूपायन संस्थान के प्रकाशन

लोक कथा

१. बातां री फुलवाड़ी [नौ भाग प्रकाशित]
बीस भागों में संपूर्ण करने की योजना।
प्रति भाग १५ रुपया

२. तीडोराव [बड़ी लोक कथा पर आधारित लोक उपन्यास]
प्रति पुस्तक १।। रुपया

३. नाहर सिंह-बछराज सिंह [तीन कथाओं का छोटा संग्रह]
प्रति पुस्तक २ रुपया

४. अनोखा पेड़ [हिन्दी में लिखित पशु-पक्षी संबंधी कथाएं]
प्रति पुस्तक १. ७५ रुपये

राजस्थानी कविता

५. राधा [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]
प्रति पुस्तक २।। रुपये

६. दीवा कांपे क्यूं [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]
प्रति पुस्तक २।। रुपये

अनुवाद

७. बाम्बी [वाल्ट डिज़्ने का राजस्थानी अनुवाद]
प्रति पुस्तक २।। रुपये

विवेचन

८. राजस्थान का लोक साहित्य [नानूराम संस्कर्ता द्वारा लिखित]
प्रति पुस्तक १५ रुपये


लोक
मई १९६८

चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया

वर्ष ७ अंक ११

लोक संस्कृति

कथा, गीत, गाथा, कहावत, मुहावरा, धर्म, देवी-देवता, त्यौहार, नाट्य, चित्र, मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

संपादक : कोमल कोठारी, विजयदान देथा

अनुक्रम



केदार का कंगन

एक थी बिल्ली। भूख से पीड़ित एक दिन वह एक किसान के घर में घुस पड़ी। अपने पंजे से पिजरे का दरवाजा खोल दही से भरी एक हंडिया लपालप चाटने लगी। पेंदे का दही चाटने के लिए मुंह पूरा अन्दर डाला तो हंडिया मुंह में फंस गई। बहुत कोशिश की तो भी हंडिया से छुटकारा नहीं मिला। आखिर पिजरे से बाहर निकल उसने थंभे से जोर की भिड़ंत की तो हंडिया फूट गई। पर उसका मुंह गले में ही रह गया। उस बिल्ली को कई छल-कपट आते थे। मन में सोचा कि यह बात भी ठीक हुई।

जाते जाते रास्ते में उसे एक मोर मिला। पर वह तो चुपचाप शांति की

देवी बनी अपने रास्ते बढ़ती रही, मोर की तरफ आंख उठाकर भी नहीं देखा। आखिर मोर ने ही पूछा — बिल्ली मौसी, बिल्ली मौसी तू कहां चली ? तब शांति की पुतली उस कपटी बिल्ली ने भक्ति-भाव से उत्तर दिया :

खाना-पीना , जीव-जन्तु सब छोड़े
केदार का कंगन मेरे , गंगा नहाने चली
साथ चले तो चल मेरे भैय्या
एक से दो सदैव ही भले

बिल्ली के गले में केदार का कंगन देख, मोर ने भी उस पर विश्वास कर लिया। उसके साथ गंगा स्नान करने के लिए रवाना हो गया। आगे जाते एक कबूतर मिला। पर बिल्ली ने तो उसकी तरफ आंख उठाकर भी नहीं देखा। चुपचाप शांति की पुतली बनी अपने रास्ते बढ़ती रही। आखिर कबूतर ने ही पूछा—बिल्ली मौसी, बिल्ली मौसी , तू कहां चली ? तब बिल्ली ने भक्ति-भाव से जवाब दिया :

खाना-पीना , जीव-जन्तु सब छोड़े
केदार का कंगन मेरे , गंगा नहाने चली
साथ चले तो चल मेरे भैय्या
एक से तीन सदैव ही भले

बिल्ली के गले में केदार का कंगन देख, कबूतर ने भी उस पर विश्वास कर लिया। गुटरगूं गुटरगूं करता झट उसके साथ गंगा स्नान करने के लिए रवाना हो गया। आगे जाते रास्ते में उसे एक चूहा मिला। पर बिल्ली मौसी ने तो उसकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देखा। चुपचाप अपने रास्ते पर आगे बढ़ती रही। आखिर चूहे ने ही उससे पूछा — बिल्ली मौसी , बिल्ली मौसी तू कहां चली ? तब उसने भक्ति-भाव से उत्तर दिया :

खाना-पीना , जीव-जन्तु सब छोड़े
केदार का कंगन मेरे , गंगा नहाने चली
साथ चले तो चल मेरे भैय्या
एक से चार सदैव ही भले

बिल्ली के गले में केदार का कंगन देख चूहे ने भी उस पर विश्वास कर लिया। कुट कुट करता झट उसके साथ गंगा स्नान करने के लिए रवाना हो गया। आगे जाते रास्ते में एक झोंपड़ी मिली। दिन अस्त होने वाला था। बिल्ली ने उन सबसे कहा — आज रातवासा इसी झोंपड़ी में करलें। अंधेरी

रात में आगे चलना जोखिम का काम है। आज मैं तुम्हें ज्ञान की बातें सुनाऊंगी। फिर हम संगत करेंगे।

बिल्ली के कहने से चारों ने वहीं रातवासा लिया। बिल्ली ने ऊंचे आसन पर बैठ कर काफी देर तक ज्ञान की चर्चा की। हिंसा की बहुत बहुत निंदा की। अहिंसा को ही परम-धर्म बताया। लेकिन उसका मन तो उन्हीं तीनों प्राणियों में ही अटका हुआ था। भूख के मारे उसके प्राण निकल रहे थे। मुंह में पानी भर आया। मन में तो केवल एक ही बात जमी हुई थी कि कब मौका लगे और कब इन्हें खाऊं।

हिंसा को कोसने के बाद उसने कहा — लो, अब संगत करें। मैं कनस्तर बजाऊं और तुम सभी नाचो। यह कहकर बिल्ली धमाधम कनस्तर बजाने लगी। मोर ने छतर किया, कबूतर गुटरगूं करता नाचने लगा और चूहा भी पिछले पांवों पर खड़ा होकर नाचने की कोशिश करने लगा। मोर और कबूतर तो नाच में मगन अपनी चेतना तक बिसरे हुए थे, पर चूहा छक्के-पंजे सावधान था। वह बिल्ली मौसी के लच्छन खूब अच्छी तरह जानता था। अब तक मौसी की आंखों में रंग आ गया था, मुंह में पानी दौड़ने लग गया था। वह कनस्तर बजाते बजाते शिकार की ताक में तीन पांवों पर खड़ी हो गई। एक पैर थोड़ा सा ऊपर कर लिया। चूहा उसकी कारस्तानी समझ गया। नाचते नाचते ही अपने साथियों को सतर्क करते हुए कहने लगा :

छीदा नाचौ बिल तकौ, कुळ री राखौ कांण
मासी बाजौ भूलगी नै ऊ्गी तीन पगां रै पांण

मोर और कबूतर उसके इशारे में समझ गये पर जोर क्या करते? बिल्ली मौसी ताक में खड़ी थी। चूहा बिल खोदने की युक्ति सोच रहा था। बिल्ली ने सोचा कि चूहा तो बना बनाया काम बिगाड़ देगा। किसी न किसी बहाने उनको मारने का उपाय सोचने लगी। मोर की तरफ देखकर कहने लगी — मोर के बच्चे, तूने यह कलंगी किस पर तानी, क्या बिल्ली मौसी को घर में डालेगा।

मोर ने डरते हुए जवाब दिया — बिल्ली मौसी, यह कलंगी तो ईश्वर ने बनाई, मेरा इसमें क्या दोष! तुम तो मां के समान आदरणीय हो, भला तुम्हें घर में डालने की बात सपने में भी कैसे सोच सकता हूं।

बिल्ली ने फिर कबूतर की तरफ देखा, आंखें लाल करके बोली — कबूतर के बच्चे, तूने ये लाल पंज किस पर रंगे, क्या बिल्ली मौसी को घर में डालेगा?

कबूतर ने डरते हुए जवाब दिया — बिल्ली मौसी, ये लाल पंजे तो ईश्वर ने बनाये, मेरा इसमें क्या दोष ? तुम्हें घर में डालने की बात सपने में भी कैसे सोच सकता हूं ? तुम तो मां के समान पूज्य हो ?

ये सवाल-जवाब हुए जितने में चूहे ने आराम से अपना बिल खोद लिया। बिल से मुंह निकाल बिल्ली मौसी की करतूत देखने लगा। इस बार बिल्ली ने उसकी तरफ देखकर गुस्से में कहा — चूहे के बच्चे, तूने ये बांकी मूछें किस पर तानी, क्या बिल्ली मौसी को घर में डालेगा ?

चूहे ने उसे खिझाते हुए जवाब दिया — हां, ये बांकी मूछें तुझ पर ही ताना, तुझे घर में डालकर ही छोड़ूंगा !

चूहा बिल्ली को घर में डाले — यह हिमाकत भरी बात सुनते ही बिल्ली अहिंसा की बात भूल गई। उसे तो यही बहाना चाहिये था। बोली — देखूं कैसे घर में डालता है ? इतना कहकर वह चूहे को खाने के लिए झपटी। पर चूहा उसके पहिले ही बिल में घुस गया। बिल्ली दरवाजे से हटी तो मौका देख कर मोर और कबूतर दोनों झोंपड़ी से बाहर निकल उड़ गये। बिल्ली पीछे झपटी पर वे हाथ नहीं आये। वापस मुंह लटका कर झोंपड़ी में आई। चूहे के बिल पर मुंह करके बोली — अरे, तू मुझ से क्यों डर रहा है ? तू तो मेरा भाञ्जा है। देख, तू इस बिल से उस में चला आये तो गांठ की असली मोहरें दूंगी, समझा !

चूहे ने बिल के भीतर से ही जवाब दिया — समझ गया मौसी, सब समझ गया। बालिश्त भर दूरी का इतना अधिक किराया ? कैसे भरोसा करूं ? मुझे तेरी मोहरें नहीं चाहिये। मुझे क्या छल रही है, मैं तो तेरा ही भाञ्जा हूं !

बिल्ली और चूहे की यह गुफ्तगू हो रही थी कि संयोग की बात एक कुत्ता उस झोंपड़ी में आ गया। कई दिनों का भूखा था। उसने भोंककर उससे पूछा : बिल्ली मौसी, तू अकेली इस जंगल में कैसे आई ? बिल्ली ने डरते डरते वही बात दुहराई :

खाना-पीना, जीव-जन्तु सब छोड़े
केदार का कंगन पहिना, गंगा नहाने चली

कुत्ता बिल्ली के कपट को तुरत पहिचान गया। घुर्राते हुए बोला — गंगा नहाने जा रही है सो अच्छी बात, पर तूने झूठ बोलना कब से सीखा ? मैं तो सच बोलकर ही खाता हूं। किसी के साथ छल-कपट नहीं करता। तूने जीव-जंतु खाना सब छोड़ दिया तो मर तो वैसे ही जायेगी, तब मैं ही तेरी मुक्ति कर दूं। बिल्ली एक कोने में आ गई थी। कुत्ता दरवाजा रोके खड़ा था।

ऐसा बढ़िया मौका देख चूहे ने थोड़ी-सी पूंछ बाहर निकालकर कहा — अब निकालती क्यों नहीं तेरी अस्सी मोहरें ! ज्यादा ही धन हो तो इस कुते को उधार दे दे, यह इसी वक्त ले लेगा।

बिल्ली ने बाहर जाने का विचार किया ही था कि कुत्ते ने लपक कर उसे दांतों में पकड़ लिया। खूब झंझोड़ा। बिल्ली मौसी म्याऊं म्याऊं करती रही और वह उसे चट कर गया। केदार का कंगन नीचे गिर पड़ा। उसे अपने मुंह में दबाकर चूहा अपने ठौर-ठिकाने वापस पहुंचा। मोर और कबूतर को हंडिया का टूटा मुंह बताकर कहने लगा—बिल्ली मौसी ने केदार के इस कंगन को निशानी भेजी है। उसकी तो गंगाजी में नहाते ही मुक्ति हो गई। एक भूखा कुत्ता उसके लिए झोंपड़ी में ही गंगा ले आया था। फिर उसने सफेद दांतों की धवल हंसी हंसते हुए सारी बात सुनाई। दोनों मित्र भी खूब जोर जोर से हंसे। उसके बाद उन्होंने गंगा-स्नान करने का सपने में भी विचार नहीं किया।

अक्ल का बोझ

एक कुम्हार गधे पर नमक का परचूनी व्यापार करता था। रास्ते में एक नदी पड़ती थी। नदी पार करने में गधे की आफत आ जाती थी। एक दिन अनजान में उसका पांव रपट गया। पीठ पर बंधा सारा नमक गलकर बह गया। गधे की मनचाही हो गई। उसके बाद तो गधे ने यही लत अख्तियार करली। नदी आते ही पानी में बैठ जाता। कुम्हार बड़ा हैरान। उसकी इतनी क्या हैसियत कि नित्य इस हानि को बरदाश्त करे। आखिर नमक का व्यापार बंद करना ही पड़ा। एक दिन ऊन का बोरा गधे पर लाद कर लाया। गधे की तो आदत ही वैसी पड़ गई थी। नदी के बीच पानी में बैठ गया। थोड़ी देर आराम से बैठकर खड़ा हुआ। जाने बोझ का तो पर्वत ही ऊपर ढह पड़ा। खड़ा होने के साथ ही धड़ाम से वापस नीचे आ गिरा। मामूली अक्ल के बोझ से उसकी कमर टूट गई। मौत के पहिले उसे मरना पड़ा।

एक था कौआ और एक थी चिड़िया। कौआ था अव्वल दर्जे का आलसी, मन का मैला और कपटी। कमाने-खाने की न तो शक्ति ही थी और न इच्छा ही। हमेशा तकलीफ रहती। चिड़िया थी कमंठ, फुर्ती वाली और हिम्मत वर। सवेरे जल्दी उठती, फूस-बुहारा निकालती, दूध दूहती, चूल्हा-चौका करती, ढोर-डांगरों को चराती और खेती का सारा काम करती। हाथ में लिये काम



आलस्य की पैदावार

को समाप्त करके ही छोड़ती। कौए ने चिड़िया के राखी बांधी; उसे धर्म-बहिन बनाया। साफ भोले मन की चिड़िया अपने भाई का खूब ही मान रखती, पर कौआ उसके साथ कुछ न कुछ बुरा सलूक किये बिना मानता ही नहीं था।

चौमासे के दिन करीब आये तो एक दिन कौए ने चिड़िया से कहा — बहिन, अपन इस साल साझे की खेती करें तो कैसा रहे ?

चिड़िया बोली — साथ धंधा करना तो अच्छी बात है, पर तुम्हें बराबर मेहनत करनी होगी, मेरे साथ साथ सभी काम करने होंगे। खेती केवल जमीन व पानी से ही नहीं होती, पसीने की बूंदों के पुट से हरियाली पैदा होती है। तू मेरा धर्म भाई है, तेरे साथ ही साझे का काम नहीं करूंगी तो किसके साथ करूंगी, पर तू डटकर काम करने की लगन रखना, बाकी मैं संभाल लूंगी।

कौए ने कहा — काम में किसी बात की कसर नहीं रहने दूंगा, तू चिंता ही न कर

जेठ अषाढ़ के महीनों में लूएं चलने लगीं तो चिड़िया ने जाकर देखा, खेत तो झाड़-झंखाड़ों से भरा हुआ। उसने कौए से कहा—चलो, अपन खेत में सूड़-सबाड़ करें। वर्षा तो सिर पर आ गई। कौआ उस वक्त आम के पेड़ पर बैठा था। एक पके हुए आम के चोंच मारता हुआ बोला :

आऊं अे आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा पाका थारै तांई लाऊं

चिड़िया तो अपने कंधे पर तेज धार की कस्सी लेकर अकेली ही सूड़ करने लगी। घाघरे के पायचे टांग दनादन झाड़-झंखाड़ काटने लगी सो सभी पौधों को काट डाला। खेत को हथेली जैसा साफ-सुथरा बना दिया।

सावन लगते ही आकाश में काले काले बादल गर्जन करने लगे। बिजलियां चमाचम करने लगीं। बड़ी बड़ी बूंदों की बरसात हुई। तब चिड़िया ने फिर कौए से कहा—कौए भाई, यों बैठे रहने से नहीं सरेगा, चलो अपन खेत जोतें, बाजरी बोयें।

कौआ तो उसी आम पर बैठा मौज कर रहा था। एक पके हुए आम के चोंच मारकर बोला:

आऊं अे आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा-पाका थारै तांई लाऊं

चिड़िया क्या जवाब देती! खेत ज्यादा सूख गया तो यह मौका हाथ से निकल जायेगा। उसे तो जैसे-तैसे खेती संपन्न करनी थी। एक गाय और एक बैल तो उसके पास थे ही। इधर-उधर से मांग-मूंगकर अपना खेत बो दिया। समय के साथ दाने फूटे, हरियाली ने धरती की कोख से मुंह बाहर निकाला। उगता सूरज आकाश में जिस तरह क्षण क्षण ऊंचा चढ़ता दिखाई देता है, उसी तरह खेत की बाजरी बढ़ने लगी। चिड़िया ने फिर निहोरे किये — कौए भाई अब तो चलो, खेत की निराई करें।

कौआ तो उसी प्रकार आम के पेड़ पर टिका हुआ था। एक पके हुए आम पर चोंच मारता हुआ बोला:

आऊं अे आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा-पाका थारै तांई लाऊं

चिड़िया को तो अपनी हिम्मत व अपनी शक्ति पर पूरा भरोसा था ही। फुर्र से उड़ी सो सारे खेत में निराई कर डाली। सारे खेत को देखते-देखते सुथरा बना दिया। बाजरी घुटने घुटने तक आई तो चिड़िया ने कौए से फिर कहा — कौए भाई, आखिर काम तो करने से ही संपूर्ण होता है। चलो, खेत की हलनी करें। पर कौए को तो बहाना मिला हुआ था। उसी क्षण बोला:

आऊं अे आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा-पाका थारै तांई लाऊं

चिड़िया तो यह सुनते ही वहां से उड़ी सो सारे खेत को इस किनारे से उस किनारे तक हल डाला। कौए के भरोसे काम बिगाड़ा थोड़े ही जा सकता था। बाजरी तो आंखों के सामने देखते देखते बढ़ने लगी। बढ़ते बढ़ते वह सो भीतर चरता ऊंट न दिखे, उतनी बढ़ गई। ऊपर हाथ हाथ भर के लम्बे सिट्टे। मीठे दानों की पकी हुई बाजरी सिट्टों में ऐसी लग रही मानो मोती जड़े हों। चिड़िया ने फिर कौए के पास जाकर कहा —कौए भाई, तूने तो कोई काम ही नहीं किया, फिर कैसी साझे की खेती ? अब तो चलो बाजरी पकने आई, काटें। पर कौआ तो आम के पेड़ से हिला तक नहीं। एक पके आम के चोंच मारता बोला :

आऊं अे आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा पाका थारै तांई लाऊं

चिड़िया ने कोई कौए के भरोसे खेती नहीं की थी। उसे अपनी हिम्मत का पूरा विश्वास था। कौए के इन्कार करते ही वह वहां से फुर्र करती उड़ी सो देखते देखते सारे खेत को कटवा डाला। कटवा कर इकट्ठा करवा लिया। फिर भी उसके बाद वह कौए के पास और गई। बोली — कौए भाई, अब भी चलोगे तो साझे की बाजी रह जायेगी। काम तो सारा मैंने संपन्न करवा लिया, अब तो केवल साझे का नाम रखने के लिए चले चलो। अपने हिस्से की सिट्टियां तो चूंट लो। धर्म भाई को कैसे मना करूं। मैं समझूंगी कि आधा अकाल पड़ गया, चलो फुर्ती करो।

पर कौए ने तो वहां से हिलने का नाम तक नहीं लिया। बैठा रहा। पके आम में चोंच मारता बोला :

आऊं अे आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा-पाका थारै तांई लाऊं

चिड़िया ने तो फिर कोई जिद्द ही नहीं की। भला कौए के भरोसे वह कैसे काम बिगाड़ती ? वहां से उड़ी सो चपक चपक सारी सिट्टियां चूंट डाली। कमर बांधकर डटी सो देखते देखते बुहारे से सारा खलिहान बुहार दिया। खारिये की अलग ढूंगरी दे दी। सिट्टियों का ढेर जमाकर फिर कौए के पास गई। बोली — कौए भाई, अब तो चलो। सिट्टियों को गाहें ! साझे का नाम लेकर तुमने तो इस बार बड़ी आफत कर डाली। धर्म-बहिन के साथ तुम्हें ऐसा धोखा नहीं करना चाहिये।

पर कौआ क्या परवाह करता ! वह तो हिला ही नहीं। पके आम पर

चोंच मारता बोला।

आऊं ओ आऊं, आंबलिया गटकाऊं
दोय च्यार काचा-पाका थारे तांई लाऊं

चिड़िया बेचारी क्या जोर करती। काम छोड़ कौन मगजमारी करे! कौए का जवाब सुन वह तो उड़ी सो देखते देखते सिट्टियों को गाह डाला। घाघरे के पायचे टांक दनादन काम शुरू किया सो एक तो तूंतड़ों का बड़ा ढेर लगा दिया और एक बाजरी की छोटी सी ढेरी दे दी। बाजरी की ढेरी के पास एक गाय बांध दी और तूंतड़ों के बड़े ढेर के पास बैल बांध दिया। फिर वहां से उड़ी। सीधी कौए के पास आई। कौआ तो वहीं मौज कर रहा था। बोली—कौए भाई, अब तो अपना हिस्सा संभालने के लिए तुम्हें चलना पड़ेगा।

हिस्से का नाम सुनते ही कौए ने गर्दन ऊपर उठाकर देखा। आलस्य मरोड़ने के बाद उबासी खाते हुए कहने लगा — चलो बहिन, साझे की खेती के लिए आखिर तो चलना ही पड़ेगा। अकेली बहिन को कब तक तकलीफ दूं। पके हुए आमों पर चार-पांच चोंचें मारने के बाद वहां से उड़ा। चिड़िया उसके पीछे उड़ती रही। उड़ते उड़ते दोनों खलिहान के पास पहुंचे। कौए ने दोनों ढेरों को देखा। बोला — थू थू, बड़ा वाला ढेर मेरा। तब चिड़िया को भी विवश होकर कहना पड़ा — थू थू, छोटी वाली ढेरी मेरी!

जंगी प्रचंड बैल को देखकर चालाक कौए ने उतावली के साथ कहा — थू थू, बड़ी वाली गैय्या मेरी। तब चिड़िया को मजबूरन कहना ही पड़ा — थू थू, छोटी वाली गैय्या मेरी। इतना कहकर वह तो गाय की पीठ पर जाकर जम गई।

वहां से दोनों ही उड़े सो अपनी अलग अलग झोंपड़ियें बनाने लगे। चिड़िया ने तो बनाई घास-फूस की झोंपड़ी और कौए ने बनाई हींग की झोंपड़ी। चिड़िया बाजरी और गाय अपने साथ ले गई। कौआ तूंतड़े और बैल अपने साथे ले गया। चिड़िया दोनों वक्त दुहारी करने लगी। नित्य बिलोवना करती तथा हर रोज बाजरी का खीच पकाती। दूध-दही खाती और मौज मनाती। काम के वक्त आम खाने वाला कौआ बैल के मूत्र में तूंतड़े भिगो-भिगोकर खाता। मुश्किल से अपने दिन तोड़ता। भूख के मारे हरदम चिल्लाता। और उधर मेहनत से खेती करने वाली चिड़िया के आनन्द का पार नहीं था।

एक दिन चिड़िया के आये मेहमान। बघार की खातिर उसके पास हींग नहीं थी। वह उड़ती उड़ती कौए के पास गई। बोली — भैय्या, मुझे बघार

के लिए थोड़ी-सी हींग दे , मेरे घर मेहमान आये हुए बैठे हैं । कौआ तो चिड़िया पर नाराज था ही । बोला—हींग की डली दूं तो मेरी झोंपड़ी में छेद हो जायेंगे । वर्षा के दिनों में यह चूएगी । ऐसा झूठा लिहाज मुझसे नहीं रखा जाता । चिड़िया ने बहुत निहोरे किये तो भी वह नहीं माना सो नहीं माना । आखिर उदास मन चिड़िया अपनी झोंपड़ी में वापस लौट आई । घी व गुड़ से मेहमानों की तीमारदारी की ।

दूसरे साल फिर चौमासा आया तो बड़ी बड़ी बूंदों का मेह बरसा । बूंदों की तड़ातड़ में हींग की झोंपड़ी गलकर बह गई । कौआ पानी में भीगने लगा । बूंदों की मार और उस पर हवा के थपेड़े , अंधड़ की फटकारें । कौआ तो थर-थर कांपने लगा । कांपता कांपता जैसे तैसे चिड़िया की झोंपड़ी के सामने आकर रुका । चोंच से दरवाजा खटखटाया । चिड़िया ने भीतर से ही पूछा — कौन है ? कौआ बोला—यह तो तेरा भाई कौआ । चिड़िया ने फिर पूछा — आज अकस्मात् बहिन को कैसे याद किया ? क्या गरज आ पड़ी ? तब कौए ने रोनी सी आवाज बनाकर कहा—बाहर पानी में भीग रहा हूं , दरवाजा खोल , नहीं तो तेरा भाई मर जायेगा ।

चिड़िया तो सुनते ही समझ गई कि हींग की झोंपड़ी गल गई । बोली—कौए भाई , इतनी जल्दी भूल गया कि तूने मुझे हींग की डली के लिए मना कर दिया था ।

कौआ क्या जवाब देता । यहां तो उस हाथ दे और इस हाथ ले वाली बात हुआ करती है । तो भी बेशर्म की तरह लाचारी करने लगा । चिड़िया को दया आ गई । मन में विचार किया — आखिर है तो धरम का भाई । इसकी नीचता इसके पास , मेरी भलाई मेरे पास । दरवाजा खोला । कौए के लिए ताप किया । तब कहीं कौए की हालत सुधरी । पर चिड़िया के आलस्य कहां , बरसते पानी में भी रवाना हो गई । सिर पर ईंढुनी रखी , बेवड़ा उठाया और बोली : भैय्या , मैं तालाब पर पानी लाने जा रही हूं । तू चूल्हे में फूंक देते रहना , घर का ध्यान रखना ।

पर कौआ क्या खाक ध्यान रखे । उसने तो चिड़िया के बाहर निकलते ही घर की तलाशी लेनी शुरू कर दी । एक हंडिया में खीर थी और एक हंडिया में दही । उसने तो फिर भला-बुरा कुछ भी नहीं सोचा । फटाफट खीर व दही का सफाया कर डाला । चिड़िया के आने की भनक सुनी तो चोंच धोकर चुपचाप चूल्हे के पास बैठ गया । चिड़िया ने बेवड़ा उतारकर देखा तो न हंडिया

में खीर और न दही। पूछा — कौए भाई, मेरी खीर कहां ? कौआ आंख मसलता बोला — पगली कहीं की, मुझे क्या पता ? चूल्हे में फूंक देते मेरी तो एक आंख फूट गई और तुझे खीर की चिंता लगी है।

चिड़िया ने फिर पूछा — बता हंडिया का दही कहां गया, अभी पीछे छोड़कर गई थी ? कौए ने तो वही रटारटाया जवाब दिया—पगली कहीं की, मुझे क्या पता ! चूल्हे में फूंक देते मेरी तो आंख फूट गई और तुझे अपने दही की पड़ी। सुबुक सुबुक करता वह अपनी आंख मसलने लगा।

इस बार चिड़िया को गुस्सा आ गया। एक जलती लकड़ी लेकर बोली : ठहर तेरी आंख अभी फूटी नहीं, मैं फोड़ती हूं। झूठा, दगाबाज कहीं का। यह कहकर उसने सुलगती लकड़ी उसकी आंख पर मारी। सचमुच ही कौए की आंख फूट गई। जोर से चिल्लाया। चिड़िया ने खदेड़कर उसे बाहर निकाल दिया। दरवाजा बंद करके कुंडी लगा दी। कौआ एक आंख से काना बरसात से भीगता रहा। और मेहनत करने वाली चिड़िया अपनी झोंपड़ी में मौज करती रही। गाय का दूध पीती और आनन्द की बंशी बजाती।

छोटे का सम्मान

एक बुढ़िया का गांव के सारे लोग मां मां कहकर आदर किया करते थे। आस-पास के सभी लोग भी उसे मां के नाम से ही संबोधित किया करते थे। हर व्यक्ति के मुंह से बार बार यह आदर-सूचक नाम सुनकर बुढ़िया का अभिमान आकाश को लांघ गया ! उसने सोचा कि सारे जगत की वह मां है तो निश्चित रूप से भगवान भी उसी का ही बेटा होगा। कुछ दिन बाद वह राम को भी संबोधित करती तो कहती — मेरे राम बेटे ! छोटे मनुष्य को जरूरत से ज्यादा आदर मिले तो वह समाज के सभी पूज्य व्यक्तियों को भी अपने से छोटा समझने लगता है।



अनोखा पेड़

एक थी विधवा मां ओर उसके था एक बेटा । खूबसूरत । गोरा । सुहाना । छरहरा । बड़ी बड़ी आंखें । तीखा नाक । मोतियों जैसी धवल बत्तीसी । गुलाबी मसोड़े । लम्बी गर्दन । मीठी बोली । सिर पर काले कजरारे चिकने बालों का जूड़ा । नित्य सवेरे उठते ही मां नजर लगने के डर से सात बार थूकती । काजल निकालती । गालों पर काजल की बिंदियां देती । और भी कई टोने-टोटके करती ।

एक दिन मां ने एकासना किया । बेटे ने सोचा कि एकासना अच्छी चीज होती है, सो मां की देखादेख उसने भी एकासना करने का विचार किया । मां

से कहा — मां, मैं भी एकासना करूंगा। मां ने कहा — नहीं मेरे लाडले, तू एकासना मत कर। भूखे रहने से तेरी सुकोमल काया कुम्हला जायेगी। बेटे ने बीच ही में टोका — तब तू एकासना क्यों करती है? तू तो मुझसे ज्यादा दुबली है। मां ने पुचकारते हुए जवाब दिया — मेरा क्या, मैं तो बचा-खुचा खाती हूं। तेरी सूरत देख देख कर जीती हूं। यह जन्म तो बिगड़ा सो बिगड़ा हीं, अगला सुधारने की फिक्र में हूं।

मां की देखादेख बेटे ने कहा कि मैं भी अगला जन्म सुधारना चाहता हूं। मां ने उसकी बलैय्यां लेते हुए कहा — बेटा, तेरा यह जन्म भी हजार जन्मों के समान है, तू अगले जन्म की चिन्ता न कर।

बेटे को गुलगुले खाने की विकट लालसा थी। एकासने का हठ करते देखा तो मां ने कहा मेरा राजा बेटा, कितना समझदार है। तुझे मोटे गुलगुने बनाकर खिलाऊंगी। इतने अच्छे कि साथ में अंगुलियां न खा जाय तो मुझे कहना।

गुलगुलों का नाम सुनते ही बेटा एकासने की बात भूल गया और गुलगुलों की रट शुरू कर दी। मां ने छोटी कुलड़ी में मालवी गुड़ का घोल बनाया। चूल्हे पर तोते की पांख के समान तिल्ली का तेल चढ़ाया। अपने लाडले बेटे को सात गुलगुले निकाल कर दिये। पुत्र के लिए मानो कुबेर का खजाना ही हाथ लग गया। आंगन में कूदते-फांदते वह छः गुलगुले तो खा गया। एक गुलगुले को जेब में डाल घर से बाहर निकल गया। सीधा तालाब की पाज पर आया हाथों से मिट्टी खोद एक गड्ढा बनाया। फिर उसमें अंजलि अंजलि पानी डाला। गुलगुले को बालिश्त भर गहरा गाड़कर कहने लगा — गुलगुले ए गुलगुले, कल का कल उग आना, नहीं तो वापस खोद-खादकर गोरी गंय्या को खिला दूंगा।

गुलगुने ने तो छोकरे का कहना नहीं टाला, सचमुच ही वह तो कल का कल ही उग आया। छोकरे ने फिर उसे अजलियां भर भर कर पानी पिलाया। बोला — गुलगुले ए गुलगुले, कल का कल टखनों तक उग आना, नहीं तो खोद-खादकर गोरी गंय्या के सामने डाल दूंगा।

दूसरे दिन वह गुलगुला तो टखनों तक ऊंचा उग आया। छोकरा बेहद खुश हुआ। अंजलियां भर भर पानी पिलाया। कहा — गुलगुले ए गुलगुले, कल का कल घुटने तक ऊंचा नहीं बढ़ा तो खोद-खादकर गोरी गंय्या के सामने डाल दूंगा।

गुलगुला तो दूसरे दिन ही घुटने तक ऊंचा बढ़ गया। छोकरे ने खुश

होकर खूब कूद-फांद की। अंजलियां भर भर कर पानी पिलाया। बोला—गुलगुले ए गुलगुले, यदि कल तक तू कमर तक ऊंचा नहीं बढ़ा तो तुझे खोद-खाद कर गोरी गय्या के सामने डाल दूंगा।

गुलगुला तो दूसरे दिन ही कमर तक ऊंचा बढ़ गया। हरा-भरा। गुबंद के समान गोल-मटोल। अंजलियां भर भरकर पानी सींचा। कहा—गुलगुले ए गुलगुले यदि कल तक तू गले तक ऊंचा नहीं बढ़ा तो जड़ों सहित खोद-खादकर गोरी गय्या को चरने के लिए डाल दूंगा।

गुलगुला तो दूसरे दिन ही गले तक ऊंचा बढ गया। हरा-भरा। कोमल। घेर-घुमेर। छोकरे के आनन्द की कोई सीमा नहीं थी। बार बार कूदकर उसने खुशी मनाई। अत्यंत उत्साह के साथ अंजलियां भर भरकर पानी सींचा। कहा—गुलगुले ए गुलगुले, यदि तू कल तक बांस जितना लम्बा नहीं बढ़ा तो तुझे जड़ों सहित खोद-खादकर गोरी गय्या के सामने चरने के लिए डाल दूगा।

छोकरे ने तो सवेरे सवेरे ही तालाब की ओर ततैये मनाये। गुलगुले का वह अनोखा पेड़ तो बांस जितना लम्बा झूल रहा था। चित्र की भांति सुन्दर व आकर्षक। अत्यधिक उत्साह के साथ अंजलियां भर भरकर पानी सींचा। पत्तों का गुच्छा हाथ में पकड़कर बोला—गुलगुले ए गुलगुले, यदि कल तक डाल से डाल नहीं फूटी तो भोथी कुल्हाड़ी से काट-कूटकर गोरी गय्या के सामने डाल दूंगा।

गुलगुले का वह अनोखा पेड़ तो दूसरे दिन ही इतना जंगी हो गया कि छोकरा तो कई बार खुशी में बावला-सा होकर उसके चारों तरफ चक्कर काटता रहा। उसका मन भी हरा हो गया। फिर उसने अंगुलियों से खोद खोदकर घेरा बड़ा बनाया। सारे दिन अंजलिया भर भरकर पानी सींचा। शाम को घर जाते समय कहा—गुलगुले ए गुलगुले, यदि कल तक पत्त से पत्ता नहीं जुड़ा तो तुझे जड़ों सहित खोद खादकर गोरी गय्या के सामने चरने को डाल दूंगा।

दूसरे दिन सचमुच पत्त से पत्ता जुड़ गया। तालाब की शोभा ही बढ़ गई। राहगीर थुथकी डालते। छोकरा तो देखते ही मगन हो गया। फिरकी के समान घूम घूम कर चारों तरफ परिक्रमा दी। पान पान का अवलोकन किया। फिर सारे दिन अंजलियां भर भरकर पानी सींचा। सांझ के समय घर लौटते हुए बोला—गुलगुले ए गुलगुले, यदि कल तक फूल से फूल नहीं जुड़ा तो काट-कूट कर गोरी गय्या के सामने डाल दूंगा।

दूसरे दिन फूल से फूल जुड़ गया। सौरभ से चारों दिशाएं महक उठीं। जो देखता वह हैरान। ऐसा अनोखा पेड़ न तो कभी देखा और न कभी सुना।

छोकरा यह अद्‌भुत नजारा देख इतना खुश हुआ मानो उसे दुनिया का चक्रवर्ती राज्य मिल गया हो। फूल और हरियाली से महकता वह पेड़ ऐसा लग रहा था जैसे कोई सुहाना स्वप्न ही देख रहा हो। छोकरे ने सारे दिन पानी पिलाया। संध्या को लौटते समय कहा — कान खोल कर सुनले यदि कल तक गुलगुले से गुलगुला नहीं जुड़ा तो तेज कुल्हाड़े से छांग-छंग कर तुझे गोरी गैय्या के सामने डाल दूंगा।

सारी रात उसे नींद नहीं आई। पूनम की चांदनी रात थी। वह तो आधी रात ढलने के बाद ही तालाब पर चला आया। मां ने बार बार उत्सुक जिज्ञासा प्रकट की, किन्तु उसने बताया कुछ भी नहीं। केवल इतना ही कहा कि वह सवेरे तक धैर्य रखे, बाद में अपने आप पता चल जायेगा।

दूर से ही गुलगुलों की सौरभ महक उठी। गाय के घी में तले हुए हों : वैसी खुशबू। छोकरे के मुंह में पानी भर आया। गुलगुले से गुलगुला जुड़ा हुआ था। चांदनी रात में चमाचम कर रहे थे। तालाब की शोभा भी हजार गुना बढ़ गई थी। चमचमाते गुलगुलों की ओर देखते देखते छोकरे की गर्दन दुखने लग गई थी। बावले की तरह हतप्रभ-सा हो गया।

सवेरे किरणों का स्पर्श पाते ही गुलगुले तो सोने के समान दमकने लगे। छोकरे का मन ऐसा डुला कि फिर उससे एक पल भर की भी ढील नहीं हुई। बंदर की नाईं वृक्ष पर चढ़ गया। दोनों हाथों से तोड़ तोड़कर गुलगुले खाने लगा। जाने मक्खन और मिश्री ही की डलियां। वह तो सपाक सपाक बिना दांत लगाये ही निगलने लगा। मां ने तो ऐसे गुलगुले कभी नहीं बनाये। तोड़ते ही वापस लग जाते। चार मुस्तंड खायें जितना वह अकेला खा गया। आज दुनिया में उससे बड़ा सुखी और कोई नहीं था।

गले तक तृप्त होने के बाद वह निरंतर डकारें ले रहा था कि इतने में दो मां-बेटियें उस अनोखे पेड़ के नीचे से गुजरीं। मां अत्यधिक बूढ़ी थी। बेटी गुलगुले के पेड़ पर बैठे छोकरे की हम उम्र थी। वैसी ही पतली, छरहरी, गोरी व खूबसूरत।

बुढ़िया कुबड़ी थी। दुहरी कमर। हाथ में लाठी; कूबड़ के धुंबे से तीन हाथ लम्बी। कमर को थोड़ी-सी सीधी करके, आंखों पर हथेली का छज्जा बनाकर पूछा—बेटा, यह कैसा वृक्ष है? सवा सौ वर्षों के करीब पहुंची, देशों भटकी, मैंने ऐसा पेड़ न तो अपनी आंखों देखा और न कभी कानों सुना।

छोकरा गुलगुलों के पेड़ पर बैठा, पांव हिलाते हिलाते ही कहने लगा :

बूढ़ी अम्मा, तूने अभी तक देखा ही क्या है ? यह है गुलगुलों का अनोखा पेड़ ! मेरे हाथों रोपा और मेरे हाथों सींचा हुआ। बुढ़िया ने कहा—वाह रे, मसखरी करने को मैं ही मिली तुझे। गुलगुलों का भी क्या कोई पेड़ हुआ करता है ? उम्र के पहिले ही तेरी बुद्धि तो नहीं सठिया गई। तब छोकरे ने कहा—दिखता नहीं क्या ? बेशुमार गुलगुले ही गुलगुले लटक रहे हैं। बुढ़िया बोली— मुझे ठीक दिखाई नहीं देता, इसीलिए तो पूछा। छोकरे ने बीच ही में टोकते हुए कहा—तुझे नहीं दिखता तो अपनी बेटी से पूछले। इसकी आंखें तो प्यालों जैसी बड़ी बड़ी हैं।

बुढ़िया ने अपने बेटी से पूछा तो उसने कहा कि दिख तो कुछ गुलगुले जैसे ही रहे हैं। बुढ़िया ने मुंह में भर आये पानी को निगलते हुए कहा — बेटा, राम तेरी हजारी उम्र करे। थोड़े गुलगुले हमें भी दे। अकेला अकेला ही खाकर क्या अमर हो जायेगा।

छोकरा आज पूरा पूरा मस्त व उन्मुक्त बना हुआ था। बोला — पेड़ पर लटके गुलगुलों की क्या गिनती ? तू कहे उतने ही तोड़ तोड़कर डाल दूं। इन गुलगुलों की एक खासियत है — जितने तोड़ो उतने ही बढ़ते हैं।

बुढ़िया के सिर पर एक बड़ी खारी थी। भीतर शूलें भरी हुई। लम्बी और तीखी। छोकरे ने कहा — मेरे ठीक नीचे यह खारी रख दे, मैं अभी गुलगुलों से पूरी भर दूं। बुढ़िया टचकारी देते हुए बोली—नहीं बेटा, खारी तो शूलों से भरी हुई है। गुलगुले पड़ने से वे टूट जायेंगे।

छोकरे ने कहा — तो कोई बोरी लेकर आ।

'भला, मेरे पास बोरी कहां ?'

'तो तेरी ओढ़नी का पल्ला बिछा।'

'ओढ़नी चिकनी नहीं हो जायेगी ?'

छोकरे ने गुलगुले तोड़ते हुए कहा — चल हथेली ही नीचे फैला दे। मेरा निशाना अच्छा है, सीधे वहीं डालूंगा। बुढ़िया ने फिर उसी भांति टचकारी देते हुए कहा— नहीं बेटा, गुलगुले काफी गरम लगते हैं, हथेली जल जायेगी।

छोकरे ने थोड़ी-सी नाराजी प्रकट करते हुए कहा— तो फिर इसका तो मैं भी क्या करूं। केवल इन्कार ही इन्कार किये जा रही है, कोई दूसरा जुगाड़ तो नहीं बताती।

बुढ़िया ने अपने काले काले दांत निपोरते हुए कहा— बेटा, दांत कृतघ्न हो सकते है, पर आंत कभी कृतघ्न नहीं हो सकती। मरने के बाद भी मेरी

आंतें तुझे आशिष देती रहेंगी। तेरे साफे के पल्ले में बांध कर गुलगुले नीचे लटका दे, ईश्वर तेरा भला करे।

कहते ही छोकरा मान गया। गुलगुलों के पेड़ पर बैठा वह इन छोटी-मोटी बातों की क्या परवाह करता! काफी सारे गुलगुले एक पल्ले से बांधकर उसने साफा नीचे लटका दिया। दूसरे पल्ले से हाथ को मजबूती से बांध लिया।

बुढ़िया ने लटकते पल्ले को अच्छी तरह पकड़, एक जोर का झटका दिया सो वह छोकरा तो अनचीते झटके के साथ ही नीचे आ गिरा। गिरते ही होश आने के पहिले दोनों मां-बेटियों ने उसे उठाकर खारी के भीतर पटक दिया। बुढ़िया ने खुद अपने सिर पर खारी को उठाया। छोकरे को होश आते ही वह चिल्लाया। रोम रोम में तीखी शूलें चुभ गई थीं। बहुत ही निहोरे किये पर बुढ़िया नहीं मानी। दांत पीसती हुई बोली—चिल्लाना बंद करता है या नहीं, अन्यथा कच्चे ही को चबा जाऊंगी। जानता है मैं कौन हूं? डायन हूं डायन!

छोकरे ने रोना बंद करते हुए कहा—तू कह रही थी कि दांत कृतघ्न हो सकते हैं, लेकिन आंत कृतघ्न नहीं हो सकती। मैंने गुलगुले दिये जिनका यह बदला चुका रही है!

बुढ़िया ने दांत पीसते हुए कहा—तू भी चंडाल कम नहीं है! तेरे गुलगुलों के तो अभी दांत भी नहीं लगाया, फिर पेट की आंत क्या कृतघ्नता प्रकट कर सकती है! पर यह पेड़ तेरे बाप का नहीं है। मेरी इच्छा होगी जितने गुलगुले खाऊंगी, तू मना करने वाला कौन होता है?

छोकरे ने भी समझ लिया कि अब मुंह का थूक उछालना बेकार है। मौके पर बचाव का कोई न कोई उपाय अपने आप ही सूझ जायेगा।

छोकरे ने कहा—मुझे खाने से तेरी आंतें प्रसन्न होती हैं तो अच्छी बात। मरकर जलने से किसी मनुष्य का भोजन बनना कहीं श्रेष्ठ है। मुझे तो गुरु-महाराज यही शिक्षा दिया करते थे। छोकरे की बातें सुनकर बुढ़िया भी काफी-कुछ निश्चित-सी हो गई। खुश होकर बोली— बड़े बढ़िया गुरु हैं रे तेरे! सीख तो बहुत ही उम्दा दी।

छोकरे की निडरता से वह काफी खुश हुई। नहीं डरने वालों के गोश्त का जायका ही दूसरा होता है। डरने वालों का मांस फीका व रूखा हो जाता है। आज मां-बेटियों के कई दिनों से मनुष्य का मांस हाथ लगेगा। मां-बेटी की बात-चीत से शूलों पर सोये लड़के को इस बात की भनक हो गई कि वे किसी तालाब के पास होकर गुज़र रही हैं। उसने कहा डायन मां, मुझे जोर की प्यास

लगी। शरीर का खून तक उड़ रहा है।

डायन ने बेटी की तरफ देखकर कहा — यह बात भी ठीक हुई। आगे चलकर कहता तो चक्कर पड़ता। वह तो छोकरे को उठाये उठाये सम्राट पाज पर चढ़ गई। पानी के किनारे खारी उतार कर बोली — पी ले, जी भर कर पी ले। ऐसा निर्मल ठंडा पानी तूने कभी नहीं पिया होगा। छोकरे ने कहा — शूलों की वजह से उठा नहीं जाता, तुम लाकर पिला दो।। बुढ़िया लाठी पटक गुस्से में दांत पीसती हुई बोली — बदमाश, उल्टा हम पर ही ठोर जतला रहा है। उठ, खुद अपने हाथ से पी ले, नहीं तो बस! हमारे भरोसे तो प्यासा ही मर जायेगा।

डायन और बेटी ने हाथ पकड़ उसको खड़ा किया। शूलें ठौड़ ठौड़ गड़ी हुईं। पर छोकरे ने नाक में सलवट ही नहीं डाली। चुपचाप पानी पीने के लिए अन्दर घुसा सो घुसता ही गया। गले तक पानी आते ही डुबकी लगाकर अदृष्ट हो गया। बेटी ने मां से शिकायत की तो उसने आवाज देकर जोर से कहा : देख, गुलगुलों वाले छोकरे, मान जा, मुझ जैसा बुरा नहीं होगा।

बुढ़िया चिल्लाती रही और वह परले किनारे तैरता निकल गया। तालाब काफी लम्बा-चौड़ा था। बाहर निकलते ही वह तो नौ दो ग्यारह हुआ। बुढ़िया आवाज लगाती रही और वह तो सीधा गुलगुलों के पेड़ पर पहुंचा। कुछ देर तक बिसाई खाने के बाद वह तो फिर गुलगुले खाने लग गया।

डायन ने सूंघ कर पता लगा लिया कि वह तो वापस उसी पेड़ पर बैठा मीठे मीठे गुलगुले मजे से खा रहा है। बेटी को घर भेज दिया और वह खुद भेष बदल कर उसी पेड़ के नीचे से होकर गुजरी। बुढ़ापे और कूबड़ में तो कोई फर्क नहीं पड़ा पर शक्ल व बोली उसने काफी बदल डाली। उसी भांति ऊंचा मुंह करके ललाट पर हथेली का छज्जा बना कर पूछा — बेटा, यह ऐसा नया पेड़ क्या है? मैं तो इतनी बड़ी हुई, पर ऐसा वृक्ष अभी तक नहीं देखा।

छोकरा कड़क कर बोला — आंखें फूटी हुई हैं क्या? दिखता नहीं, यह गुलगुलों का पेड़ है। बुढ़िया बोली — आंखो से दिखे तो भी क्या हो? गुलगुलों का पेड़ तो ईश्वर ने भी नहीं देखा होगा। दो चार चखाये तो विश्वास हो।

छोकरे ने गुस्सा प्रकट करते हुए कहा — शैतान डायन, तेरा काला मुंह कर यहां से! अब तेरे झांसे में नहीं आऊंगा। मेरे मांस वगैर गोबर न खा ले!

बुढ़िया अनजान-सी बनकर कानों में अंगुलियां डाल कर कहने लगी — राम,

राग, बेटा तू यह क्या कह रहा है ? मैं तो इस तालाब के किनारे ही आज आई। बकरी की खोज में इधर आ निकली। तू कहे तो यहीं से लौट जाऊं। इस तरह अंट-शंट तो न बोल।

छोकरे ने टकटकी लगाकर देखा। कंधे पर पानी से भरी दीवड़ी लटक रही थी। सूरत भी दूसरी। कुबड़ी तो कई हुआ करती हैं। थोड़ा धीमा पड़कर बोला—वह डायन बिलकुल तेरे जैसी ही थी। बुढ़िया मुस्कुराकर बोली : बेटा, तू तो बिलकुल बच्चों की सी बातें कर रहा है। मेरे रेवड़ की भेड़ें सभी दिखने में एक जैसी दिखती हैं, पर वास्तव में सभी के पिंड अलग अलग हैं। गालियां क्यों निकालता है, तेरी इच्छा न हो तो अपने रास्ते चली जाऊं। बकरी न मिली तो न सही। यह कहकर वह बुढ़िया टरक टरक आगे बढ़ने लगी। तब छोकरे को विश्वास हो गया कि यह पहिले वाली डायन नहीं है। आवाज दी : दादी-अम्मा, तू जा मत, गुलगुलों की क्या कमी। जितनी इच्छा हो खा।

बुढ़िया ने साफ सुन लिया तो भी वह आगे ही बढ़ती रही। छोकरे ने फिर आवाज दी, तब कहीं वापस मुड़ी। छोकरे ने कहा—पहिचानने में भूल हो गई। उस डायन ने मुझसे बहुत बुरी बिताई थी, जिससे गुस्सा आ गया। दीवड़ी का मुंह खोल, अभी गुलगुलों से भर दूं।

'मुंह छोटा बहुत है, गुलगुले बाहर गिर जायेंगे।'

छोकरे ने अभिमान करते हुए कहा — मेरा निशाना अचूक है, एक भी बाहर नहीं गिरने दूंगा। मुंह कितना ही छोटा क्यों न हो, गुलगुलों से तो बड़ा ही है।

बुढ़िया ने कहा —दीवड़ी में गिरने से तो मेरा पानी चिकना हो जायेगा।

'तो पल्ला बिछा।'

'ओढ़नी बिलकुल घिस चुकी है, गुलगुले पड़ते ही फट जायेगी।'

'तो हथेली नीचे कर।'

'गुलगुले गरम बहुत हैं। मेरा हाथ जल जायेगा।'

'मेरी तरह ऊपर चढ़कर खा ले।'

बुढ़िया हंसकर कहने लगी—तेरी उम्र में चांद पकड़ने का हौसला रखती थी, पर अब तो देहरी भी नहीं लांघी जाती। तूने वृक्ष पर चढ़ने की बात अच्छी कही! मजाक करने को मैं ही मिली तुझे!

छोकरा धीमा पड़कर बोला — तब मैं भी क्या करूं ? केवल इन्कार ही इन्कार करती है, कोई उपाय भी तो बता। बुढ़िया ने उपाय बताया—साफे

के पल्ले बांधकर नीचे लटका दे, यदि सच्चे मन से गुलगुले खिलाना चाहता हो तो।

छोकरे ने फिर कोई ढील नहीं की। ढेर सारे गुलगुले पल्ले से बांध साफा नीचे लटका दिया। साफे की गांठ खोलते खोलते बुढ़िया ने अनचीता एक ऐसा झटका दिया कि छोकरा तो झटके के साथ ही धड़ाम से नीचे आ गिरा। होश आने के पहिले पहिले बुढ़िया ने उसे दीवड़ी में बंदकर, जोर से मुंह बांध दिया। कंधे पर लटकाये वह तो सरपट घर की ओर भागी। घर आते ही उसने दरवाजा बंद करके कुंडी लगा दी। जूड़ा खींचकर छोकरे को दीवड़ी से बाहर निकाला। डायन ने कड़क कर कहा — प्यास का बहाना करके दौड़ गया। बोल अब कहां जायेगा ? कुछ देर तक धीरज रख, अभी ऐसा पानी पिलाऊंगी कि उम्र भर ही प्यास नहीं लगेगी। छोकरे पर पूरा गुस्सा झाड़, फिर डायन ने अपनी बेटी को समझाया कि वह गुलगुले वाले छोकरे को ओखली में बारीक कूट कर मसालों में पका डाले। वह कलाल की हाट से हंडिया भरकर शराब लाने जा रही है। आज ही कई दिनों से यह बढ़िया मौका मिला।

कलाल की हाट पांच कोस दूर थी। बुढ़िया तो लाठी लिए धब-धब रवाना हो गई। बुढ़िया के जाने पर गुलगुलों वाला छोकरा बेहद खुश होकर हंसने लगा सो काफी देर तक हंसता रहा। डायन की बेटी असमंजस में पड़ गई कि यह पगला मरने के समय इस तरह हंस क्यों रहा है। छोकरी उसके मुंह की तरफ देखने लगी — मोती जैसे दमकते दांत। भंवरों जैसे काले बाल। नजर फिसले जैसे चिकने। डायन की बेटी के दांत एकदम पीले थे। उसके बाल भी रूखे और छोटे थे। बहुत कोशिश की पर न तो दांत उजले हुए और न बाल चिकने व काले। उसे छोकरे से ईर्ष्या हुई। पास आकर पूछा — तेरे दांत इतने उजले कैसे ? और बाल इतने काले व चिकने कैसे ?

छोकरे ने हंसते हंसते ही कहा — अभी क्या हुआ, दांत तो और उजले होंगे और बाल और भी अधिक काले होंगे। मेरी मां हमेशा यही टोटका करती है। तेरी मां और मेरी मां दोनों का एक ही स्वभाव है। यदि वह हर रोज मेरा सिर ओखली में डाल कर मूसल से नहीं कूटती तो मेरे दांत इतने उजले थोड़े ही होते और न मेरे बाल ही इतने काले होते। पहिले मेरे दांत तुझसे ज्यादा पीले थे। बाल तो जैसे नारियल की जटा ही हों।

छोकरी ने अचरज से पूछा — क्या बात करता है ? तेरे दांत मेरे दांतों से भी ज्यादा पीले थे......!

छोकरा बीच ही में बोला — हां हां, बहुत ज्यादा पीले थे। नहीं तो क्या

मैं झूठ बोल रहा हूं ? छोकरी उतावली करते हुए बोली — तो फिर देर किस बात की। तू मेरे लिए भी यह टोटका कर दे।

छोकरे ने कहा — मैं औरत के और तू मर्द के कपड़े न पहिने तब तक यह अनुष्ठान नहीं हो सकता। डायन की बेटी ने सहज भाव से कहा — तो इस में इतना सोचने की क्या बात ? तू मेरे कपड़े पहिन ले और मैं तेरे पहिन लूं।

छोकरे ने इस बात को इतना आसान नहीं जाना था। छोकरी ने तो दांत और बालों के लोभ में फटाफट कपड़े बदल लिये। अपना सारा गहना भी उसे पहिना दिया। फिर छोकरे ने कहा — मेरा सिर भी गूंथना पड़ेगा। डायन की बेटी ने तंग आकर कहा — तू तो नखरेबाज भी कम नहीं। चल जल्दी कर। नीचे तो बैठ, अभी सिर गूंथ देती हूं।

वह सिर गूंथने बैठी। रेशम के समान नरम व चिकने बाल। सब्र रखने के लिए छोकरी की खातिर एक एक पल भारी हो रहा था। जल्दी जल्दी में सिर गूंथकर मांग निकाल दी। फिर उसका मुंह देखकर बोली — मां तो क्या, मैं भी नहीं पहिचान सकती कि तू उसकी बेटी नहीं है। दांत और बाल एक जैसे हो जांय तो किसे भी पता न पड़े कि तू कौन और मैं कौन ?

उसके बाद वह दौड़कर मूसल लाई। छोकरे के हाथ में थमाकर उसने अपने आप ही ओखली में सिर डाल दिया। फिर छोकरा क्यों ढील करने लगा। ऐसा बढ़िया मौका मिलते ही उसने तो सिर के बीचोबीच जोर से मूसल की ठरकाई कि एक चीत्कार के साथ ही छोकरी का प्राणांत हो गया। डायन शराब की हंडिया लेकर आई उसके पहिले ही कूट-काट कर मांस की हंडिया चढ़ा दी। भरपूर मसाला और घी डाल दिया।

डायन कुछ तो कलाल के घर से ही धत्त होकर आई थी, और कुछ घर आकर पानी की नाईं आधी हंडिया खाली कर दी। नशे में झूमने लगी। गुनगुनाने लगी। अचानक याद आते ही बेटी से पूछा — उस नालायक का गोश्त सीझ गया क्या ? बेटी के हां भरते ही मां तो कुंडा लेकर बैठ गई। अटकती अटकती भारी स्वर में कहने लगी — पूरे दो कुंडे खाऊंगी। कई दिनों से आज पेट की सलवटें निकलेंगी।

बेटी ने हंडिया औंधी करके मां का कुंडा पूरा भर दिया। मां तो गरम गरम ही खाने लगी सो देखते देखते सारा मांस चट कर गई। दूसरा कुंडा खाने लगी तो पालतू बिल्ली पास आकर कहने लगी :

हाय रे हाय, मां बेटी नै खाय,
थोड़ी बोटियां म्हनै ई चखाय।

पर मां तो नशे में बेसुध-सी हो गई थी। बिल्ली की बात को सुना तो भी समझा नहीं।

खाते खाते चिट्टू अंगुली सामने आई। चार अंगुल बड़ा नाखून। मां असमंजस में पड़ गई। यह नाखून तो उसकी बेटी का! पर बेटी तो सामने खड़ी खड़ी खाना परोस रही है। शायद उस छोकरे के भी ऐसा ही नाखून हो। मां तो मांस खाकर वहीं लुढ़क गई। आधी रात के समय बेटी को जगाकर कहने लगी कि सवेरे उसके ससुराल वाले आयेंगे। यदि वह देर से भी उठे तो उनके आदर-सत्कार में किसी बात की कमी नहीं रहे। भले वह डायन ही क्यों न हो, बेटी के भले की बात वह नींद में भी नहीं भूल सकती।

सवेरे सचमुच ही बेटी के ससुराल वाले आये। रात को ही विदा कर दी। बेटी के बिछुड़ने पर डायन का गला भी रुंध गया। वह चुपके चुपके काफी रोई।

रास्ते में दुलहन ने टचकारी दी तो गाड़ीवान ने गाड़ी रोकी। दुलहन चुपचाप गाड़ी से नीचे उतरी। आगे बढ़ी। किसी ने कुछ भी नहीं पूछा। पूछे जैसी बात भी नहीं थी। किन्तु जब दुलहन काफी देर तक वापस नहीं आई तो ससुराल वालों के खलबली मची। इधर उधर चारों तरफ खोजबीन शुरू हुई। आखिर खोजते खोजते कैर की एक झाड़ी के पास दुलहन के कपड़-लत्ते मिले। पर दुलहन कहीं भी नजर नहीं आई। क्या जोर करते। सवेरे पांच-सात बुजुर्ग दैत्य वापस मां के घर आये। पूछा कि दुलहन वापस तो नहीं आई।

बुढ़िया ने खीझते हुए कहा—नालायकों, तुम मुझसे क्या पूछ रहे हो? मैंने तो अपने हाथों सीख देकर बिटिया को तुम्हारे साथ भेजा था, कहीं मार तो नहीं डाला।

बुढ़िया के कानों ने जब अपने ही मुंह की यह बात सुनी तो उसकी देह में झनझनाहट सी संचरित हो गई। नशा उतरते ही रातवाली सारी बात समझ में आ गई। चिट्टी अंगुली का नाखून तो जैसे मां की आंखों में चुभने लगा। वाकई, वह अंगुली बेटी की ही थी। चंडाल, मां को बेटी का मांस खिलाकर खुद दौड़ गया।

डायन को उबकाई-सी आने लगी। गुलगुले वाले छोकरे को न खाये तब तक उसके कलेजे में सुलगती आंच शीतल नहीं हो सकती। अहमक, दुबारा फिर छल कर गया, साथ ही बेटी को मार डाला। डायन को पूरा विश्वास था कि छोकरा

गुलगुलों का वृक्ष छोड़ अन्यत्र कहीं नहीं जायेगा। थोड़ा बहुत भेष बदल, दोनों हाथों में लाठियां थमा वह तो सीधी वहीं पहुंची। दुष्ट मजे में बैठा गुलगुले खा रहा था। नीचे से गुजरते समय बुढ़िया ने उस अनोखे पेड़ की तरफ देखा। कुछ समझ में नहीं आया तो पूछा — बेटा, यह कैसा अजीब पेड़ है? आंखों देखना तो दूर की बात, मैंने तो सुना तक नहीं।

छोकरे ने क्रोध को दबाकर मीठे स्वर में कहा—मां, यह तो गुलगुलों का पेड़ है। बुढ़िया टकटक देखती हुई बोली — तो क्या इसके गुलगुले लगते हैं?

'हां मां, गुलगुले भी कोई ऐसे-वैसे नहीं, गाय के घी में तले हुए। तेरी इच्छा हो जितने खा। ये तोड़ने पर भी बढ़ते हैं।'

बुढ़िया ने कहा — बेटा, ईश्वर तेरी हजारी उम्र करे। मैंने तो गुलगुलों का केवल नाम ही सुना, चखे तक नहीं। हमेशा बीस गुलगुले खिलाये तो तेरे नाम की ही माला जपूं।

छोकरे ने कहा — बीस की क्या कही, तेरी इच्छा हो तो हमेशा हजार गुलगुले खा, तुझे मना थोड़े ही है। बुढ़िया ने कहा—ना ना, मुझे हजार नहीं चाहिये, बीस ही काफी। अधिक लोभ क्या काम का। छोकरे की नजर बुढ़िया के कंधे पर लटकती झोली पर पड़ी। कहा—ले तेरी झोली मांड। पूरी भर दूं।

बुढ़िया अटकती अटकती बोली — ना बेटा, मेरी अछूती झोली चिकनी हो जायेगी।

'तो ओढ़नी का पल्ला बिछा।'

'ओढ़नी मैली है, गुलगुले मंदे हो जायेंगे।'

'तो फिर हथेली मांड।'

बुढ़िया ने डरते डरते कहा—गुलगुले गरम हैं, मेरी हथेली जल जायेगी। छाले पड़ जायेंगे।

छोकरा तो बुढ़िया के सब लच्छन जानता था, तो भी अनजान-सा बन कर पूछने लगा — यह भी नहीं, वह भी नहीं, फिर गुलगुले कैसे खायेगी?

डायन ने सोचा कि यह मूर्ख छोकरा तो जानकर ही फस रहा है। इस बार छूट जाये तो जानूं। झट बोली — बेटा, यदि गुलगुले ही खिलाने हों तो साफे के पल्ले में बांधकर लटका दे। मैं अपने आप खोलकर इनका स्वाद चख लूंगी। अच्छे हुए तो तेरे खूब बिक्री कराऊंगी। छोकरे ने कहा — मां, तेरी आशिष से बढ़कर साफा थोड़ा ही है। बिलकुल नीचे खड़ी हो जा। पके पके गुलगुले तोड़ कर अभी खिलाता हूं। छोकरे का इतना कहना हुआ और वह बुढ़िया दोनों

लाठियां टिकाती टिकाती बिलकुल नीचे आकर खड़ी हो गई। छोकरा तो उसे गुलगुले खिलाने के लिए तैयार था ही। जोर से बोला—ले री अम्मा, ले!

बुढ़िया तो उससे ज्यादा तेज निकली। दुगने जोर से बोली — ला बेटा ला! और 'ला' के साथ ही पेड़ की डाल से पत्थर की बड़ी पट्टी सरकी सो डायन का कचूमर निकल गया। मुंह से आवाज तक नहीं निकली। नीचे उतर कर छोकरे ने फिर उसका रहा-सहा कचूमर निकाल डाला। घसीटकर दूर एक गड्ढे में फेंक दिया। हाथ धोकर वापस पेड़ पर चढ़ गया।

थोड़ी देर बाद छोकरे की मां वहां आई। बेटे को पेड़ पर बैठा देख बेहद खुश हुई। बोली—अरे बन्दर, तू यहां बैठा मौज कर रहा है और मेरे पांवों में खोजते खोजते पानी पड़ गया! समय पर रोटी तो खा लिया कर।

बेटा चाल भरकर गुलगुले लाया। बोला—घी के ऐसे उम्दा गुलगुले छोड़ रूखे टुकड़े किसे अच्छे लगते हैं? अब तुझे खाना पकाने की भी जरूरत नहीं। देख, तेरे लाडले ने गुलगुलों का कैसा अनोखा पेड़ लगाया।

मा ने अचरज भरे स्वर में कहा — धत्त पगले, गुलगुलों के कभी वृक्ष हुआ करते हैं क्या? तब मां के मुंह में एक गरम गरम गुलगुला देकर बेटे ने कहा—मां के हाथ से बने गुलगुलों की होड़ तो नहीं हो सकती, पर बेटे के हाथों रुपे वृक्ष के ये गुलगुले भी एकदम खराब तो नहीं हैं।

गुलगुला खाते खाते ही मां बोली—अरे, ऐसे मीठे गुलगुले तो मैंने आज दिन तक नहीं खाये।

उसके बाद दोनों मां-बेटे हमेशा धाप धापकर गुलगुले खाने लगे। सारे गांव वालों को भी खिलाते। ज्यों खिलाते त्यों बढ़ते। ऐसा था गुलगुलों का वह अनोखा पेड़!

पशु कथाएं

स्टिथ थॉमसन

[लोक कथाओं के विषय पर चिन्तन मनन करने के लिए एक ओर जहां अत्यन्त सीमित दायरे को चुनना आवश्यक है, वहीं उसकी महत्ता, गंभीरता और विश्व-जनीनता को समझने के लिए मनुष्य मात्र के देश-विदेश की राहें लेनी पड़ती हैं। सीमित दायरे में कथा-संग्रह का कार्य लेना पड़ता है और विश्व की विभिन्न संस्कृतियों के परिप्रेक्ष्य में उनका मूल्यांकन करना पड़ता है। लोक कथाओं के प्रति इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है तो निश्चय मानिये कि वह अध्ययन हमें कहीं भी नहीं ले जा सकेगा। इसी समग्रता के दृष्टिकोण को सामने रखते हुए, हम इस अंक में विश्व के प्रसिद्ध विद्वान स्टिथ थॉमसन की पुस्तक 'द फोकटेल' से पशु कथाओं संबंधी पूर्ण अंश का अविकल अनुवाद प्रस्तुत कर रहे हैं।

लोक संस्कृति के पाठकों के हाथ इन्हीं महीनों में हम राजस्थान की कुछ पशु-पक्षी संबंधी कथाएं भी प्रस्तुत कर रहें हैं। इन कथाओं के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व और विवेचन-विश्लेषण के क्षेत्र में क्या स्थान होगा, उसकी कल्पना इस लेख के माध्यम से की जा सकती है।

विश्व लोक साहित्य के अध्येता एक स्वर से स्वीकार करते हैं कि भारत ही एक ऐसा देश है जहां हमें लोक कथाओं के अमूर्त और अदृष्ट उद्गम के संकेत मिलते हैं। प्राचीन लिखित साहित्य की निधि के बल पर ही यदि यह विश्व-मान्य तथ्य उभर कर सामने आया है तो हम भारतवासी इस बात को भी अच्छी तरह जानते हैं कि लोक कथाओं का शतांश भी अभी अध्येताओं के समक्ष नहीं पहुंच पाया है। वाणी और स्मृति के सहारे जो कथा-वल्लरी भारतीय समाज के

विराट वट वृक्ष पर छाई हुई है — उसके अगणित पुष्पों को तो आज भी पहिचानना और गिनना असंभव बना हुआ है।

स्टिथ थॉमसन जैसे विद्वान के प्रस्तुत लेख से यही तथ्य व सत्य और भी तिक्त बनकर हमारे सामने प्रस्तुत हो जाता है। लोक कथाओं के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए जिन पद्धतियों का सृजन हो चुका है और जो मनुष्य के सूक्ष्मतम मानस की गठन-प्रक्रिया को निस्संदेह आलोकित कर सकती हैं, उन कठिन एवं दुर्घर्ष पद्धतियों का सहारा अभी हमने नहीं लिया है। हमारे सामने आत्म मोह, आत्म प्रशसा और आत्म प्रवंचना का पाखड ही सर्वोपरि बना हुआ है। इन सभी जंजालों के पार जाने के लिए और अपने अध्ययन के क्षितिज को विस्तीर्ण बनाने के लिए ही इस लेख को प्रकाशित कर रहे हैं। निश्चय है कि इस लेख की सभी स्थापनाओं के पीछे ऐतिहासिक एवं भौगोलिक तत्वों की वर्तमान जानकारी है और इस जानकारी का दायरा कभी भी सीमित नहीं होगा।

भारत के एक छोटे से क्षेत्र राजस्थान और राजस्थात के छोटे से गांव बोरूंदा मे बैठकर जितनी कथाएं हम संग्रहीत कर सके (जो समुद्र में बूद के बराबर भी नहीं हैं), वे कथाएं या उतनी ही कथाएं भी प्रस्तुत लेख की रूपरेखा मे विभिन्न रग देने की क्षमता रखती हैं।

राजस्थान के लोक कथा साहित्य के अध्येताओं को निमंत्रण है कि वे विशिष्ट पद्धति के अनुशासन में राजस्थानी कथाओं का भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करें और इस पत्र के माध्यम से इस पवित्र ज्ञानार्जन के कार्य में सहयोग देवें। —संपादक]

अतीत की ही भांति आज के लोक कथा कहने वालों और पाश्चात्य सस्कृति से लेकर आदिमतम जाति के लोगों के लिए मनुष्य एवं पशु की दुनिया पृथक पृथक नहीं है। सारी दुनिया के सभी हिस्सों मे ऐसी अनेक कथाएं मिलती है जिनमें यह कह पाना बहुत मुश्किल है कि कौनसा पात्र वास्तव में मनुष्य है और कौनसा पशु। यही अनिश्चियात्मक स्थिति उन धर्म-सापेक्ष कथाओं मे भी मिलती हैं जिन्हें पुरा-कथाओं के नाम से अभिहित किया जाता है। इन कथाओं में अनेक देवी देवता एक बार मनुष्य के रूप मे आते हैं तो दूसरी बार पशु के रूप मे अवतरित मिल जाते हैं। अत: जिन लोगों के आख्यानों में मुख्य पात्रों संबंधी ऐसी संदिग्धावस्था प्राप्त होती है और विशेषकर उन आख्यानों में जिनका पुरा-कथाओं से भी कम महत्व होता है, वहां शुद्ध

मानवीय क्रिया-कलापों में पशु-पात्रों को ले आना अवश्यंभावी ही मान लेना चाहिये। अनेक बार लोक परम्परा पशु-पात्रों के चयन में अत्यंत सावधानी बरतती है और पशुओं की वृत्ति के अनुकूल ही मानवोचित कार्यों का आरोपण करती है। अतः भालू मूर्ख है, लोमड़ी चालाक है, खरगोश तेज और धूर्त है। लेकिन सभी पशु-पक्षी संबंधी कथाओं की रचनाओं में ऐसी आशा करना व्यर्थ है क्योंकि अनेक बार धार्मिक संसर्ग, विश्वास एवं असावधानी के कारण पशुओं पर ऐसे चारित्रिक गुण भी आरोपित कर दिये जाते हैं जो बिल्कुल सही नहीं होते। साथ ही साथ लंबी परम्पराओं के कारण भी एक विशिष्ट पशु का चरित्र पूर्णतया बदल भी जाता है। यूरोप की चालाक लोमड़ी अपनी कथा यात्रा में अफ्रीका से होते हुए जोर्जिया तक पहुंच कर मूर्खता का प्रतीक बन गई जो खरगोश की चालाकी के कारण उसे अपनी पीठ पर बिठा-कर चलने पर मजबूर हो जाती है।

पाश्चात्य देशों की परम्परा में प्रचलित पशु कथाओं के मुख्य चार स्रोत ज्ञात होते हैं: १. भारतीय साहित्यिक तंत्राख्यान (पशु-पक्षी कथाएं–फेबल) २. ईसप की कथाएं जो मुख्य-तया मध्ययुग के प्रारंभ में विकसित हुई ३. मध्य-युग की वे साहित्यिक पशु-कथाएं जो रेनॉर्ड 'द फोक्स के व्यूह के साथ एकत्रित हुई; एवं ४. पशु कथाओं की विशुद्ध मौखिक परम्परा जो मुख्यतया रूस एवं बाल्टिक राज्यों में विकसित हुई। इन चारों ही स्रोतों के अन्तर्संबंध एवं प्रभाव आपस में इस प्रकार गुथे हुए हैं कि किसी एक पशु कथा के इतिहास को लिख पाना अत्यंत दुश्कर कार्य बन गया है। लेकिन एक बात निश्चय रूप से कही जा सकती है कि अनेक साहित्यिक पशु कथाएं, विशेषकर वे जिन्हें केवल कहा जाता है और जिनका धरातल हर प्रकार से साहित्यिक हो रहा है, वे कथाएं कभी किसी समाज में लोक वार्ता का भाग नहीं बन सकीं। ऐसी कथाओं के समुचित अध्ययन के लिये इतिहासकार को प्राचीन साहित्य एवं कथाओं के ग्रंथों से ही सामग्री एकत्रित करनी पड़ेगी। लेकिन ल' रोमन द' रेनार्ट जैसे कथा के सग्रहों में संग्रहीत अनेक साहित्यिक फेबल्स एवं पशु कथाएं येन-केन-प्रकारेण अ-साक्षर कथा कहने वालों ने सीखली हैं और अपने तत्व रूप में प्रामाणिक लोक परम्परा का भाग भी बन चुकी हैं।

यूरोप एवं एशिया की मौखिक लोक कथाओं के अध्ययन के उद्देश्य से हम केवल उन्हीं पशु कथाओं को अपने सामने रखना चाहेंगे जिनको कि निश्चित रूप से लोक कथाओं की श्रेणी में स्थान मिल गया है।

अ. साहित्यिक फेबल

भारत एवं यूनान की साहित्यिक परम्परा से प्राप्त लगभग पांच सौ या छह सौ फेबल्स में से पचास से भी कम कथाएं मौखिक कथा कहने वालों से रेकॉर्ड की गई हैं और यह कथाएं

भी विरले रूप में ही मिलती हैं। अ-पाक्षरों से ऐसी कथायें सुनने के बाद भी अध्येता को बड़ी सावधानी से यह अवश्य समझना चाहिये कि इन कथाओं की मौखिक परम्परा का इतिहास भी काफी लंबा बन चुका है। सस्ते फेबल्स के संग्रहों ने निस्संदेह इन कथाओं की सुरक्षा एवं उनकी परम्परा की दृष्टि से मुख्य तत्व के रूप में अपना योगदान दिया है।

यदि यह समझ लिया जाय कि हर हालत में इन फेबल्स का अत्यंत सीमित संबंध लोकवार्ता से है तो निम्नलिखित कुछ कथाओं के मौखिक होने की दृष्टि से एक देश या बहुत से देशों में उन्हें लोकवार्ता की प्रामाणिक सामग्री के रूप में संग्रहीत भी किया गया है:

किसी पशु द्वारा अपने को पकड़ा हुआ पाकर दूसरे शक्तिशाली पशु को बोलने के लिये मजबूर करना और तरकीब से स्वयं को बचा लेना (कहीं लोमड़ी, कहीं मुर्गे और कहीं चूहे का उल्लेख है); लोमड़ी का भेड़िये की पीठ पर चढ़कर गड्ढे से निकलना; भेड़िये का एक बाल्टी से कुए में उतरना व दूसरी बाल्टी से लोमड़ी का ऊपर आना; लोमड़ी द्वारा मौत का बहाना करना और स्वयं को गड्ढे से बाहर फिकवा लेना; भेड़िये द्वारा पानी में खाने की वस्तु की छाया देखकर कूद पड़ना; भालू को पेड़ की दरार में पंजे गड़ाने के लिए समझाना; भेड़िये का तहखाने में अत्यधिक खाना खा लेना; घोड़े द्वारा अपनी लात से भेड़िये के दांत तोड़ देना; बीमार सिंह; सिंह का हिस्सा; पक्षी (मेगपाई) को लोमड़ी द्वारा धोखा देना और कुत्ते द्वारा लोमड़ी से बदला लेना; लोमड़ी और सारस का परस्पर न्योता; पशुओं में शांति स्थापना; खरगोश से भी ज्यादा कायर; अच्छी मौसम में खरगोश द्वारा घर नहीं बनाना और बुरी मौसम में बना नहीं पाना; चूहे द्वारा सिंह को बचाना; भेड़िये के गले से सारस द्वारा हड्डी निकालना; बारहसिंघे का आत्म मोह; बिल्ली की एक मात्र चतुराई; बिल्ली के गले घंटी बांधना; ग्रामीण चूहा और शहरी चूहा; संस्कार होने तक बच्चों को भेड़िये द्वारा छोड़ देना; भेड़ द्वारा भेड़िये से गाने की इजाजत मांगना और गडरिये को बुला लेना; लोमड़ी की राय; कृतघ्न सर्प का पुनः कैद होना; सिंह के पंजे में कांटा; मनुष्य से डर की बात सीखना; कृतज्ञ पशु एवं कृतघ्न मनुष्य; बिल्ली द्वारा कुत्ते का प्रमाणपत्र खो देना; दुर्बल कुत्ते का अच्छा भोजन एवं बंधन से अधिक आजादी पसन्द करना; दो जिद्दी बकरों का परस्पर धक्कों से पानी में गिर पड़ना; छोटी फुदकने वाली चिड़िया का पक्षियों के राजा के रूप में चुना जाना; सारस का लोमड़ी के साथ उड़ना और उसे गिरने देना; कौवे द्वारा मांगे हुए पंख धारण करना; शिकारी द्वारा धनुष को झुकाना; बन्दर का अपने ही बच्चों से मोह करना; चींटी और सुस्त झींगुर; एवं छोटी मछली का जाल से निकल जाना।

उत्तरी, पशु-चक्र एवं रेनॉर्ड नामक लोमड़ी

पश्चिमी यूरोप के मध्ययुग में पशु कथाओं की एक अत्यंत मनोरंजक साहित्यिक कृति का संग्रह हुआ जो अंत में व्यंगात्मक महाकाव्य के रूप में सुप्रसिद्ध रोमन द'रेनार्ट के नाम से जाना गया। इस कथा-समूह के साहित्य-गत इतिहास की गहराई में जाने की इस लेख में आवश्यकता नहीं है। लेकिन यूरोप के मौखिक साहित्य की संपदा के विवेचन में इन कथाओं को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता। इन कथाओं को संग्रहीत करने में बाल्टिक एवं निकट के क्षेत्रों में दसों व्यक्तियों ने नहीं अपितु सैकड़ों संग्राहकों ने कार्य किया है। आज से सात सौ वर्ष पूर्व भी इन कथाओं को इतनी अच्छी तरह जाना जाता था कि ऐसी कथाओं के समूह से पशु-महाकाव्य का निर्माण भी संभव हो सका था। इतना ही नहीं, अपने पिछले चार सौ वर्षों के इतिहास में ये कथाएं अफ्रीका में पहुँची हैं और वहां से गुलामों के जहाजों के साथ उन संपूर्ण क्षेत्रों में भी पहुंच चुकी हैं जिन्हें हम आज नयी दुनिया के नाम से जानने लगे हैं।

इसी कथा-समूह की अधिकांश कथाओं ने कार्ल क्रोहन की जिज्ञासा को जागृत किया और उन्होंने सर्वप्रथम कठोर सैद्धान्तिक विश्लेषण की कसौटी पर इन कथाओं को परखने का प्रयत्न प्रारंभ किया। इसी प्रयत्न को अन्ततः ऐतिहासिक-भौगोलिक अध्ययन-पद्धति के नाम से अभिहित किया गया। क्रोहन का मत बना कि फिनलेण्ड एवं रूस में इन कथाओं का अभी भी जीवन्त और सशक्त उपयोग हो रहा है और अधिकांश कथाएं रेनार्ड-चक्र के भाग के रूप में पहिचानी जा सकती हैं। गहराई से कथाओं के विभिन्न रूपों के विस्तार का अध्ययन करने के उपरान्त, उन्होंने कथाओं के उद्गम के प्रश्न एवं तदनुसार उनके इतिहास को निर्मित करने का प्रयास किया है।

क्रोहन ने पाया कि सामान्यतया कथाओं में एक विशिष्ट घटनावली को एक इकाई के रूप में प्रयुक्त किया गया है। इस घटनावली में मूर्ख भालू को चालाक लोमड़ी के प्रतिपक्षी के रूप में चित्रित किया गया है। क्रोहन को साहित्यिक फेबल्स में ठीक यही प्रतिपक्षी स्वरूप प्राप्त नहीं हुआ। किन्तु, उधर मौखिक कथाओं के पूर्ण समूह में यही स्वरूप एक तात्विक अंश की तरह मिला। साथ ही साथ उन्हें इस विषय संबंधी स्वतंत्र कहानियां भी प्राप्त हुई। क्रोहन ने अपने अध्ययन में जिस मुख्य चक्र को लिया है उसके पांच भाग हैं और प्रत्येक भाग को एक स्वतंत्र कथा अथवा पूर्ण कहानी अथवा एक पूर्ण घटना के रूप में भी प्राप्त किया जा सकता है।

लोमड़ी एक आदमी को गाड़ी में मछलियों को लादते हुए देखती है। वह उसके रास्ते में मृतप्रायः होकर लेट जाती है। वह आदमी मरी हुई लोमड़ी को अपनी गाड़ी में डाल लेता है।

उधर लोमड़ी गाड़ी से एक एक मछली को रास्ते में फेंकती रहती है और अंत में सभी को एकत्रित करके चली जाती है। लोमड़ी अपने अनुभव की बात अपने मित्र एक भालू को सुनाती है। कुछ कथा-रूपों में भालू भी इसी तरकीब को काम में लेता है और अपनी बेवकूफी से पकड़ लिया जाता है। लोग उसे मार देते हैं (टाइप १)। दूसरी प्रकार की कथाओं में लोमड़ी भालू को भी मछलियां पकड़ने की तरकीब बताती है। लोमड़ी उसे कहती है कि अपनी पूंछ को बर्फ के एक छेद में डाल दो और मछलियां उसमें फंस जायेंगी। मछलियां तो फसती नहीं हैं लेकिन उसकी पूंछ अवश्य बर्फ में फंस जाती है। भालू भाग नहीं सकता और अंत में कैदी भालू को लोग आकर मार डालते हैं (टाइप २)। इसी कथा के एक स्वतंत्र रूप में यह भी कहा जाता है कि भालू के पूछ क्यों नहीं होती है। जब भालू अपनी पूंछ से बर्फ में मछलियां पकड़ने लगता है तो उधर लोमड़ी एक बुढ़िया के पास जाकर भालू का पता बता देती है। बुढ़िया भालू की तरफ दौड़ती है तो मौका पाकर लोमड़ी बुढ़िया के बिलोये हुए मक्खन, दही और दूध को चट कर जाती है। बुढ़िया लौटती है तो लोमड़ी को बिलाई से पीटते हुए निकाल देती है। इस पिटाई में लोमड़ी के मुंह पर दूध और मक्खन लिपट जाता है। जब लोमड़ी पुनः भालू से मिलती है तो भालू बर्फ से मछलियां प्राप्त नहीं होने के दुर्भाग्य की बात बताता है तो लोमड़ी भी अपने दुखी अनुभव की कहानी कहती है। मक्खन और दूध से भरे सिर को दिखाते हुए कहती है कि पिटाई से मेरा दिमाग ही बाहर निकल आया है (टाइप ३)। लोमड़ी भालू को विश्वास दिला देती है कि वह सख्त घायल है और चल फिर नहीं सकती! मूर्ख भालू उसे अपनी पीठ पर बिठा कर चलता है। सवार लोमड़ी गाने लगती है कि "रोगी निरोगी को बिठाये चल रहा है।" लेकिन यह कहते हुए भी भालू को दूसरा अर्थ बताकर भरमा देती है। आखिर भालू को कविता का भान होता है और वह लोमड़ी को पटक देता है (टाइप ४)। लोमड़ी बचकर एक पेड़ की जड़ में जा छिपती है लेकिन भालू उसका पीछा करते हुए वहां पहुंच जाता है। जब भालू लोमड़ी के पिछले पांव को दबोच लेता है तो लोमड़ी चिल्लाती है कि जरा आगे मुंह बढ़ाओ, तुमने तो जड़ को पकड़ रखा है। भालू फिर मूर्ख बन जाता है। उसके बाद दोनों अपने अपने रास्ते चले जाते हैं (टाइप ५)।

उपरोक्त पांच कथानकों में से तीन घटनाएं (१, २ एवं ४) मध्ययुगीन पशु महाकाव्यों में प्राप्त हो जाती हैं और क्रोहन विभिन्न प्रमाणों से यह स्थापित करने में सफल होते हैं कि यह संपूर्ण कथा-चक्र उत्तरी यूरोप की लोक परम्परा में विकसित हुआ। उन्होंने कथा-चक्र एवं स्वतंत्र कथानकों के प्रसार के माध्यम से परिणाम निकाला कि कथाओं का यह संयोग लगभग हजार वर्ष से इसी रूप में चल रहा है। क्रोहन की धारणा बनी कि पश्चिमी एवं

दक्षिणी फिनलेण्ड में लोमड़ी का प्रतिपक्षी भालू है और उत्तरपूर्वी फिनलेण्ड में भेड़िये ने उसका स्थान ले लिया है। अपने अध्ययन में उन्होंने कहा:

'यह स्पष्ट था कि फिनलेण्ड में एक ही कथा का आगम पश्चिमी स्केण्डिनेविया के कथा-रूपों एवं पूर्वी रूस के कथा-रूपों के जरिये हुआ और फिनलेण्ड ऐसा स्थान भी नहीं था जहां से कथा आगे कहीं यात्रा कर सकती अर्थात फिनलेण्ड दो कथा परम्पराओं की अतिम मंजिल थी...... उत्तरी यूरोप का ठेठ दक्षिणी भाग जहां लोमड़ी एवं भालू की कथाओं का विपुल प्रसार मिलता है, वह भाग उत्तरी जर्मनी का है .... इस स्थिति में हम निश्चय ही कह सकते हैं कि इस कथानक के साहसी कार्य सेक्सन लोगों के आने के पूर्व मौजूद थे .... एक ओर जर्मनी से भालू अपने मूल-रूप में स्केण्डिनेविया पहुँचा और दूसरी ओर भेड़िये का कथा-रूप, फेबल साहित्य एवं पशु महाकाव्य के साथ, रूस की ओर पहुँचा।

लोमड़ी और भेड़िये (अथवा भालू) के साहसी कार्यों से संबंधी अन्य स्वतंत्र कथाएं भी प्राप्त होती हैं। क्रोहन ने स्थापित किया कि सामान्यतः इन कथाओं का भी लगभग इसी विशिष्ट कथा-चक्र के समान ही इतिहास मिलता है। एक घटना में(टाइप ७)वे शर्त लगाते हैं कि कौन पहिले तीन भिन्न पेड़ों के नाम बोल सकता है। भालू एक ही प्रकार के तीन नाम गिना देता है और लोमड़ी शर्त जीत जाती है। अन्य घटना (टाइप ८) में भालू नीलकंठ पक्षी को देखता है और रंग बिरंगे पखों पर मोहित हो जाता है। लोमड़ी उसे भरोसा दिलाती है कि वह भालू को भी इससे सुन्दर रंगों वाला बना सकती है। लोमड़ी की बातों में आकर भालू घास पर लेट जाता है और लोमड़ी घास में आग लगा देती है। भालू जगह जगह से जल जाता है। इसी घटना के माध्यम से कभी कभी यह भी कहा जाता है कि भालू के बाल काले और घुंघराले क्यों और कैसे बन गये।

उपरोक्त दोनों कथा-रूप पशु महाकाव्य के अंश नहीं बने लेकिन साथ ही साथ उत्तरी यूरोप के लोक-प्रिय कथानक अवश्य बने रहे। एक अन्य कथा जिसमें लोमड़ी धर्म-पिता का भाग अदा करती है, रेनार्ड द' फोक्स में आती है। किन्तु इसका उद्गम उत्तरी जर्मन प्रभावित देशों में ज्ञात होता है। इस कथा में लोमड़ी बहाना करती है कि उसे एक नवजात बालक के धर्म-पिता बनने के लिए न्योता मिला है। भालू को बाहर जाने का धोखा देकर वह दोनों द्वारा इकट्ठे किये हुए मक्खन और शहद को अकेले ही खा जाती है। हर बार जब वह लौटती है तो भालू नये बच्चे का नाम पूछता है। और हर बार लोमड़ी ऐसे नाम बताती हैं जो उसकी करतूत की सच्चाई को भी व्यक्त करते हैं। अर्थात वह नाम बताती है 'ठीक शुरू किया' (वेल बिगन) 'आधा हुआ' (हाफ डन)। जब भालू को सही बात मालूम होती है तो दोनों में झगड़ा हो

जाता है कि किसने माल खाया। लोमड़ी ताक में रह कर, सोते हुए भालू के मुंह पर मक्खन व शहद लगा देती है और उसे ही चोर सिद्ध कर देती है। जिन्हें ग्रिम की कथाओं का अनुमान है उन्हें याद आयेगा कि यही घटना बिल्ली और चूहे अथवा मुर्गे और मुर्गी के कथानकों में भी आई है। इस सामान्य चक्र के कथा समूह में संभवतया यही कथा ऐसी है जो मध्य यूरोप के बजाय विश्व के अन्य भागों में भी खूब प्रचलित है। एशिया के अनेक देशों, लगभग सारे अफ्रीका, सभी नीग्रो देशों, स्पेन, पुर्तगाल, अमेरिका की फांसीसी परम्परा और उत्तरी अमरीकी इंडियन्स में यह कथा ज्यों की त्यों मिल जाती है।

लोमड़ी के धर्म-पिता के अत्यधिक लोक-प्रचलित कथानक के बावजूद रेनार्ड द फोक्स की एक अन्य घटना रूस एवं यूगोस्लाविया से बाहर सामान्यत: प्राप्त नहीं होती। इस घटना में लोहे के सौगन्ध की बात आती है (टाइप ४४)। संभवतया यह किसी अन्य लोक-प्रचलित कथा का परिणाम हो। माल को चोरी-छुपकर खा जाने के झगड़े में लोमड़ी अपराध से मना करती है और यह बात एक लोहे के पिंजरे को छूकर सौगन्ध के साथ कहती है। भालू भी यही करता है लेकिन वह क्रोध में पिंजरे पर इतने जोर से पंजों को पटकता है कि उस के पंजे सीखचों में धंस जाते हैं।

क्रोहन ने लोमड़ी के फुसलाने की ताकत के दो और किस्सों का भी अध्ययन किया और ये दोनों ही किस्से उत्तरी यूरोप की ही लोक कथाओं में आते हैं। इसमें पहली कथा (टाइप २० सी) क्रम-संबद्ध रूप में प्रारंभ होती है जिसमें सभी पशु डरकर भागते हुए मिलते हैं और कहते जाते हैं कि दुनिया का अन्त आगया है या युद्ध होने वाला है। भय का कारण यह है कि एक मुर्गे के सिर पर कड़े छिलके का फल गिर पड़ा और उसी ने भागते हुए अपने भय की बात कह दी। निराश होकर सभी तय करते हैं कि वे आपस में ही एक दूसरे को खा जांय। अंत में लोमड़ी ने उन्हें समझाया कि सबसे पहिले छोटे से छोटे प्राणी को खाया जाय। इसी कथा-रूप में अधिकतर लोमड़ी फुसलाकर भेड़िये को अपनी ही आंतों को खाने के लिए तैयार कर देती है (टाइप २१)।

क्रोहन द्वारा अध्ययन किये गये कुछ और कथा-रूप, जिनका इसी मुख्य चक्र के इतिहास से संबंध है, अंटी आर्ने द्वारा उल्लिखित टाइप संख्या ३६, ३७ एवं ४३ में भी आते हैं। पहली कथा में वह पेड़ की दरार में फंसी हुई भालू की पत्नि को भ्रष्ट कर देता है; बाद में पहिचान से बचने के लिए काजल लपेट लेता है और पादरी के रूप में बच निकलता है। दूसरी कथा में भालू अपने बच्चों के लिए धाय की तलाश में है। लोमड़ी धाय बनकर पहुंच जाती है और तीनो बच्चों को चट कर जाती है। तीसरी कथा में भालू लकड़ी का घर बनाता

है और लोमड़ी बर्फ का। गर्मी आने पर लोमड़ी भालू से घर छुड़वाकर खुद उस पर कब्जा कर लेती है।

एडोल्फ गर्बर[1] का विश्वास है कि उपरोक्त कथाओं में अन्तिम कथानक की घटना का संबध भवन बनाने या निर्माण करने से है और ऐसे घटनात्मक कथानकों का मूल उन कथाओं में है जिनमें मनुष्य और दैत्य या राक्षस के बीच कुछ विनिमय होता है। गर्बर का कहना है:

"उत्तरी क्षेत्र की पशु कथा एवं नॉर्मन या उत्तरी फ्रांस की दैत्य कथा में निश्चित संबध परिलक्षित होता है और अगली घटना [फसल का धूर्ततापूर्ण बंटवारा][2] तथा उसी क्रम की संभवतया आगे की एक और घटना द्वारा भालू, लोमड़ी तथा दैत्य की कथाओं के बीच निकटतम संबंध को प्रमाण के रूप में लिया जा सकता है। लगता है कि दैत्य की कथा ही मूल स्रोत है क्योंकि उसमें स्वाभाविकता का अंश अधिक है। इसी प्रसंग में हमें यह तथ्य भी महत्वपूर्ण लगता है कि अन्तत: स्कैण्डिनेविया में लोमड़ी का नाम माइकल क्यों रखा गया?"

जिस कथा चक्र की हम बात कर रहे हैं उससे निश्चय ही बाहर की एक अन्य कथा का उल्लेख भी आवश्यक है। इस कथा में लोमड़ी भालू को समझाती है कि वह मृत दिखाई देने वाले घोड़े की पूंछ को अपने मुंह से पकड़ले [टाइप ४७ ए]। इसी हालत में भालू को घोड़ा घसीटकर ले निकलता है। रास्ते में एक खरगोश उसको पूछता है — कहां जा रहे हैं आप? यह कहकर खरगोश इतना हंसता है कि उसके होठ दो हिस्सों में बंट जाते हैं। कभी कभी इस कथा में लोमड़ी भी मूर्ख बनी हुई मिलती है। लेकिन क्रोहन का निश्चित मत है कि यह कथा अपने मूल रूप में भालू [भेड़िये]-लोमड़ी की मौलिक कथाओं में से नहीं है और कुछ समय बाद ही उत्तरी क्षेत्र के इस समूह की कथाओं में जुड़ गई है। जुड़ने के साथ ही कथा-पात्रों का चरित्र भी उलट दिया गया है। इस कथानक के अन्तिम अंश में खरगोश के बंटे हुए होठों का जो उल्लेख है, वह निश्चय ही अन्य अवदान [लिजेंड] समूह से स्वीकृत क्षेपक है जो विश्व के विभिन्न भागों की स्वतंत्र पुरा-कथाओं में भी आता है और जिनमें खरगोश के फटे हुए होठ के अन्य कारण बताये गये हैं।

---

१ एडोल्फ गर्बर की पुस्तक है: 'ग्रेट रशियन एनिमल टेल्स।' गर्बर का लेख इस कथा-चक्र एवं अन्य पशु-कथाओं के अध्ययन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

२ टाइप ९ बी। भालू व लोमड़ी की कथा के समान ही इस कथा में मनुष्य व दैत्य हैं। दोनों मिलकर एक बाग लगाते हैं और उसकी फसल के बंटवारे में तय करना चाहते हैं कि कौन ऊपर का हिस्सा लेगा और कौन नीचे का।

अब तक की विवेच्य पशु-कथाओं में कभी भालू या कभी भेड़िये को मूर्ख घोषित किया है किन्तु धूर्त्त एवं चालाक पात्र के रूप मे निरन्तर लोमड़ी ही मिलती है। साथ ही यह बात अवश्य महत्वपूर्ण है कि इन कथाओं ने अपनी यात्रा और विस्तार में लोमड़ी की जगह कहीं खरगोश और कहीं मकड़ी जैसे क्षुद्र कीट को ग्रहण कर लिया है।

क्रोहन द्वारा विवेचित कथाओं के अतिरिक्त रेनॉर्ड कथा-चक्र में अनेक कथानक और भी हैं जो लोक परम्परा में खूब प्रचुरता से प्राप्त हैं। एक सरल कथा में कुत्ते के घर एक भेड़िया महमान बनकर आता है और खूब नशा करके गाने की जिद्द करता है। उसकी आवाज सुनकर लोग इकट्ठे होकर उसे मार डालते हैं [टाइप १००]। इस कथा का केवल यूरोपीय पुनर्जागरण काल में फेबल लेखकों ने ही उपयोग नहीं किया अपितु ठीक यही कथा मध्य एशिया एवं दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र के अमरीकी इंडियन्स में भी खूब प्रचलित रही। इसी चक्र की अन्य कुत्ते संबंधी कथा का निकटतम संबध पूर्वीय देशों से है क्योंकि इसका प्रयोग जातक कथाओं में भी मिलता है और भारत तथा निकट के देशों में प्रचलन भी खूब है। यह कथा एक कुत्ते और एक चिड़िया की है [टाइप २४८]। एक आदमी से एक कुत्ते को ठोकर लग जाती है। कुत्ते की मित्र एक चिड़िया है। यह चिड़िया आदमी से बदला लेती है और परिणामस्वरूप आदमी को अपने घोड़े, धनमाल के साथ ही प्राणों से भी हाथ धोना पड़ता है। इस कथा का मूल चाहे कहीं हो, यह सत्य है कि इस कथानक को यूरोप में अच्छी तरह जाना जाता है। जमिइका के नीग्रो लोगों में भी इसी कथा को सुना एव रेकॉर्ड किया गया है।

रेनॉर्ड कथा-चक्र में ऐसी घटनाएं भी मिलती हैं जिनमें पशु समूहों के बीच पारस्परिक युद्ध का वर्णन है। इन कथाओं को स्पष्टता के साथ कभी अलग करके नहीं देखा गया लेकिन लगता है कि यह संपूर्ण कथा-शृंखला पूर्वीय देशों अथवा संभवतया भारत से ही आई है। इन कथाओं में कभी घरेलू एवं जंगली जानवरों के बीच लड़ाई होती है। एक बिल्ली अपनी पूंछ को उठाती है और जंगली जानवर उसे बंदूक समझ कर भाग जाते हैं [टाइप १०४]। कभी यह लड़ाई पक्षियों एवं पशुओं के बीच होती है। इस लड़ाई में पशुओं की तरफ से तय होता है कि लड़ने की एक साथ शुरूआत करने के लिए लोमड़ी अपनी पूंछ को संकेत रूप में खड़ा करेगी। इधर पक्षी तय कर लेते हैं कि एक मधुमक्खी लड़ाई के ठीक समय लोमड़ी की पूछ को ही काट ले। सही मौके पर लोमड़ी दर्द के मारे पूंछ को समेट लेती है और सभी पशु भाग खड़े होते हैं [टाइप २२२]। तीसरे कथानक में कायरता के कारण हिंसक पशु लड़ने को तैयार ही नहीं हो पाते क्योंकि उन्होंने बिल्ली को कभी देखा नहीं था और उसे देखते ही छिप जाते हैं। जब बिल्ली गुर्रा कर म्याउं करती है तो एक भालू ऊंचे पेड़ से डर के मारे नीचे आ गिरता है

और उसकी रीड की हड्डी टूट जाती है [टाइप १०३]। ये तीनों ही कथानक यूरोप में अत्यंत लोक-प्रिय हैं, विशेषकर बाल्टिक देशों में। इनमें से दो कथाएं अमेरिका के विभिन्न भागो में भी रेकॉर्ड की गई हैं।

अन्त में, रेनॉर्ड कथा-चक्र में दो परस्पर संबंधित कथाओं का उल्लेख किया जा रहा है। इन दोनों कथाओं पर खूब अध्ययन हुआ है। इनमें से प्रथम कहानी को शुद्ध पशु-कथा कहना संभव नहीं है, यह पूर्ण कथा कुछ अन्य वस्तुओं से संबंधित है [टाइप २१०]; ऐंटी आर्न के अनुसार प्रथम कथा का उद्गम एशिया में हैं जिसमें कहा गया है कि किस प्रकार एक अंडा, एक बिच्छू, एक सुई, एक गोबर का सूखा टुकड़ा और एक पत्थर [या कोई कठोर वस्तु] मिल कर यात्रा पर निकल कर एक बुढ़िया के घर पहुंचते हैं। बुढ़िया घर में नहीं होती और वे अलग अलग जगहों पर छिप कर बैठ जाते हैं ताकि बुढ़िया के आते ही उसे मजा चखायें। मौका आने पर हर एक अपने प्रकार से हमला करता है और अन्ततः बुढ़िया को मार देते हैं। इस कथा के विभिन्न रूप भारत, जावा-सुमात्रा, मलाया, चीन और जापान में मिलते हैं। यूरोप के काफी देशों में भी प्रचलित है। लेकिन यूरोप के कथा-रूप में मुख्य पात्र पशु हैं जो भेड़िये की गुफा या डाकू के तहखाने में इकट्ठे होते हैं। छिपना व हमला करना ठीक पहले वाले रूप के अनुसार है। यूरोप में पशुओं वाला कथा-रूप ही लोक-प्रचलित रहा और यही रूप अमेरिका में भी पहुंचा।

वस्तुओं की सहयात्रा का कथानक दूसरे ही परिप्रेक्ष्य में सेम की फली, तिनका एवं कोयले की कहानी में भी मिलता है [टाइप २९५]। कोयला तिनके को बीच में जला देता है और दोनों पानी में गिर कर समाप्त हो जाते हैं। सेम की फली यह देखकर खूब हसती है और हसते हंसते वह चिर जाती है। सोलहवीं शताब्दी के फेबल संग्रहों में यह कथा मिलती है और मौखिक रूप में इसका एक विशिष्ट फैलाव भी हुआ है। यूरोप में केवल जर्मनी के पूर्वीय अंचल में जानी जाती हैं लेकिन वेस्ट इंडीज में खूब प्रचलित है। अमरीकी इंडियन्स में यही कथा संभवतया स्पेनिश एवं फ्रांसीसी परम्परा के माध्यम से पहुंची है।

उत्तरी पशु कथा-चक्र की सभी कथाएं मध्ययुगीन पशु महाकाव्यों में आ गई हों — सो बात भी नहीं है। यह विस्मयजनक सत्य है कि फिनलेण्ड, इस्तोनिया, लिथुआनिया और रूस जैसे देशों में पशु-कथाओं का चक्र अत्यंत विशाल और विस्तृत है। इनके अतिरिक्त अन्य देशों एवं साहित्यिक रचनाओं में प्राप्त अनेक कथाओं का अस्तित्व निश्चय ही छोटे भौगोलिक दायरे तक सीमित रहा है। साथ ही उनमें इतने रूप-भेद भी प्राप्त नहीं होते। किन्तु इन बीसियों या उससे भी अधिक कथाओं का अपना भौगोलिक दायरा कितना ही कम क्यों न रहा हो,

वे अपने क्षेत्र में खूब अच्छी तरह जानी जाती रही हैं और इसीलिए यूरोप की पशु कथा परम्परा की विवेचना में उन्हें पृथक नहीं रखा जा सकता।

स. अन्य संबंध : साहित्यिक

फेबल संग्रह एवं पशु कथा-चक्र के अतिरिक्त अनेक साहित्यिक रचनाओं के ग्रंथ हैं जिन्होने पशुओं की कथाओं का उपयोग किया है और लोक-प्रिय परम्परा के अविच्छेद्य अंग बने रहे हैं। इस परंपरा के तीन मुख्य स्रोत हैं, प्रथम : जातक की बौद्ध कथाएं [1]; द्वितीय: मध्ययुगीन विभिन्न धर्मावलम्बियों की उद्धरणात्मक एवं उपदेशात्मक कथाएं [2]; एवं तृतीय : पुनर्जागरण काल में नवीन रूप से लिखित फेबल्स की साहित्यिक एवं काव्यात्मक रचनाएं [3]।

लोमड़ी द्वारा चिड़िया के बच्चों को चुराने की जिस कथा का उल्लेख हो चुका है, वह अपने मूल रूप मे पंचतन्त्र की कथा है। यही कथा बाद में रेनार्ड-चक्र एवं हेंस-साक्स में सुन्दर साहित्यिक रूप प्राप्त करती है। इस कथा के कलात्मक गठन से प्रभावित होकर उत्तरी एवं पूर्वीय यूरोप में एक अन्य बहु-प्रचलित कथा-रूप का विकास भी हुआ। कथा मे [टाइप ५६ ए] लोमड़ी चिड़िया को डराती है कि उसके बच्चे जिस पेड़ पर हैं, उस पेड़ को ही वह गिरा देगी। इस हालत में एक कौआ अपनी बुद्धिमत्ता से चिड़ी को बचने की राय देता है। लोमड़ी क्रुद्ध होकर कौए से बैर लेती है। वह मृत के समान होकर गिर पड़ती है और कौए के निकट आने पर उसे दबोच लेती है। कथा के अन्तिम भाग में जो घटना घटित होती है, वह साहित्यिक कथा से एकदम विपरीत है।

जर्मनी से पूर्व की ओर एक बालक को बचाने वाले बूढ़े कुत्ते की कथा बहुत अच्छी तरह जानी जाती है [टाइप १०१]। यही कथा पन्द्रहवीं शताब्दी के फेबल रचयिता स्तीनहॉवेल के संग्रह में भी प्राप्त होती है। एक किसान अपने स्वामीभक्त बूढ़े कुत्ते को मार देने का तय करता है। भेड़िया इस कुत्ते का दोस्त होता है और वह एक ऐसी तरकीब रचता है जिससे कुत्ते के प्राण बच सकते हैं। अर्थात् भेड़िये के खूंखार पंजे से कुत्ते द्वारा किसान के पुत्र को बचाने का नाटक रचा जाता है और जब यह तरकीब सफल हो जाती है तो भेड़िया चाहता है कि कुत्ता उसे किसान की भेड़ों को ले जाने दे। लेकिन कुत्ता इस बात को नहीं मानता है और उसकी भेड़िये से दोस्ती टूट जाती है।

मध्ययुगीन उद्धरणात्मक कथा-संग्रहों में फेबल्स के अतिरिक्त अन्य कथाएं प्राप्त नहीं

१. कॉवेल द्वारा संपादित जातक कथा संग्रह
२. वेल्टर का ल' एक्जेम्पलम के अतिरिक्त गेस्ता रोमेनोरम और जक द' वित्री।
३. पुनर्जागरण काल में स्तीनहॉवेल ने अनेक फेबल्स के संग्रह प्रस्तुत किये।

होती। अधिकांश कथाएं केवल-संग्रहों में ही आ जाती हैं। एक पशु कथा अपने इतिहास एवं विस्तार की दृष्टि से तत्वत: मौखिक परम्परा का परिणाम दिखाई देती है [टाइप १२०]। यह कथा सोलहवीं शताब्दी के एक संग्रह 'शिम्फ एंड अर्नेस्ट' (पाउली द्वारा सग्रहीत) में प्राप्त है। एक लोमड़ी एवं सूअर के बीच शर्त होती है कि पहिले सूर्योदय कौन देखता है। लोमड़ी एक ऊंचे पहाड़ पर चढ़कर पूर्व दिशा की तरफ मुंह कर लेती है और सूअर नीचे ही घने पेड़ों के बीच पश्चिम की तरफ मुंह करके बैठ जाता है। सूर्योदय पेड़ के ठीक ऊपर होता है और सूअर शर्त जीत लेता है। यह कथा आयरलेण्ड से साइबेरिया तक जानी जाती है और इसका एक मनोरंजक रूप जापान में भी मिलता है।

टारबेबी नामक कथा [टाइप १७५] का रूप सर्व प्रथम जातक में मिलता है लेकिन उसके बाद इस कथा का जबरदस्त मौखिक प्रचलन हुआ। कथानक की मुख्य बात है कि एक धूर्त [सामान्यता जो खरगोश है] टारबेबी या किसी चिपकने वाली प्रतिमा द्वारा पकड़ लिया जाता है। अधिकतर पकड़ने के बाद की घटनाओं में खरगोश के दुश्मन सोचते हैं कि उसे किस तरह कड़ी से कड़ी सजा दी जाय। खरगोश हर तरह की सजा को मंजूर करता है लेकिन प्रार्थना करता है कि उसे कांटों की झाड़ी में न फेंका जाय। कड़ी सजा देने के हिसाब से यही तय होता है कि उसे कंटीली झाडी में फेंक दिया जाय। लेकिन फेंकने के साथ ही वह तो बच निकलता है [टाइप १३१०]। टारबेबी की इसी कथा के पहिले १५० कथारूपों पर और बाद में ११५ रूप और जोड़कर ए. एम. एस्पीनोजा ने विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस अध्ययन से स्पष्टत: ज्ञात होता है कि यह कथा भारत से अफ्रीका में पहुंची और वहां खूब लोकप्रिय बन गई। अफ्रीका में कथा के स्वरूप ने वहां की चारित्रिक विशिष्टताओं को ग्रहण किया और वहां से गुलामों के व्यापार के साथ अमेरिका में पहुंचा। दूसरी यात्रा का मार्ग यूरोप से होते हुए हिस्पेनिक द्वीपों के मार्फत अमरीकी उपनिवेश में पहुंचने का बनता हैं। तीसरा मार्ग कम महत्वपूर्ण ही सिद्ध होता है और वह है सीधे यूरोप से अमेरिका में पहुंचने का।

लोक कथाओं संबधी अपने दूसरे महत्वपूर्ण अध्ययन में कार्ले क्रोहन एक आदमी एवं एक लोमड़ी सबधी कथाओं का विश्लेषण करते हैं। इस अध्ययन में दो फेबल्स हैं; पहला : कृतघ्न सर्प जो पुन: कैद हो जाता है [टाइप १५५], एवं दूसरी भालू का भोजन [टाइप १५४]। पहली कथा तो निश्चय ही साहित्यिक परम्परा में है इसलिये दूसरी कथा का ही मुख्य रूप से अध्ययन तैयार किया गया। इस कथा का इतिहास भी बहुत धुंधला है और धुंधलाहट को पूरी तरह हटाना भी कठिन था। कथा में तीन पृथक-पृथक घटनाएं हैं। एक आदमी को अपने सुस्त घोड़ों पर क्रोध आता है और क्रोध में ही कहता

है कि तुम सभी भालू का भोजन हो। एक भालू यह बात सुन लेता है और घोड़ों को लेने के लिए पहुंच जाता है। आदमी दुविधा में फंसा हुआ होता है कि एक लोमड़ी उसे बचाने के लिए आ जाती है। लेकिन अपनी सेवा के एवज में बतख या मुर्गियां मांगती है। लोमड़ी जंगल में जाकर कुत्तों की बोली की जमकर नकल करती है और कुत्तों के भय से भालू मर जाता है। उधर आदमी बतखें लाने के बहाने अपने थैले में कुत्ते भर लाता है जो लोमड़ों पर हमला बोल देते हैं। लोमड़ी भाग कर अपने दर में घुस जाती है। दर में बैठकर लोमड़ी अपने पांव, अपनी आंख, अपने कान, अपनी पूंछ को एक एक करके पूछती है तुमने भागने में क्या क्या सहायता की। पूंछ ने बताया कि उसने भागने में कोई मदद नहीं की। मूर्ख लोमड़ी पूंछ को दर से निकाल कर खड़ी हो जाती है। पूंछ के निकलते ही कुत्ते झपटकर लोमड़ी का तार तार कर देते हैं। कथा के तीन भाग हैं— १. भालू के भोजन की बात २. लोमड़ी को धोखा ३. लोमड़ी द्वारा अपने अवयवों से वार्तालाप। लेकिन सभी कथा-रूपों में पूरे तीनों अंश नहीं भी मिलते हैं। कथा का प्रथम अंश साहित्यिक कथा परम्परा से ज्ञात होता है लेकिन अन्य अंश उस परम्परा से नहीं दिखाई देते। ये अंश जर्मन एवं रोमन देश की कथाओं में हैं भी नहीं। किन्तु कार्ले क्रोहन का मत है कि रोमन दे रेनार्ट और धार्मिक उपदेशात्मक कथाओं में इस रूप का मिलना ही इस बात का प्रमाण है कि पश्चिमी यूरोप के बहुत पूर्व काल में इस कथा का प्रचलन था। क्रोहन का कहना है कि आज संपूर्ण यूरोप में इस कथा की अत्यधिक लोक-प्रियता एवं प्रचलन को देखते हुए इसे यूरोप की लोक परम्परा का भाग ही मानना पड़ेगा। साथ ही क्रोहन इस बात को भी स्वीकार करता है कि भारत एवं पूर्वीय देशों से अधिक कथा-संग्रहों के मिलने व अध्ययन के बाद अपनी राय बदल भी सकते हैं।

अब तक जितनी पशु कथाओं का उल्लेख आया है, उनका संबंध साहित्यिक परम्परा से अवश्य ही रहा है। लेकिन पशु कथाओं की एक ऐसी सशक्त मौखिक परम्परा भी रही है जिसका उद्भव की दृष्टि से और प्रचार-प्रकार की दृष्टि से साहित्यिक रचनात्मकता के साथ किसी प्रकार का संबंध नहीं रहा। ऐसी विशुद्ध लोक कथाओं को, यूरोप एवं एशिया के देशों में संग्रहीत करना एक कठिनतम समस्या है क्योंकि हर देश ने अपनी लोक परम्परा में कुछ कथाओं को सृजित किया है और अभी उन कथाओं ने दूसरे देशों की यात्रा भी प्रारंभ नहीं की है। यदि हम विहंगम दृष्टि से ही लोक कथाओं के टाइप्स की सूची एवं विभिन्न सर्वेक्षणों की रिपोर्ट्स को ही देखें तो अनेक स्थानीय कथानकों का स्वरूप स्पष्ट होने लगेगा। इस प्रकार की कथाएं विशेषकर बाल्टिक एवं रूस में सर्वाधिक दिखाई देती हैं।

स्थानीय एवं सीमित दायरे की कथाओं के अलावा अनेक ऐसी परम्परागत मौखिक

कथाएं भी हैं जिन्होंने देशों की दृष्टि से कुछ विस्तार प्राप्त कर लिया है ।

ग्रिम के संग्रह में ' लोमड़ी से विवाह करने के इच्छुक ' नामक कथा है । इस कथा में विधवा किंतु पतिभक्त लोमड़ी उन सभी ' विवाह के इच्छुकों ' से विवाह करने से इन्कार कर देती है जो उसके पूर्व पति से मिलते-जुलते नहीं हैं । यही कथानक जर्मनी एवं स्केण्डिनेविया में खूब प्रचलित है । जिप्सी कथाओं में एवं अफ्रीका के असंबद्ध भागों में भी इसीसे लगभग मिलती हुई और सादृश्य कथाएं मिल जाती हैं । किन्तु इस स्थिति से कुछ अधिक निश्चित परम्परा की एक अन्य कथा है जो फिनलेण्ड एवं लिथुआनिया में बहुलता से कही सुनी जाती है किन्तु साथ ही हंगरी एवं मेसेच्सेट्स के केप बर्डी द्वीप के निवासियों में भी प्राप्त हो जाती है । कथा में एक कुत्ता है जो एक भेड़िये के लिए जूता बनाने का जिम्मा लेता है [टाइप १०२]। कुत्ता बार बार जूता बनाने के लिए सामान मांगता रहता है और अन्ततः मांगते मांगते और लेते लेते वह गाय, सूअर आदि सबको हड़प कर जाता है ।

दो फेबल जैसी मौखिक कथाएं स्केण्डिनेविया एवं बाल्टिक देशों में अत्यंत लोक प्रिय हुई । विशेषकर नॉर्थ के लोग बडी रुचि के साथ यह कथा सुनाते हैं कि जिस तरह एक चूहा बिल्ली को खुश करने के लिए एक कहानी कहता है । लेकिन उसके बाद भी बिल्ली यही कहती है — कुछ भी हो, मैं तो तुझे खाऊंगी [टाइप १११]। किसी मार्ग से यह कथा इंडोनेशिया भी पहुंची है जहां कथा के तीन रूप प्राप्त हुए हैं । इसी कथा रूप की एक घटना में चूहा बिल्ली को मुंह धोने की प्रार्थना करता है और जब बिल्ली मुंह धोने जाती है, वह भाग जाता है [टाइप १२२ बी] यह कहानी बाल्टिक देशों से दूसरी ओर चली है और अफ्रीका के चार भिन्न भागों में प्राप्त होती है ।

खूब बड़े व अपने से ताकतवर पशु से किसी तरकीब से छोटे व दुर्बल पशु के बचने का कथानक विश्व के सभी भागों में प्रचुरता से मिलता है । इसी प्रकार की अनेक छोटी छोटी घटनाओं पर आधारित अफ्रीकी कथाओं एवं छोटे चूहे और भालू [टाइप २२६] नामक कथा से, जो फिनलेण्ड और इस्तोनिया में ही लोक-प्रिय एवं सीमित है, संभवतया कोई संबंध दिखाई नहीं देता । इस कथा में टिटमाउस अपने पांवों को समेट तो लेता है लेकिन अपने ही बच्चों को मूर्ख नहीं बना पाता । अपने ही प्राकृतिक गुण के आधार पर वह भालू के कान में घुसकर उसे मार डालती है ।

इसी स्थान पर एक क्रम-संबद्ध कथा का भी उल्लेख किया जाना जरूरी है । 'झूठा बकरा' नामक इस कथा में एक पिता अपने पुत्रों को एक के बाद एक को चारागाह में भेजता है ताकि वे वहां बकरे को चरा आयें । लेकिन हर बार बकरा यही शिकायत करता है कि उसे खाने को

कुछ नहीं मिला, वह भूखा है। क्रोध में पिता सब पुत्रों को घर से निकाल देता है लेकिन बाद में जब स्वयं बकरे को चरा कर लाता है तो उसे धोखे का अन्दाज होता है। यूरोप के काफी भागों में यह कथा खूब प्रचलित है लेकिन दूसरे देशों से ऐसी कथा की रिपोर्ट नहीं मिली।

कुछ बहुत अच्छी पशु कथाओं को सहज कथाओं के रूप में नहीं कहा जाता अपितु उन्हें पशु के आकार-प्रकार, रूप-रंग एवं स्वभाव की व्याख्या की दृष्टि से प्रतिपादित किया जाता है। यदि इन कथाओं का मूल प्रयोजन यही व्याख्या है तो हम इन कथाओं को उद्‌गम संबंधी कथाओं की संज्ञा प्रदान करेंगे और इन कथाओं के संख्यातीत उदाहरण विभिन्न देशों में मिल जायेंगे। लेकिन ऐसी ही कुछ कथाओं में व्याख्या संबंधी तत्व तो गौण हैं और कथातत्व ही प्रमुख है। रास्ते का निर्माण करने वाले पशुओं की कथा [टाइप ५५] को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। इस कथा में लोमड़ी एक इंजीनियर की तरह कार्य करती है और सुस्त पशुओं को सजा देती है। विभिन्न प्रकार की जो सजाएं लोमड़ी सुनाती है, उन्हीं के अनुसार उन पशुओं के वंशज अपना रूप ग्रहण किये हुए हैं। यह कथा फिनलेण्ड में काफी लोकप्रिय है और अफ्रीका में भी खूब कही-सुनी जाती है। अमेरिका के दक्षिण-पूर्वी भाग के अमरीकी-इंडियन्स में भी इस कथा को रेकॉर्ड किया गया है।

कभी कभी पशु किसी अन्य पशु से कुछ गुणावगुण या अवयव मांग लेते हैं और लौटाते नहीं हैं। एक कथा में बताया गया है कि बुलबुल एवं एक विशेष कीट के एक एक आंख ही थी। बुलबुल ने एक दिन कीट से उसकी एक आंख मांग ली और लौटाने से इन्कार कर दिया। इस तरह बुलबुल के दो आंखें हो गईं और कीट अंधा ही रह गया। लेकिन प्रतिशोध लेने की दृष्टि से वह अंध कीट आज भी बुलबुल के घोंसले के पास ही रहता है और उसके अंडों को कुतर डालता है [टाइप २३४]। इस कथा के विषय में जर्मनी एवं फ्रांस से सूचना मिलती है लेकिन ठीक इसी के सदृश्य एक अन्य बाल्टिक कथा भी मिलती है जिसमें एक रंग-बिरंगे पंखों वाला छोटा पक्षी कोयल का चर्म मांग लाता है और लौटाता नहीं है। कुछ ऐसी ही कथाएं जावा-सुमात्रा में भी एकत्रित की गई हैं।

स्कैण्डिनेविया एवं बाल्टिक देशों तक ही सीमित दो और पक्षी-संबंधी कथाएं प्राप्त होती हैं। पहली कथा [टाइप २३६] में अश [सारिका] कबूतर को छोटा सा घोंसला बनाने की शिक्षा देती है लेकिन उसके बाद आज तक उसे ही घोंसला बनाना पड़ रहा है। दूसरी कथा [टाइप २४०] कबूतर एवं मेगपाई परस्पर अपने अंडों को बदल लेते हैं। कबूतर के सात अंडे थे और मेगपाई के दो। यही कारण है कि आज तक कबूतर दो ही अंडे दे रहा है।

साधारणतया हम कह सकते हैं कि कथा कहने वालों में मछली के लिए विशेष रुचि नहीं दिखाई देती। यों अनेक अद्भुत व चमत्कारपूर्ण कथाओं में जादुई मछलियों का वर्णन आता है। मच्छ चक्र की कथाओं में खूब अतिशयोक्ति के साथ अनेक मछलियों के पकड़े जाने के उल्लेख भी मिलते हैं। मछली के उद्गम संबंधी एक कथा [टाइप २५२] में फिनलेण्ड एवं लेपलैंड में लोक प्रियता प्राप्त की है। मछली एवं सर्प के बीच दौड़ हुई और इस दौड़ में सर्प जीता। शर्त के अनुसार विजयी को जमीन पर रहना था और चूंकि मछली हार गई इसलिये वह आज भी पानी मे है।

यूरोप एवं एशिया के लोक साहित्य में प्रचलित विभिन्न प्रकार की संपूर्ण पशु कथाओं की परम्परा को एक साथ देखने का प्रयास करते हैं तो पशु-पक्षियों के नायकत्व में विकसित होने वाली वैविध्य पूर्ण स्थितियों, अनुभवों एवं घटनाओं से अभिभूत होना पड़ता है। कथाओं के इस रूप की पृष्ठभूमि में मनुष्य द्वारा वास्तविक पशु-पक्षियों की प्रकृति एवं प्रवृत्ति को समझने की प्रेरणा ही सन्निहित नहीं है अपितु पशु कथाओं के सृजन का चिरन्तन स्वभाव भी निहित है। यही मानवीय स्वभाव अपने आप में विश्व के सभी कथा कहने वालों में सार्वजनीय सत्य भी है। अतः पशु कथाओं के सृजन की प्रेरणा के लिए पशु-जीवन का निरन्तर निरीक्षण और उनके विषय में जानकारी ही संपूर्ण सत्य नहीं है अपितु सत्य यह भी है कि कथा का सृजन आदिम समाज के कुशल कथा कहने वालों से लेकर मध्ययुगीन फेबल रचयिता, शास्त्रीय-साहित्य के सर्जक एवं हिन्दु सभ्यता के उद्भट विद्वानों की नैसर्गिक कलात्मक वृत्ति में भी निहित है।

— अनु. कोमल कोठारी

अजीब संतोष

किसी एक बनिये के लड़के से लोटा गुम हो गया तो वह रोने लगा, यह सोचकर कि पिताजी डांटेंगे। पर पिता ने तो उल्टा प्यार के स्वर में उसे समझाते हुए कहा — बावले, बनिये के घर जन्म लेकर तू लोटा खोने की चिंता करता है ! तू रोना बंद कर, अपना लोटा कहीं नहीं खोया। उसे पेट के भीतर खोज निकालेंगे। केवल दो दिन रोटी नहीं खाने से लोटे की कीमत वसूल हो जायेगी। तू व्यर्थ रो कर अपनी आंखें खराब न कर।

पैलौ मास उलरियौ

पैलौ मास उलरियौ, म्हारौ थूकतड़ां मन रळियौ
कमर में चीस सिर मतवाय, नैणां नींद नीं आवै
देखौ अे सहेलियां म्हारै, साईना री कुबद कमाई
अबकै तौ जी जाऊं, म्हारै साईना री सेज नीं जाऊं

दूजौ मास उलरियौ, म्हारौ पड़छायां मन रळियौ
कमर में चीस सिर मतवाय, नैणां नींद नीं आवै
तीजौ मास उलरियौ, म्हारौ दूध दहियां मन रळियौ
कमर में चीस सिर मतवाय, नैणां नींद नीं आवै

चोथौ मास उलरियौ, म्हारौ घेवरियां मन रळियौ
कमर में चीस सिर मतवाय, नैणां नींद नीं आवै
देखौ अे सहेलियां, म्हारै साईना री कुबद कमाई
अबकै तौ जी जाऊं, म्हारै साईना री सेज नीं जाऊं

पांचमौ मास उलरियौ, म्हारौ नींबूड़ां मन रळियौ
कमर में चीस सिर मतवाय, नैणां नींद नीं आवै

उलरियौ—प्रारंभ हुआ। म्हारौ—मेरा। थूकतड़ां—थूकने में। रळियौ—आसक्त हुआ। मतवाय—सिर दर्द। साईना—पति। कुबद—कुबिद्धि, चालाकी। पड़छायां—छाया, परछाई। घेवरियां—घेवर में।

छठो मास उलरियो , म्हारो लाडूड़ां मन रळियो
कमर में चोस सिर मतवाय , नैणां नींद नीं आवै

सातमो मास उलरियो , म्हारो बड़बोरां मन रळियो
कमर में चोस सिर मतवाय , नैणा नींद नीं आवै
देखो अे सहेलियां , म्हारै साईना री कुबद कमाई
अबकै तो जी जाऊं , म्हारै साईना री सेज नीं जाऊं

आठमो मास उलरियो , म्हारो लापसड़ियां मन रळियो
कमर में चोस सिर मतवाय , नैणां नींद नीं आवै
नवमो मास उलरियो , लाडण पूत जलमियो
नीं मतवाय , नीं कोई चोस , नैणां नींद अब भल आय

ताळो किण खड़काविया जी

ताळो किण खड़काविया जी , म्हारै रैण पाछलड़ी रात
ताळो वेमाता खड़काविया जी , म्हारै रैण पाछलड़ी रात
जागो नीं भंवर निदाळका , थांरो पिलंग परो सिरकाव
पिलग परो सिरकावजो जी , म्हारी दाई माई नै वेग बुलाय

थे ई ओ दाई माई भल आविया जी , म्हारै हालरिया रो नाळो मोळाय
हालरिया रो नाळो भल मोळियो , म्हारा सासूजी नै वेग बुलाय

लापसड़ियां—नवमी । लाडण—लाडला । ताळो—ताला । किण—किसने । खड़काविया—खटखटाया । रैण—रैन । पाछलड़ी—पिछली । वेमाता—विधात्री । भंवर—पति के लिये संबोधन । निदाळका—सुषुप्त । थांरो—तुम्हारा । पिलग—पलग । परो—दूर । सिरकाव—हटाओ । वेग-जल्दी । हालरिया — शिशु । नाळो-गर्भस्थ बच्चे की नली । मोळाय—काटो ।

थें ई औ सासूजी भल आविया, म्हारी जेठांणी नै वेग बुलाय
थें ई औ जेठांणी भल आविया, म्हारौ साळां में ढोलियौ ढळाव

साळां में ढोलियौ भल ढाळियौ जी, म्हारा नाईड़ा नै वेग बुलाय
थें ई औ नाईजी भल आविया, म्हारौ गोत कड़ूंबौ बुलाय
गोत कड़ूबौ भल आवियौ, म्हारै हालरिया रा कोड कराय
हालरिया रा हरख करावियां जी, म्हारा नणद बाई नै वेग बुलाय

थें ई औ बाईसा वेग पधारिया, म्हारी साळां मे साख्या कुराय
साळां में साख्या कुराविया, ढोलीजी नै वेग बुलाय
थें ई औ ढोलीजी भल आविया, म्हारी डोढ़ियां में ढोल घुराय
पोळां में ढोल घुराविया जी, म्हारा सुसराजी नै सनेसौ दिराय

बजारां में भल जावजौ जी, म्हारै सठवा सूंठ मोलाव
सठवा सूंठ भल मोलाई जी, म्हारा जेठजी सा नै वेग खिनाय
थें ई जेठजी सा भल जावजौ, म्हारै अजमौ वेग मंगाय
अजमौ वेग लाविया जी, म्हारै साईना नै वेग खिनाय
बजारां में भल जावजौ जी, म्हारै पाली रौ पीळौ मंगाय

जेठांणी—जिठानी। **साळां**— भीतर के कमरे में। **गोत कड़ूंबौ**—गोत्र कुटुंब। **कोड**— खुशी मनाना। **हरख**— हर्ष। **साख्या**—अल्पना विशेष। **डोढ़ियां**—ड्योढ़ी। **पोळ**— प्रतोली। **सनेसौ**— सन्देश। **सूंठ**— सोंठ। **अजमौ**— अजवायन। **साईना**— पति। **खिनाय**—बुलाओ। **पीळौ**—चीर विशेष।

जच्चा रौ चिंता कुण करै सा

कंवळै ऊभा कुळ बहू सा, चालै कमर में चीस
जच्चा री चिंता कुण करै सा
सुसरौजी गढ़ां रा राजवी, सासूजी भरिया छै भंडार
जच्चा री चिंता कुण करै सा
जेठ जोधांणा री चाकरी सा, जेठांणी कळगारी नार
जच्चा री चिंता कुण करै सा
देवर म्हांरा लाडला सा, दिवरांणी भोळी-डाळी नार
जच्चा री चिंता कुण करै सा
बाईसा म्हांरा लाडला सा, दौड़ सहेलियां में जाय
जच्चा री चिंता कुण करै सा
ओरा मांयली ओरड़ी सा, ज्यां में सूता बाईसा रा वीर
जच्चा री चिंता वे करै सा,
मोड़ अंगूठौ जगाविया सा, सूता हौ तौ जागौ धण रा स्यांम
जच्चा री चिंता थें करौ सा
हस हस जांमौ पैरियौ, मुळक'र बांध्या डोढ़ा पेच
जच्चा री चिंता थें करौ सा
थें धण जिणजौ हालरौ सा, भमकै बधाई म्हांरै मैल
जच्चा री चिंता थें करौ सा
खरौ भरोसौ म्हारी कूख रौ, जलमैला लाडल पूत
जच्चा री चिंता थें करौ सा

कंवळै—दरवाजे से सटकर। **ऊभा**—खड़े। **कुळ बहू**—कुल वधु। **कुण**—कौन। **कळगारी**—कलह करने वाली। **बाईसा**—ननद। **ओरा**—भीतर का कमरा। **वीर**—भाई। **धण**—पत्नी। **स्यांम**—श्याम। **जिणजौ**—पैदा करना। **हालरौ**—लड़का। **कूख**—कोख।

नैनी सी नार

नैनी सी नार नारेळी सौ पेट
चालै है चीस उंतावळी सा
ज्यूं चालै धण ज्यूं लुळ जाय
चालै है पीड़ उंतावळी सा

घड़ी दोय जी ढोला बजारां जाव
बजारां अजमौ मोलाजौ सा
म्हांरै है धण बडेरां री रीत
बै म्हांरै अजमौ मोलावसी जी
नहीं समझै बाईसा रा वीर
समझायां समझै नहीं सा

घड़ी दोय जी ढोला बागां में जाव
बागां सूं फुलड़ा लावजौ सा
म्हांरै है धण माळीड़ा री रीत
बै म्हांरै फुलड़ा लावसी जी
नहीं समझै बाईसा रा वीर
समझायां समझै नहीं सा

घड़ी दोय जी ढोला गवाड़ां में जाव
गवाड़ां गाय उछेरजौ सा
म्हांरै है धण चाकर चार
बै म्हांरै गाय उछेरसी जी

नैनी--नन्ही। नारेळी सौ--नारियल सा। उंतावळी--तेजी से। धण--पत्नी। लुळ--झुकना। अजमौ--अजवायन। बडेरा--बुजुर्ग। ढोला--पति के लिए संबोधन। गवाड़--बाड़ा। उछेरजौ--चरने के लिए रवाना करना।

नहीं समझै बाईसा रा वीर
समझायां समझै नहीं सा
घड़ी दोय जी ढोला दरवाजां जाय
दरवाजां न्याव चुकावजो सा
म्हारै है धण बाभौसा री रीत
बै म्हारै न्याव चुकावसी
नहीं समझै भोळा बाईसा रा वीर
समझायां समझै नहीं सा
घड़ी दोय जी ढोला नीचा पधार
दाई माई नै वेग बुलावजो
अबै समझिया म्हारा बाईसा रा वीर
दाई माई नै लेवण सांचरिया

थें सांमली हथायां बैठौजो

जी थें सांमली हथायां बैठो जी , बाईसा रा वीरा
जी थांरै झमकै बधाई मैलूं सा , बाईसा रा वीरा
जी थांरै धीव हुई घर आवोजी , बाईसा रा वीरा
हे म्हांनै साथीड़ां में लाजां मारियो अे , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे म्हांनै भाईड़ां में नीचा राखिया , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थांरै तूटो सो ढुखलियो ढळाऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी

म्हारै--हमारे । बै--वे । बाभौसा -- पिता । न्याव -- एक दस्तूर विशेष । थें--तुम । सांमली--सामने । हथायां--मर्दानी बैठक । बाईसा--ननद । वीर--भाई । थांरै--तुम्हारे । ढळाऊं--बिछाऊं । धीव--पुत्री । सायबांणी--पत्नी के लिए संबोधन । ढुखलियो--खटिया ।

हे थारै खरड़ी रौ पड़दौ तणाऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थारै कुड़ची में सीरौ रधाऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थांनै नित नित पीवर मैलूं , हे म्हारी सांवळो सायबांणी
हे थनै कदै ई न आंणै आऊं , हे म्हारी सांवळो सायबांणी

जी थें मांमली हथायां बैठो जी बाईसा रा वीरा
जी थांरै झमकै बधाई मैलूं सा , बाईसा रा वीरा
जी थांरै पूत व्हियौ घर आवो जी , बाईसा रा वीरा
हे म्हारो साथीड़ां में मांन राखियौ , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे म्हांनै भाईड़ां में ऊंचो राखियौ , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थांरै हिंगळू रो ढोलियौ ढळाऊं, हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थारै मिसरू रौ पड़दौ तणाऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थारै मिसरी रौ सीरौ रंधाऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थांनै कदै ई न पीवर मैलूं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थांनै नित नित लेवण आऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी
हे थारौ मैलां में मांम बधाऊं , हे म्हारी सांवळी सायबांणी

बडबोर

सुसराजी आगै वीणनी , ले दौ बागां रा बडबोर
म्हांनै ले दौ बाड़ियां रा बडबोर
जीमौ जी खारक खोपरा , बवड़ मती जीमौ खाटा बोर

खरड़ी--फटा बारदान । पड़दौ--पर्दा । कुड़ची--लोहे का बड़ा चम्मच । सीरौ--हलुवा । रंधाऊं--पकाऊं । पीवर--पीहर । थनै--तुझे । कदैई--कभी । आंणै -- बुलाने । हिंगळू ढोलियौ--वेश कीमती पलंग । मिसरू--रेशम । वीणती--विनती । बडबोर -- बड़े बेर । जीमौ--खाम्रो । खारक--छुहारे । बवड़ -- वधु । खाटा--खट्टे ।

भंवर म्हांनै ले दो सूवा पंखी बोर

सासूजी आगै वीणती, ले दो बागां रा बडबोर
म्हांनै ले दो बाड़ियां रा बडबोर
राज म्हांनै भावै बागां रा बडबोर
जीमो नीं सीरो लापसी, बवड़ मतो जीमो खाटा बोर
जेठजी सा आगै वीणती, म्हांनै ले दो सूवा पंखो बोर
राज म्हांनै भावै बागां रा बडबोर
जीमो जी घेवर मोकळा, बवड़ मतो जीमो खाटा बोर

देवर आगै वीणती, म्हांनै ले दो बागां रा बडबोर
राज म्हांनै भावै सूवा पंखी बोर
लास्यां केळा मोकळा, भावज मतो जीमो खाटा बोर
साईना आगळ वीणती, म्हांनै ले दो बागां रा बड़बोर
धण नै भावै बाड़ियां रा बडबोर
साईना बागां सांचरिया, लाया बागां रा बडबोर
धण नै भावै बागां रा बडबोर
जच्चा रांणी नै भावै सूवा पंखी बोर

भंवर—पति के लिए संबोधन। **म्हांनै**—मुझे, हमें। **भावै**—खाने में अच्छे लगते हैं। **सीरो**—हलुवा। **मोकळा**—अत्यधिक। **लास्यां**—लायेंगे। **साईना**—पति। **आगळ**—सम्मुख। **धण**—पत्नी। **सांचरिया**—गये। **रांणी**—रानी।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध, सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का
राजस्थान पुरातन ग्रंथमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

संस्कृत - प्राकृत

प्रकाशन का नाम	सम्पादक	मूल्य : रुपये
दशकण्ठवधम्	श्री गंगाधर द्विवेदी	४-००
श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्र	श्री गोपालनारायण बहुरा	३-७५
रत्नपरीक्षादि सप्त ग्रन्थ - संग्रह	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	९-२५
स्वयम्भूछंद	प्रो. एच. डी. वेलणकर	७-७५
वृत्तजातिसमुच्चय	,, ,, ,,	५-२५
कविदर्पण	,, , ,,	६-००
वृत्तमुक्तावली	स्व. पं. श्री मथुरानाथ भट्ट	३-७५
कर्णामृतप्रपा	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	२-२५
पदार्थरत्नमंजूषा	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य प्रस्तावना — श्री दलसुख मालवणिया	३-७५
त्रिपुराभारती लघुस्तव	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	३-२५
प्राकृतानन्द	,, ,, ,, ,,	४-२५
इन्द्रप्रस्थ प्रबन्ध	डॉ. दशरथ शर्मा	२-२५
एकाक्षर नाम कोश संग्रह	पन्यासप्रवर मुनि रमणीकविजय	९-००
वासवदत्ता कथा	जे. एम. शुक्ल	४-५०
वृत्तमौक्तिक	म. विनयसागर	१८-२५
चांद्रव्याकरण	प. बेचरदास दोशी	७-००

पुस्तक विक्रताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है।

[राजस्थान सरकार द्वारा प्रकाशित]

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित—डी. ५५१ । ६७ । ५६४०- बो.

आज की आवश्यकता

राजस्थान के मुख्य मन्त्री
श्री मोहनलाल सुखाड़िया का उद्बोधन

उत्पादन

हमें उत्पादन में अधिक से अधिक वृद्धि के कार्य को एक राष्ट्रीय कर्तव्य मानकर खेतों, कारखानों व खदानों में कार्य करना है जिससे कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को मजबूत बना सकें और हमें अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं के लिए बाहरी सहायता पर निर्भर नहीं रहना पड़े। देश के हर नागरिक को, चाहे वह किसी भी कार्य में लगा हो, यह मानकर कार्य करना चाहिये कि वह देश की शक्ति और समृद्धि बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है।

परिवार नियोजन

परिवार नियोजन का उद्देश्य परिवार, समाज व देश के कल्याण के लिए परिवार को सीमित करना है। हमें उतने ही बच्चे पैदा करने चाहिये जिनका भरण-पोषण माता-पिता भली-भांति कर सकें, उन्हें अच्छी शिक्षा दे सकें और अच्छे वस्त्र तथा स्वास्थ्यप्रद भोजन उपलब्ध कर सकें। यदि हमने ऐसा किया तो हम हर परिवार को समाज कोएक समृद्ध और सुखी इकाई बना सकेंगे।

अल्प बचत

हमारे साधनों में अल्प बचत का विशेष महत्व है। यह न केवल पारिवारिक जीवन में बचत की आदत डालती है बल्कि इससे योजना की क्रियान्विति हेतु आवश्यक धन राशि भी प्राप्त होती है। इस वर्ष अल्प बचत योजना के अन्तर्गत हमें अधिक से अधिक धनराशि एकत्रित करनी होगी। इस लक्ष्य की पूर्ति होने से राज्य को विकास कार्यों के लिए उपयुक्त धन प्राप्त होगा और हम विकास के क्रम को जारी रख सकेंगे।

ज. सं निदेशालय द्वारा प्रसारित
डी. १८१। ६८। ७२४५ बी

रूपायन संस्थान के प्रकाशन

लोक कथा

१. बातां री फुलवाड़ी [नौ भाग प्रकाशित]
बीस भागों में संपूर्ण करने की योजना

प्रति भाग १५ रुपया

२. तीडोराव [बड़ी लोक कथा पर आधारित लोक उपन्यास]

प्रति पुस्तक १॥ रुपया

३. नाहर सिंह—बछराज सिंह [तीन कथाओं का छोटा संग्रह]

प्रति पुस्तक २ रुपया

४. अनोखा पेड़ [हिन्दी में लिखित पशु-पक्षी संबंधी कथाएं]

प्रति पुस्तक ६.७५ रुपये

राजस्थानी कविता

५. राधा [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २॥ रुपये

६. दीवा कांपै क्यूं [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २॥ रुपये

अनुवाद

७. बाम्बी [वाल्ट डिजने का राजस्थानी अनुवाद]

प्रति पुस्तक २॥ रुपये

विवेचन

८. राजस्थान का लोक साहित्य [नानूराम संस्कर्ता द्वारा लिखित]

प्रति पुस्तक १५ रुपये

रूपायन संस्थान


जून
जुलाई
६८



चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया

वर्ष ७ – ८ अंक १२ – १

लोक संस्कृति

कथा, गीत, गाथा, कहावत, मुहावरा, धर्म, देवी-देवता, त्यौहार, नाट्य, चित्र, मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

संपादक : कोमल कोठारी, विजयदान देथा

अनुक्रम



समझ का फेर

एक था राजा और एक थी उसके रानी। सर्व गुण संपन्न, बत्तीस लच्छन वाली, धीमे स्वभाव की, बेहद सुन्दर और अत्यधिक सुशील। पर विधाता की लिखी हुई एक बड़ी कमी — कि रानी की कोख नहीं उघड़ी। कई खट-कर्म किये, यज्ञ किया, मंत्र-जाप व टोने-टोटके किये, देवी-देवता पूजे और मन्दिरों की परिक्रमाएं दीं, पर रानी के आशा नहीं ठहरी। ऐसी गुणवंती रानी होते राजा ने दूसरी शादी नहीं की। पिछले कर्म का दोष बता मन को जैसे-तैसे समझाया।

लेकिन कुछ दिन बाद एक अनहोनी बात हो गई। राजा के मन में विकट संताप और विक्षोभ उत्पन्न हुआ। वह बात यों घटित हुई कि एक दिन राजा उजाले के पहिले ही शिकार को निकला। रास्ते में एक नितनेमी बामन मिला। वह तालाब पर स्नान करने जा रहा था। निसंतान राजा की सूरत दिखने से उसके शकुन बिगड़े गये। पंडित मुंह फिराकर वापस मुड़ गया। मुंह से तीन मर्त्तबा जमीन पर थूका। बामन की इस हरकत से राजा के मन में इतना

दुख हुआ जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। राजा ने उसी क्षण शिकार की इच्छा को तिलांजलि दी। घोड़े से नीचे उतर उसने आत्म-हत्या करने की सोची। देश का अधिष्ठाता होते हुए भी कोई उसका मुंह नहीं देखना चाहता, पाप लगता है। ऐसे जीने में क्या सार! निसंतान का जीवन बिताने से तो मरना बेहतर। चमचमाते नुकीले भाले को अपने कलेजे में मारने के लिए राजा ने हाथ उठाया ही था कि पास के वृक्ष पर बैठी एक गिलहरी ने कहा— राजा आत्मघाती महा पापी। राजा ने चौंककर उधर देखा। पर नजर कुछ भी नहीं आया। फिर यह क्या रहस्य है? ये किसके शब्द थे? कि इतने में एक गिलहरी वृक्ष से नीचे उतरकर राजा के पास आकर खड़ी हो गई। कहने लगी: आत्म हत्या का यह पाप अपने मत्थे न चढ़ा। मन कमजोर मत कर, जा तेरे नवमे महीने पुत्र होगा। सूरज-सा तेजस्वी और चंद्रमा-सा ओजस्वी। पर मुझे वचन दे कि रानी की सूर्य-पूजा मुझसे करायेगा। राजा ने गिलहरी को वचन दे दिया। मन में हर्ष का समंदर हहराये वह राजमहल में आया। रानी को गिलहरी की दी हुई आशिष बताई।

तो भगवान सभी को अच्छे दिन दे— गिलहरी का वचन फला। रानी के आशा रही। नवमे महीने राजा के सूर्य-चांद जैसा प्रतापी कुंवर पैदा हुआ। सारे राज्य में उत्सव मनाया गया। राजकंवर के बराबर सात बार सोना तोल कर गरीबों में बांटा गया। ब्राह्मणों को हजार गायें दान कीं। बहुत खुशियां मनाई, मंगल गीत गवाये। समंदर के पानी का कोई नाप-जोख हो तो राजा के आनंद का कोई पार हो। पर खुशियों के उत्सव में राजा गिलहरी की बात नहीं भूला। सूर्य-पूजा के एक दिन पहिले राजा ने गिलहरी को गाजे-बाजों के साथ बुलवाने का विचार किया।

मखमल की झूल और सोने की अंबाड़ी का आदेश कर राजा ने हाथी की सवारी भेजी। हाथी झूमता-झामता गिलहरी के घर गया। गिलहरी उस वक्त आम की गुठली कुतर रही थी। हाथी को देखते ही गिलहरी डर गई। दौड़ कर वृक्ष की खोह में घुस गई। तब महावत ने कहा— अरी ओ गिलहरी तू डर क्यों गई? तेरी आशिष से राजा के कंवर जन्मा, तुझे सूरज पुजवाने के लिए बुलाया, चल जल्दी कर। गिलहरी ने घूंघट निकाल कर गर्दन हिलाते हुए कहा— लम्बा लम्बा, भारी भरकम सूंड हिलाता, नखरे करता, नहीं चलती।

महावत ने जाकर राजा को सारी बात बताई। राजा ने बढ़िया किस्म के एक बेजोड़ घोड़े पर जीन कसकर गिलहरी को बुलाने के लिए भेजा। गिलहरी

उसी डाल पर बैठी गुठली कुतर रही थी। घोड़े को तीव्र वेग से उधर ही आते देखा तो डर गई। डरकर पेड़ की खोह में घुस गई। तब घोड़े के सवार ने कहा : गिलहरी अरी गिलहरी, राजा के यहां कंवर जन्मा, तुझे सूरज पूजने के लिए बुलाया, जल्दी चल। गिलहरी घूंघट निकालकर बोली — तू हिन हिन हींसे, पूंछ हिलाये, जा भग यहां से, मैं नहीं चलती।

घोड़े के सवार ने राजा को जाकर सारी बात बताई। राजा ने एक बढ़िया कच्छी ऊंट सजाकर भेजा — पीतल का पिलान, सुरंगा गोरबंद, रेशम की मोहरी, सोने के गिरबान और चांदी के पागड़े। राजा ने ओठी को समझाया कि वह जैसे भी हो गिलहरी को लेकर आये। उसकी इंतजार में सूरज पूजने का मुहुर्त्त कहीं टल न जाये। ऊंट को दौड़ाता हुआ ओठी एक सांस वहां पहुंचा। गिलहरी तो उसी डाल पर बैठी गुठली कुतर रही थी। ऊंट के पैरों की आवाज सुनकर वह डरी। दौड़कर अंदर खोह में घुस गई। तब ओठी बोला—गिलहरी अरी गिलहरी, राजा के यहां कंवर जन्मा, तुझे सूरज पूजने के लिए बुला रहे हैं, जल्दी चल। गिलहरी घूंघट निकालकर बोली — तू टेढ़ा-मेढ़ा, बेढ़ब लम्बा, तेरी छाया से भी डर लगता, जा भग यहां से, नहीं चलूंगी, मैं नहीं चलूंगी।

ओठी ने जाकर राजा को सारी बात बताई। राजा अब करे तो क्या करे! गिलहरी बिना सारा उत्सव फीका। इस बार राजा ने नागोरी बैलों की बढ़िया गाड़ी जुतवाकर उसे लेने के लिए भेजी। खीनखाब का पर्दा करके गाड़ी की सजावट की। फूंफां करते बैलों को देखकर गिलहरी डर गई। गुठली को कुतरना बंद करके खोह में घुस गई। तब गाड़ीवान ने कहा—गिलहरी अरी गिलहरी, राजा के यहां कंवर जन्मा। तुझे सूरज पूजने के लिए बुलाया, जल्दी चल। मुहुर्त्त टल रहा है। तेरे बिना राजाजी का तो मन ही नहीं लगता। गिलहरी घूंघट निकालकर बोली— थलथल थुही, तीखे सींग, चरमर करती गाड़ी, नहीं चलती, मैं नहीं चलती।

गाड़ीवान ने सारी बात बताई तो राजा बड़े असमंजस में पड़ गया। अब क्या उपाय करे। यह गिलहरी तो कुछ समझती ही नहीं। कैसी बढ़िया बढ़िया सवारियां भेजी, पर गिलहरी के तो एक भी नहीं जची। अब क्या सवारी भेजे। आखिर सोचते सोचते राजा को थोड़ा गुस्सा आ गया। नासमझी की भी कोई सीमा होती है! आखिर तंग आकर उसने एक मरियल कुत्ते पर फटी गुदड़ी डलवाकर भेज दिया। यह सवारी गिलहरी को बड़ी पसंद आई। खुश होकर कहने लगी — काजल सारूं, बिंदिया देऊं, चूड़ा

पहिनूं, पल भर ठहर, जरूर चलूंगी। फिर गिलहरी सोलह शृंगार करके कुत्ते पर बैठी। कुत्ता दौड़ता दौड़ता राजदरबार में पहुंचा। गिलहरी को देखकर राजा बड़ा खुश हुआ। हाथ जोड़ उसकी तीमारदारी में लग गया। नौबत-बाजों के साथ उसका अभिनन्दन किया। खुब आदर-सत्कार किया। उससे सूरज पुजवाया। गिलहरी ने राजकंवर को बहुत आशिष दी।

गिलहरी के सत्कार में राजा ने बत्तीस व्यंजन करवाये। पंचरंगी जाजम बिछवाई। सोने के बाजोट पर सोने के थाल में मोतीचूर के लड्डू परोसे। पर गिलहरी ने उसी क्षण मुंह फिरा लिया। मुंह बनाकर बोली — गोल-मटोल गेंद समान, रखते ही गुड़ जाय, परे हटाओ नहीं खाती। उसकी हाजरी में कई नौकर खड़े थे। उसी पल लाडुओं का थाल हटाकर जलेबी का दूसरा थाल रख दिया। पर गिलहरी ने फिर मुंह बनाकर कहा — आंटी-टूंटी, गांठ-गंठीली, परे हटालो नहीं खाती। गिलहरी के कहते ही वह थाल हट गया और जादू की भांति रत्न-मंडित कटोरे में झर-झरता हलुवा आ गया। पर गिलहरी की तो समझ ही निराली थी। मुंह बनाकर बोली — लेई जैसा चिपचपा, परे हटालो नहीं खाती। गिलहरी के कहते ही रत्न-मंडित कटोरे में खीर आ गई। केसर, पिस्ते व बदामों से सुरभित, देवताओं का भी मन डुले वैसी खीर। पर गिलहरी की तो समझ ही दूसरी थी। मुंह बनाकर बोली— पीली पीली कीचड़ जैसी, परे हटालो नहीं खाती।

राजा अब करे भी तो क्या करे! बत्तीस व्यंजन ही व्यर्थ हो गये। गिलहरी ने चखे तक नहीं। सारी तीमारदारी का मजा किरकिरा कर दिया। अब क्या मनुहार करे! एकदम हार-सा गया। आखिर तंग आकर खाद से भरी तगारी उसके सामने रखी। बड़े अचरज की बात कि देखते ही गिलहरी की कली कली खिल उठी। खुश होकर खाने पर पिल पड़ी। फर फर खाते हुए बोली — एकदम बढ़िया, नमकीन निराला भोजन, खूब परोसो कभी न अघाऊं।

अजीब थी उस गिलहरी की समझ और अजीब थी उसकी रुचि। इस तरह उसने राजकंवर के जन्म पर सूरज पुजवाया। वापस कुत्ते ही पर बैठकर अपनी खोह में आई।



गुटिया राजा

एक था राजा और उसके थी सात रानियां। संयोग की बात थी कोख एक भी रानी की नहीं फली। देश का मालिक होते हुए भी राजा के मन में बड़ी चिन्ता घर करती गई। राजा ने कई जप तप कराए, शिकार करना छोड़ दिया, लेकिन संतान की इच्छा पूरी नहीं हुई।

एक दिन राजा अपनी सबसे बड़ी रानी के साथ सवेरे शंकर भगवान के दर्शन करने, पैदल ही जा रहे थे कि रास्ते में हल चलाने को जाते हुए एक किसान और उसकी पत्नी सामने दिखाई दिए। राजा और रानी को पहचानते ही किसान ने तीन बार जमीन पर थूक दिया। शकुन एकदम बिगड़ गए। निपूते लोगों के दर्शन हो गए। खेत में बोया हुआ बीज भी वापिस नहीं मिलेगा। वह वापिस मुड़ कर जाने लगा तो उसकी पत्नी बिना कहे ही सारी

बात समझ गई। वह बोली — भले आदमी, देश का अंदाता सामने मिला और तुम मानते हो कि शकुन बिगड़ गए!

चौधरी ने कहा — तू वृथा बकवास मत कर, मेरे तो परखी हुई बात है। दो बार खेत में एक दाना भी नहीं पैदा हुआ – यह इन शकुनों का ही प्रताप है। कल दो घड़ी रात रहे रवाना होंगे।

यह दृश्य देखते ही राजा का तो कलेजा बैठ गया – उसके पांव तो अपनी जगह पर ही चिपक गए। सिर पकड़कर वह तो वहीं जमीन पर बैठ गया। बोल जैसे कंठ में फंस गए हों उस तरह कहने लगा— रानी, मन्दिर तक पहुंचने जितनी भी मेरी तो शक्ति नहीं रही और पहुंचने में भी अब कोई सार नहीं है। इन देवी - देवताओं के भरोसे राज्य का सारा खजाना खाली कर दिया और सुमिरन करते करते मेरी तो जीभ ही घिस गई। निःसन्तान राजा का मुंह देखने से जब खेतों में धान ही पैदा नहीं होता तो धिक्कार है मेरे राज्य करने में। मैं तो वापिस महलों की तरफ मुंह भी नहीं करूंगा। तुम जानो और तुम्हारा राज्य जाने। मैं तो अब अपना मुंह लेकर कहीं चला जाऊंगा।

राजा के पैर पकड़ कर रानी ने कई तरह से राजा को समझाया परन्तु राजा नहीं माना सो नहीं माना। रोती कलपती रानी राजमहल की ओर रवाना हुई और राजा नाक की सीध में बिना मन आगे बढ़ता गया।

चलते चलते रेत के एक ढूह पर एक नंग-धड़ंग साधु तप करता दिखाई दिया। जेठ की जलती दोपहर। धूप के सामने नहीं देखा जाता, जिसमें यह साधु बाबा रेत पर बैठा है।

राजा ने पास जाकर देखा तो साधु की समाधि लगी हुई थी। राजा इधर उधर से ढूंढ़ कर कुछ लकड़ियां लाया और उसके चारों ओर चार लकड़ियां गाड़ कर उसने उसके ऊपर एक छप्पर बना दिया। एक पंखा बना कर वह साधु को हवा झलने लगा। सात दिनों बाद साधु की आंखें खुलीं। राजा के सेवा भाव से वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसने राजा से वरदान मांगने को कहा।

तब राजा ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि उसकी मंशा तो भगवान से भी नहीं पूरी की जा सकी तभी तो उसे राज-पाट छोड़ कर वैराग्य लेना पड़ा। गुरूजी का चेला बनने से बढ़ कर उसकी कोई लालसा नहीं।

साधु ने मुस्कराते हुए कहा—बेटा, इन छोटे छोटे कामों के लिए भगवान को क्यों कष्ट देते हो? यदि हम तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं कर सके तो तुम भगवान के द्वार खटखटाना।

तब राजा ने अपने मन की मंशा प्रकट की। बोला — भगवन ! गुदड़ी का रखवाला चाहिए। सात शादियां करली तो भी संतान का मुंह देखने को नहीं मिला।

फिर उसने साधु को किसान वाली घटना सुनाई। बात सुन कर साधु के मन में भी कष्ट हुआ। उसने राजा को एक लम्बा चिमटा देकर अपने बाग में जाने को कहा। वहा जाकर वह एक आम के पेड़ पर चिमटा फटकारे तो सात पके हुए आम गिरेंगे। सातों रानियों को एक एक आम खिलादे। दसवें महीने सात राजकुमार जन्मेंगे। अधिक लोभ नहीं करे ?

राजा के हर्ष क्या पार ! एक की जगह सात सात राजकुमार ! वह तो हवा के वेग से वापिस दौड़ता आया। सब से अच्छे आम के पेड़ को देख कर उसने चिमटा मारा। सचमुच सात आम नीचे गिरे। राजा ने मन में सोचा कि साधु को क्या पता चलेगा। एक बार और चिमटा मार कर अगर सात आम और गिरालूं तो क्या बुराई है ! केसर के रंग के वे पके आम खाने के लिए उसका भी मन ललचा गया।

उसने और एक बार चिमटा मारा। पर यह तो दूसरा कौतुक हो गया। चिमटा डाली से चिपक गया और जमीन पर पड़े हुए सातों आम वापिस डालियों के लग गए।

राजा मुंह उतार कर साधु के पास गया। साधु ने देखते ही कहा—बेटा, अधिक लोभ करने के लिए मैंने पहले ही सावधान कर दिया था, पर तू माना नहीं। खैर, जा एक अवसर और देता हूं। इस बार लोभ किया तो फिर मेरे वश की बात नहीं है।

राजा ने आम के वृक्ष के नीचे जाकर देखा तो सात आमों के साथ चिमटा जमीन पर पड़ा था।

अपने दुपट्टे के पल्ले में आम बाध कर राजा महलों की ओर रवाना हुआ। आमों की सौरभ से उसका मन ललचा गया। राजा की सातवीं रानी उसे सबसे अप्रिय थी। उसे यदि आम नहीं दे तो भी चल जायगा। राजा एक आम खुद खा गया। बाकी छहों रानियों को उसने अपने हाथ से आम खिलाये। सातवीं रानी के लिए उसने दासी के हाथ चूसी हुई गुठली भेज दी। रानी तो गुठली भी भून कर खा गई।

साधु का वरदान फल गया। सातों रानियों के गर्भ रह गया। दसवें महीने सातों राजकुमारों का जन्म हुआ। अप्रिय रानी के गुठली जितना बड़ा

ही कुंवर हुआ । बाकी छहों राजकुमार चांद से भी चौगुने सुन्दर !

दिन बीतने के साथ ही राजकुमार बढ़ने लगे पर सातवीं रानी का कुंवर घुटने जितना ही रहा । सब लोगों ने उसे चिढ़ाने के लिए उसका नाम धर दिया—गुटिया राजा !

गुटिया राजा में अक्ल और सावधानी पहाड़ से भी ज्यादा बड़ी थी तो भी राजा बाकी वाले राजकुमारों का तो खूब लाड प्यार करता परन्तु गुटिया राजा उसे आंखों देखा भी नहीं सुहाता ।

गुटिया राजा के हाथ पैर और बाकी सारा शरीर तो छोटा परन्तु चेहरा और सिर पूरे जवान आदमी जितना बड़ा । वह सारे राजकुमारों से अधिक सुन्दर । उसकी बोली मीठी ।

एक दिन गुटिया राजा ने अपनी मां से पूछा कि राजा उससे इतने नाराज क्यों रहते हैं । छहों राजकुमार तो सुन्दर घोड़ों पर सवारी करते हैं । उसे कोई घोड़ा क्यों नहीं देते ? क्या वह राजा का कुंवर नहीं है ! राजा नहीं दे तो कोई बात नहीं, खुद मां ही साईस से कह कर एक घोड़ा मंगा दे ।

रानी ने कहा — अप्रिय रानी की कौन परवाह करता है ? एक पायली गुज्जी का आटा मिलता है, जिससे सारा खर्च चलाना पड़ता है; घोड़े का खर्च हम कैसे झेल सकते हैं !

मां की यह बात सुनने के बाद गुटिया राजा ने कभी जिद्द नहीं की । टूटे फूटे घर में चूहे खाने के लिए एक बिल्ली थी । हाथ में भाले की जगह एक सलाई लेकर वह तो बिल्ली के ऊपर बैठ कर खेलने कूदने लगा । लोग हंसते तो भी वह परवाह नहीं करता ।

राजा काफी बूढ़ा हो चला था । एक बार उसने आईने में मुंह देखा तो दाढ़ी और सर के केस चांदी की तरह उजले सफेद ! यह तो मौत की काली निशानी थी । राज का सुख तो अब ही आने लगा । इतने वर्ष तो संतान की चिन्ता के सामने सुख को कभी देखा तक नहीं था । राजकुमार बड़े हो कर यदि अमर फल लाकर देवें तो जवानी वापिस लौट आये ।

राजा ने छहों राजकुमारों को बुलाकर अपने मन की इच्छा प्रकट की । आज्ञा मानने के सिवाय दूसरा कोई चारा नहीं था । खजाने से हीरे मोतियों के थैले भरा कर घोड़ों पर बैठ दूसरे दिन अमरफल लाने लिये रवाना हो गये ।

गुटिया राजा को जब इस बात की खबर पड़ी तो वह भी अपनी बिल्ली पर बैठकर राजा के पास गया । अमरफल लाने की अपनी इच्छा उसने बढ़ बढ़

कर बताई परन्तु राजा ने धिक्कार कर उसका अपमान कर दिया । तो भी वह माना नहीं । मां का आशीर्वाद लेकर बिल्ली पर बैठ उनके पीछे का पीछे भागा और थोड़ी ही देर में भाइयों के साथ हो लिया । सभी भाइयों ने सोचा कि रास्ते में मन लगाने के लिए ठीक खिलौना आया । एक राजकुमार ने कहा : थोड़ा दूर रहना । घोड़े की टापों के नीचे आ गया तो कचूमर निकल जायगा ।

मार्ग चलते चलते तीखे बेरों के झाड़ आये । बेरों के भार से झाड़ियां दुहरी हो चली थीं । बाकी छहों भाइयों ने तो घोड़ों पर बैठे हुए ही भालों से बेर गिरा कर अपनी झोलियां भरलीं । गुटिया राजा को हिदायत कर दी कि वह जमीन पर गिरे बेरों के हाथ नहीं लगावे ।

गुटिया राजा ने भी जवाब दिया कि दूसरे के गिराये हुए बेरों को खाने वाली रात तो उसका भी जन्म नहीं हुआ ।

उसने बिल्ली की आंख में सलाई चुभाई कि वह उछल कर झाड़ी पर चढ़ गई । फिर उसने छांट छांटकर जी भर बेर खाये ।

उसके बाद में गहगहाट करती एक नदी आई । छहों भाइयों ने कहा : गुटिया राजा, जीने से मन भर गया हो तो नदी में उतरना । बेर की झाड़ी के भरोसे दूसरी कोई जोखम उठाई तो बिना मौत मारे जाओगे ।

यह सीख देकर छहों भाइयों ने तो अपने अपने घोड़े नदी में उतार दिये । घोड़े मंझधार पहुंचे तब गुटिया राजा ने बिल्ली की दूसरी आंख में सलाई चुभाई । वह तो कमान से छूटे हुए तीर की तरह घोड़ों के ऊपर से होकर दूसरे किनारे जाकर रुकी ।

गुटिया राजा अपने भाइयों की आवभगत करने के लिए सामने खड़ा मिला । भाइयों ने भी सोचा—है तो पट्ठा करामाती ।

आगे बस्ती में घुसते ही एक बुढ़िया मनुहारें करके उन्हें अपने घर ले गई । सब लोगों ने वहीं रात विश्राम करने का निश्चय किया । बुढ़िया के सात लड़के थे और एक लड़की । शाम को भोजन करने के बाद बुढ़िया अपने बच्चों के साथ बरामदे में और गुटिया राजा सहित वे सातों भाई पास के बरामदे में सो गये ।

बाकी सारे भाई तो सोते ही घोर निद्रा के वशीभूत हो गये पर गुटिया राजा को नींद नहीं आई । आधी रात बीतने पर गुटिया राजा निकला तो क्या देखता है कि वह बुढ़िया एक कूंडा और छुरी लेकर किसी की ताक में बैठी है । गुटिया राजा कुछ तो पहले ही सोच समझ कर जगता रहा और अब तो

उसे पूरा विश्वास हो गया कि बुढ़िया निश्चय ही कोई डायन है ।

बरामदे में आकर उसने सब भाइयों को अपनी सलाई चुभा चुभा कर जगाया और धीरे से बोला — गुटिया राजा जाग रहा, डायन छुरियां मांज रही, सावधान भई सावधान !

एक एक करके सारे भाई घोड़ों पर चढ़ कर खिसक गये । गुटिया राजा ने बड़ी होशियारी से अपने भाइयों की जगह डायन के सातों बेटों को सुला दिया और डायन के घर से नौ दो ग्यारह हो गया ।

थोड़ी देर बाद जब डायन ने कोई खटका नहीं सुना तो वह कूंडा और छुरी लेकर अन्दर आई । उसने सातों के गले काट कर पेट भर उनका खून पिया और उनके मुंह छींके में टांग दिये ।

सवेरे डायन की बेटी ने उठते ही कलेवा मांगा तो मां ने कहा कि छींके में से एक मुंड लेकर नाश्ता कर ले ।

छींके में तो सारे मुंड भाइयों के ! बहन कांपती कांपती मां के पास गई । रोते रोते सारी बात बताई । पहले तो मां को विश्वास ही नहीं हुआ । पर अपनी आंखों से देख लेने पर कोई सन्देह नहीं रहा । कमीने गुटिया की यह कारस्तानी । आज से पहले इस घर में आया कोई बटोही कभी जीवित नहीं बचा । वह सिंहनी का रूप धारण कर घोड़ों की टापों के जरिये पीछे पीछे भागी ।

छहों भाई तो सिंहनी की गर्जन सुनते ही घोड़ों से नीचे गिर गये । गुटिया राजा बिल्ली पर बैठा हुआ ही सामने लपका । पहले तो सलाई से सिंहनी की आंखें फोड़ दी और फिर पत्थर से मार मार कर उसके प्राण निकाल दिये ।

सिंहनी की पूंछ घसीटते घसीटते वह उसे सारे भाइयों के पास ले गया तब उनको सिंहनी की मृत्यु का विश्वास हुआ ।

घोड़ों पर बैठकर उन्होंने गुटिया राजा से कहा — तू व्यर्थ मन में घमण्ड कर रहा होगा कि तूने सिंहनी को मारा है । वह तो हमारे भालों से मरी है ।

तब गुटिया राजा ने कहा — मैंने मारी हो तो मैं घमण्ड करूं ! भला मेरी सलाई से सिंहनी कब मरती !

आगे जाने पर छहों भाइयों ने सोचा कि अब इस व्याधि को साथ क्यों रखना ! अमरफल लाने में इसको भी अपने साथ यश मिलेगा । मार्ग के अलग होते ही उसे अलग कर दिया । गुटिया राजा भी ऐसे अहसान फरामोश भाइयों के साथ खुद नहीं रहना चाहता था । वह भी अपनी बिल्ली पर बैठकर

एक ओर टल गया।

चलते चलते गुटिया राजा के कानों में एकाएक सांय सांय करती एक आवाज आई। उसने देखा कि सामने एक बाज उड़ते हुए तोते को पकड़ने के लिए झपटा है। गुटिया राजा ने तो भली सोची न बुरी। बिल्ली की आंख में सलाई चुभा कर उसे ऊंची कुदाई। बाज को सलाई से छेदकर मार डाला। हरा हरा तोता उसकी गोदी में आकर गिरा।

बहुत पुचकारने पर भी तोते ने आंख नहीं खोली। तब गुटिया राजा ने पास के सरोवर पर जाकर उसका शीतल जल तोते पर छिड़का। अपने चुल्लू में लेकर थोड़ा पानी उसे पिलाया। इतने उपाय करने पर तोते ने पंख फड़-फड़ा कर आंखें खोलीं।

तोते की कंपकंपी मिटी तो वह बोला — मैं तोतों का राजा हूं। तुमने मेरे प्राण बचाये हैं। मेरे योग्य कोई काम हो तो बताओ। अहसान उतारने पर ही मुझे चैन मिलेगा।

गुटिया राजा ने अमरफल की बात बताई तो तोते ने कहा कि यह तो उसके लिए सबसे सरल काम है। सात समुद्र पार उसके देखा हुआ एक अमर-फल का वृक्ष है।

गुटिया राजा तीन दिनों तक उसी स्थान पर बैठा हुआ राह देखता रहा। चौथे दिन सूरज उगने के साथ ही तीन तोतों ने तीन अमरफल लाकर उसे दिये। गुटिया राजा भी तोतों के राजा से विदा लेकर अपने देश की ओर रवाना हो गया।

राजा ने अपने सातवें राजकुमार को इतना करामाती नहीं समझा था। उसे शाबासी दे कर अमरफल खाया तो राजा उसी समय जवान हो गया। गुटिया ने एक अमरफल अपनी मां को दिया। वह भी राजा के जैसी हो गई। राजा ने उसे अपनी पटरानी बना लिया।

एक अमरफल गुटिया राजा ने खुद खाया। उसे खाते ही वह चार हाथ का भरपूर नौ जवान बन गया। उससे लम्बा आदमी सारे राज्य में नहीं था।

फिर राजा के बहुत कहने सुनने पर वह अपने भाइयों को ढूढ़ने के लिए वापिस रवाना हुआ। पवनपंखी घोड़े पर बैठ कर वह पवन की गति से उड़ने लगा। सीधा, सातों बेटों को मारने वाली उसी डायन के घर गया। मां के मरने पर बेटी ने उसका काम संभाल लिया था। उसके आंगन में सवार समेत छः घोड़ों की पुतलियां देखी तो वह तुरन्त समझ गया कि वे उसके भाइयों की

हो पुतलियां हैं।

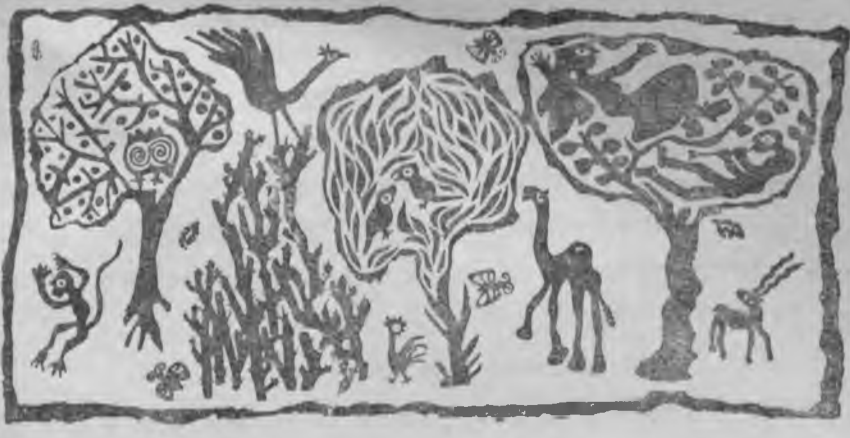
गुटिया राजा तो घोड़े से उतर कर खट खट करता निश्शंक बरामदे में चला गया। डायन की बेटी सिंगार कर रही थी। उसकी चोटी पकड़ कर वह उसे बाहर घसीट लाया। पछाड़ने वाला ही था कि वह रोती हुई बोली—मुझे मत मार। मैं तेरी काली गाय हूं।

तब उसने कहा कि तू मेरे छहों भाइयों को जिन्दा करे तो मैं तुझे छोड़ने की बात सोच सकता हूं।

डायन की बेटी ने मंजूर किया तो उसने उसे छोड़ा। अमृत का कलश लाकर उसने पुतलियों पर छींटे मारे तो सभी जीवित हो गए।

छहों भाइयों को साथ लेकर वह अपने राज्य में आया। राजा ने सभी से पूछा तो उन्होंने गुटिया राजा की सराहना की। यदि वह साथ नहीं होता तो वे कभी के मर गए होते।

राजा ने खुश होकर अपने जीते जी गुटिया राजा को राज्य सौंप दिया। एक चक्रवर्ती राजा की कन्या के साथ बड़े धूमधाम से उसका विवाह कर दिया। वह कई युगों तक जीता रहा और ठाट से राज्य करता रहा। गुटिया राजा के यश का प्रकाश सूरज से भी अधिक चमका!



सोनल बाई

एक गांव में एक किसान रहता था। उसके एक अत्यन्त रूपवती बेटी थी— जिसका नाम था सोनल बाई। सोनल के सिर के केश सोने के थे। सोनल की मां, बेटी के अमूल्य केशों का पूरा ध्यान रखती थी। केशों की बेहद संभाल करती और बेहद सुरक्षा करती। जब अपनी सहेलियों के साथ सोनल तालाब में नहाने जाती तो उसकी मां हमेशा उसके केश गिनती। नहा धो कर जब सोनल वापिस लौटती तब भी उसके केशों की गिनती होती।

एक बार सोनल तालाब में नहा कर वापिस लौटी तो उसकी मां ने ध्यान से उसके केश गिने—एक केश कम हुआ। मां को इस बात की बेहद चिंता हुई। उसने तुरन्त सब केश फिर से गिने। जो केश कम था वह कम ही रहा। सौ बार गिनती करने से भी क्या होता। यदि इसी प्रकार रोज का एक केश कम होने लगा तो यह नुकसान कैसे झेला जायगा! मां को सोनल पर बहुत गुस्सा आया! उसने सोनल को उसके भोलेपन और बचपने के लिए खूब आडे हाथों लिया। फटकारती हुई बोली—सोनल, अब तू कोई दूध पीती बच्ची तो है नहीं; पर तेरा बचपना अभी भी नहीं मिटा है। आखिर तेरी समझ ही तेरे काम आयेगी। मैं इतनी लड़ती-झगड़ती हूं, तो भी तू होश में नहीं आती। लाख

रुपये का केश खो कर आ गई ! अब तुझे कितनी ही खरी खोटी सुनाऊं तो भी वह तो वापिस मिलने से रहा । आइन्दा ध्यान रखना । जो अब कभी केश गुमा दिया तो तू तेरी जाने । फिर मेरे जैसी बुरी कोई नहीं होगी ।

सोनल बेहद कोमल स्वभाव की थी । मां के चिड़ते ही वह सिसक-सिसक कर रोने लगी । मां के बोल उसके कलेजे में चुभ गए । घर से उसका मन फट गया । वह चुपचाप छिप कर घर से बाहर निकल गई । थोड़ी ही दूरी पर मार्ग के किनारे एक चन्दन का पेड़ था । वह उसके ऊपर चढ़ कर एक डाली पर बैठ गई और रोती रोती दुखी कंठ से बोली :

चढ़ चढ़ रे चन्दन के पेड़ ऊंचा रे चढ़ !

उसकी पलकों से ढलक कर आंसू डाल पर गिरे । उसके कहने के साथ और आंसू के गिरते ही , वह चन्दन का पेड़ ऊंचा बढ़ने लगा , जो ऊंचा बढ़ता ई गया ।

सोनल को घर में नहीं देखा तो सारे घर के लोग उसे ढूंढ़ते ढूंढ़ते चन्दन के पेड़ के नीचे आये । सोनल तो यह डाली पर बैठी ! और पेड़ ऊंचा ऊंचा बढ़ता ही जाता है । वे सब गरदन तना तना कर ऊंचा देखते रहे और पेड़ ऊंचा बढ़ता ही गया — उनकी पहुंच और चतुराई से दूर । सोनल को वापिस उतारना दूभर हो गया । उसके घरवाले चन्दन के पेड़ को पकड़ कर खड़े हो गये । सोनल की सहेलियां आसपास आकर खड़ी हो गई । वे सब अपने अंतर्मन से पेड़ के नीचे झुकने की कामना करने लगे । पर वह पेड़ तो राई जितना भी नीचा नहीं हुआ । उसकी मां थर थर कांपने लगी । बिलख बिलख कर रोने लगी । मां को इस प्रकार कलपते देख कर उसकी सहेलियां घूमर लेती हुई गाने लगीं :

ढोल और ढमाका बाजे
रूपल जैसी सैयां नाचे
सोनल बाई नीचे पधारो – ओ – नीचे पधारो ।

सहेलियों ने बहुत मनुहारें की पर हठीली सोनल नहीं मानी सो नहीं मानी । फिर ढोल नगारे बजे । सहेलियां फिर नाची , बहुत नाची । हाथ जोड़ कर मिहोरे किये , पर सोनल ने तो कान ही नहीं दिया । बल्कि वह तो चन्दन के पेड़ को बार बार कहने लगी :

चढ़ चढ़ रे चन्दन के पेड़ , ऊंचा ही चढ़
रे ऊंचा ही चढ़

और वह चन्दन का पेड़ ऊंचे आकाश में बढ़ता ही गया। डाली पर बैठी सोनल गुड़िया जितनी दिखाई देने लगी। इस बार उसकी मां रोती हुई बोली :

ढोल बाजे, ढमाका बाजे
बेटी तेरी अम्मा नाचे
सोनल बाई नीचे पधारो – ओ – नीचे पधारो

पर हठीली सोनल, मां के कहने से भी नहीं मानी। उसने तो और अधिक हठ झेल लिया। रोती रोती फिर बोली :

चढ़ चढ़ रे चन्दन के पेड़, ऊंचा ही चढ़
रे ऊंचा ही चढ़

जिस तरह सूरज की किरण आकाश से नीचे धरती पर उतरती है उसी तरह आंखों की दृष्टि के साथ वह चन्दन का पेड़ तो ऊंचा बढ़ता ही गया। अब तो सोनल एक गुजक जितनी ही दिखने लगी। उसकी मां चक्कर खाकर नीचे गिर गई। इस बार उसके बाप ने कहा :

ढोल और ढमाका बाजे
ताता थैया बाबुल नाचे
सोनल बाई नीचे पधारो – ओ नीचे पधारो

पर हठीली सोनल ने तो बाप के कहने की भी परवाह नहीं की। बल्कि चन्दन के पेड़ से फिर बोली :

चढ़ चढ़ रे चन्दन के पेड़, ऊंचा ही चढ़
रे ऊंचा ही चढ़

और चन्दन का पेड़ ऊंचा चढ़ता ही गया। डाल पर बैठी सोनल तो अब बिल्कुल ही दिखाई देनी बन्द हो गई। उसका बाप सोनल का नाम पुकारता हुआ चक्कर खा कर धम्म से नीचे गिर गया। सोनल का मन नहीं पसीजा सो नहीं पसीजा। वह डाली पर बैठी सब कुछ देखती थी, सब कुछ सुनती थी।

सोनल का भतीजा भी वहीं खड़ा था। उसने यह सारी रचना देखी तो वह भी नकल करने लगा। उसने ताली बजा बजा कर नाचना शुरू किया। अपनी तुतलाती बोली में वह गाने लगा।

ढोल और ढमाका बाजे
चन्दा जैसा मुखड़ा नाचे
सोनल बाई नीचे पधारो — ओ नीचे पधारो।

चांद सूरज जैसे अपने भतीजे से सोनल को बहुत प्यार था। उसको ताली बजाकर नाचते देखा तो उसका मन पसीज गया। एक अबोध बालक की विनती को वह किसी प्रकार टाल नहीं सकी। उसने तुरन्त चन्दन के पेड़ से कहा :

ढल ढल रे चन्दन के पेड़
नीचा ही ढल, नीचा ही ढल

सोनल का इतना कहना हुआ कि वह चन्दन का पेड़ नीचे ढलने लगा, जैसे आकाश से तारा टूटा हो। वह तुरन्त जमीन के बराबर हो गया। उसके घर वाले बहुत खुश हुए। बेहोश पड़ी मां झट खड़ी हो गई। आंखें पोंछती हुई कहने लगी— मेरी लाडली सोनल, अब तुझे कभी बुरा भला नहीं कहूंगी। मेरे सौ गुनाह माफ करदे। पर सोनल का मन अपने घर के लोगों से फट चुका था। उसने किसी दूसरी बात की ओर ध्यान ही नहीं दिया। जमीन के पास आते ही उसने अपने भतीजे को गोद में उठा लिया और बोली :

चढ़ चढ़ रे चन्दन के पेड़—ऊंचा ही चढ़
रे ऊंचा ही चढ़

सोनल को यह कहते देर लगी पर चन्दन के पेड़ को आकाश में ऊंचा चढ़ते देर नहीं लगी। वे दोनों बुआ भतीजे ऊंचे आकाश में चढ़ गये। देखने वालों की दृष्टि में बहुत ऊंचे। अब क्या उपाय किया जाय। घर वालों ने बहुत हाथ जोड़े, बहुत मनुहारें की, बहुत निहोरे निकाले पर सोनल नहीं मानी सो नहीं मानी। दोनों वहीं उस पेड़ पर रहने लगे। सोनल की भाभी रोज सोने के कटोरे में चूरमा और एक सोने की झारी में पानी लेकर समय पर आ जाती। कलेवा करने के लिए सोनल से मीठे निहोरे करती। सोनल किसी प्रकार अपनी भाभी की बात नहीं टाल सकी। भाभी के पेड़ तले आते ही वह पेड़ को नीचा ढलने का कहती। देखते देखते पेड़ जमीन के बराबर आ जाता। चूरमा और पानी लेकर वह वापिस उस पेड़ को ऊंचा बढ़ने का कहती और और वह चन्दन का पेड़ आंखों की दृष्टि के वेग से आकाश में ऊंचा चढ़ जाता। डाल पर बैठी हुई सोनल पहले बड़े लाड से अपने भतीजे को चूरमा खिलाती, फिर खुद खाती।

यों करते करते कई दिन बीत गये। इस बीच ऐसा संयोग हुआ कि उसी पेड़ के तले एक बार एक राजकुंवर की बरात विश्राम करने के लिए थोड़ी देर के लिए रुकी। बरात के सारे बराती भूखे प्यासे थे। सोनल ने उनके पपड़ी जमे हुए होठों और उतरे हुए चेहरों को देखा तो उसे उन पर दया आ गई।

उसका मन पसीज गया। उसने अपने कटोरे से एक दाना चूरमे का नीचे गिरा दिया। पर वह दाना नीचे गिरते ही इतना बड़ा हो गया कि सारे बरातियों के भर पेट खाने पर भी खतम नहीं हुआ। फिर उनने अपनी झारी से पानी की एक बूंद नीचे गिराई। वह बूंद नीचे गिरते ही मीठे पानी की एक तलैया के रूप में बदल गई। सब बरातियों ने जी भर कर निर्मल ठंडा पानी पिया। भूख और प्यास मिटने के बाद राजकुमार और सारे बरातियों ने इस माया-जाल पर विचार किया तो उनको बहुत अचरज हुआ। आंखों देखते यह क्या लीला हो गई ! राजकुमार के मन में यह बात समाई नहीं ! इस लीला का पता लगाने के लिए उसने अपने नौकरों को आदेश दिया कि वे तुरन्त उस पेड़ पर चढ़कर इस कौतुक की ठीक तरह जांच करें कि यह क्या हुआ। राजकुमार का आदेश मिलते ही सब नौकर उस चन्दन के पेड़ के ठेट ऊपर तक चढ़ गए तो भी उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया। उन्होंने सारी डालियों और पत्तों के झुरमुटों में ढूंढ़ा पर कहीं कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा। अन्त में सारे नौकरों-चाकरों के हार जाने पर खुद राजकुमार उस पेड़ पर चढ़ गया। उसने एक एक पत्ते में खोज की। खोजते खोजते अंत में सबसे ऊपर के झुरमुट में दो पत्तों के बीच उसे सोनल और उसका भतीजा बैठे दिखाई दिये।

सोने के केशों वाली उस लड़की को देख कर राजकुमार को बेहद आश्चर्य हुआ। वह मन में थोड़ा बहुत डरा भी। उसने सोनल से पूछा — बाला, तू कौन है ? इन्द्र की परी, स्वर्ग अप्सरा या कोई डायन-भूतनी ?

सोनल ने नम्रता से जवाब दिया — न मैं इन्द्र की परी हूं, न मैं स्वर्ग की अप्सरा हूं और न मैं कोई डायन-भूतनी। मैं तो धरती की मानवी देह हूं। अपनी मां से रूठ कर यहां छिपी बैठी हूं। साथ में यह मेरा भतीजा है।

सोनल के रूप-रंग को देख कर, उसकी मीठी वाणी सुनकर और उसके सोने के चमकते केशों को देखकर राजकुमार तो उसी पल पागल हो गया। वह अपनी सुधबुध भूल गया। पेड़ के पत्ते पत्ते में उसे सोनल की छवि दिखने लगी। अपने हाथों में उसके केश लेकर उसने कहा — मैं तुम्हें अपनी रानी बनाना चाहता हूं। तुम्हारी मरजी हो तो इसी समय मेरे साथ चली चलो। वर्ना तुम्हें छोड़ कर अब मैं अपने राज्य मरने तक भी वापिस नहीं जाऊंगा। अब इस पेड़ पर तेरे सहारे ही दिन निकाल दूंगा। तेरे बिना अब एक पलक भी नहीं जी सकता।

राजकुमार की बात सुन कर सोनल ने लाज से अपना सिर झुका लिया।

धीरे से बोली — मैं अपने इस भतीजे के बिना खुद नहीं जी सकती । यदि आप इसे हरदम मेरे साथ रहने की अनुमति दें तो मैं आपका प्रस्ताव कबूल कर सकती हूं ।

राजकुमार ने कहते ही सोनल की बात मान ली । सोनल ने राजकुमार की बात मान ली । वह रानी बन कर सोने की पालकी में बैठ गई । गोद में अपने भतीजे को बिठा लिया । हाथ जोड़ कर और सिर नमा कर उसने चन्दन के पेड़ से विदा ली ।

राजकुमार का राज्य वहां से बहुत दूर था । सोनल के भतीजे को रास्ते में बेहद प्यास लगी । उसका गला और होंठ सूखने लगे । रास्ते में निर्मल पानी का एक बड़ा सरोवर आया । सोनल ने अपनी नौकरानियों को पानी लाने का आदेश दिया । दासियों ने कहा कि इस सरोवर का पानी पीने से मनुष्य कौवा बन जाता है । आपकी आज्ञा हो तो ले आवें ।

सारी बात जानने के बाद सोनल यह आदेश कैसे देती ? उसने भतीजे को लाड करके समझा दिया कि यह पानी तो एकदम खारा है । आगे अमृत जैसा ठंडा और मीठा पानी है । वहां पीना ।

आगे फिर दूसरा सरोवर आया । सोनल ने दासियों से पानी लाने को कहा तो वे बोलीं — इस सरोवर का पानी पीने से मनुष्य कुत्ता बन जाता है। आपकी आज्ञा हो तो अभी ले आवें ।

भला यह बात जानने के बाद सोनल कैसे पानी का आदेश देती । भतीजे का प्यास के कारण प्राण निकल रहा था पर जोर क्या करे । आंसू ढलकाते हुए उसने भतीजे के गले को चूम लिया । बोली — मेरे लाडले चांद ! थोड़ा और मजबूत रह, इस सरोवर के पानी में तो दुर्गन्ध भरी है । अगले सरोवर का पानी दूध जैसा मीठा है । फिर उसने राजकुमार से रथ जल्दी चलाने को कहा तो रथ दुगने वेग से चलने लगा । रास्ते में तीसरा सरोवर आया , पूरा भरा हुआ , लहरें लेता । सोनल ने जल्दी करते हुए दासियों से कहा — अब तो दौड़ो , फुरती करो ।

सोनल की जल्दी देख कर भी दासियां उठी नहीं । बोलीं — पानी लाते हुए कौन से हमारे पैर घिसते हैं । आपकी आज्ञा हो तो हमारे क्या देर है ! पर इस तालाब का पानी पीने से आदमी सांप बन जाता है । अब आपकी जैसी आज्ञा हो वैसा ही करें ।

भला सोनल यह आज्ञा कैसे देती ? सांप तो कौवे और कुत्ते से भी बुरा ।

इससे तो अगले तालाब पर पहुंचना ठीक होगा। इस बार राजकुमार ने बिना सोनल के कहे ही रथ और तेज चलाने का आदेश दे दिया। रथ बहुत वेग से चला। देखते देखते चौथा तालाब आ गया।

रोने के स्वरों में सोनल ने कहा — जाओ, लक्ष्मियों अब तो ढील मत करो।

पर दासियां तो अपनी जगह से हिली ही नहीं। मुंह उतार कर बोली— अब आप जैसी आज्ञा दें वैसा ही करें। इस तालाब का पानी पीने से मनुष्य मोर बन जाता है। आपकी आज्ञा होनी चाहिए। विश्वास नहीं हो तो हम खुद पानी पीकर बतावें। सोनल को विश्वास तो पूरा था, पर अब इसका उपाय करे तो क्या करे। भतीजे को तो मूर्छा आ गई थी, आंखों की पुतलियां घूम गई थीं। अब प्राण निकले, अब प्राण निकले। सोनल दुविधा में पड़ गई। यदि नहीं पानी पिलाये तो उसे मरना पड़े। अब पांचवें तालाब तक पहुंचना मुश्किल था। मरने से तो मोर बनना ठीक! जीवित रहा तो मोर वापिस भतीजे का रूप भी धारण कर सकता है। पर मरने के बाद तो कोई उपाय नहीं किया जा सकता। सोनल का ससुराल अभी बहुत दूर था। भतीजा पूरा अचेत हो चुका था। अब तो गिनती के सांस बाकी थे। ठलक ठलक रोती हुई सोनल ने तो आदेश कर ही दिया — कोई बात नहीं। मोर बनता है तो बनने दो। तुम दौड़ कर पानी लाने की बात करो।

सारी दासियां एक साथ भागी। तुरन्त पानी लेकर हाजिर हुई। अचेत भतीजे को पानी का घूंट पिलाते ही वह तो सुरंगा मोर बन गया। गरदन नीची करके उसने दो तीन टहूके दिये। सोनल उसे हाथों में लेकर खूब रोई। अपनी बूआ को इस तरह रोती देख कर मोर भी ठलक ठलक आंसू ढलकाने लगा। दोनों एक दूक दूसरे के गले में बांहें डाल कर खूब रोये। रोते रोते थक गये तो राजकुमार ने सोनल को समझाया पर वह तो तालब छोड़कर उसके साथ आगे जाने के लिए किसी तरह तैयार नहीं हुई। उधर राजकुमार ने मन में यह निश्चय कर लिया कि वह सोनल को साथ लिए बिना एक पैर भी आगे नहीं बढ़ायेगा। बात तन गई। आखिर सोनल इस बात के लिए राजी हो गई कि यदि राजकुमार उसे रोज इस तालाब पर अपने भतीजे को खिलाने पिलाने के लिए आने दे तो वह साथ चल सकती है। राजकुमार तुरंत उसकी बात मान गया। सोनल बांहें भर भर कर अपने भतीजे से गले मिली। उससे अलग होती हुई सिसकियां भर भर कर रोई। वह मोर भी उसके रथ के साथ साथ बड़े प्रेम से चलने लगा।

सोनल रथ में बैठी चीत्कार मार कर रोने लगी । रोती रोती बेहोश हो गई । अन्त में लाचार होकर तालाब के मोरों के बीच अपने भतीजे को छोड़, वह राजकुमार की गोदी में निढ़ाल हो गई ।

सोनल रोज अपने ससुराल से चूरमे का कटोरा और गंगाजल की भारी लेकर उस तालाब पर आती । नीम के पेड़ की डाली से लटकते हुए छींके में अलग अलग चूरमा और पानी डाल देती । पास खड़ी रह कर खूब अच्छी तरह उसे खाना खिलाती । दूर से देखते ही वह मोर उड़कर सोनल के सामने आ जाता । उसके पैरों में लोटता । चूरमा खाने के बाद वह मस्त हो कर खेलता । छतरी तानता, नाचता और टहूके देता । सोनल बहुत देर तक उससे बातें करती । उसका लाड करती । खुद उसके साथ खेलती, नाचती । पर वापिस अपने राजमहल में लौटते समय आंसू ढलकाती और बड़ी मुश्किल से जबरदस्ती उससे विदा लेती ।

इस तरह कई दिन बीत गए । सोनल की सौत उससे बहुत ईर्ष्या करती थी । उसके रूप और सुनहरे केशों पर खीजती थी । सोनल पर रीझे हुए राजकुमार ने उसे दुहाग दे रखा था । वह तो आठ पहर चौसठ घड़ी सोनल के नशे में डूबा रहता । सोनल की सौत कई दिनों से बैर निकालना चाहती थी । पर अब तक उसके हाथ मौका नहीं लगा था । एक दिन उसने सोनल से बदला लेने की युक्ति निकाली । उसे मन में विश्वास हो गया कि उसकी तरकीब पार पड़ जायगी । वह खुद चलाकर सोनल के महल में गई । गुड़ से भी मीठी बोली में कहने लगी : मेरी प्यारी बहना, तू रोज तालाब पर जाने की तकलीफ उठाती है, एक दिन मुझे भी तेरे सुन्दर भतीजे की सेवा करने का मौका दे । तेरे सुन्दर भतीजे को देखने की मेरी बड़ी इच्छा है । कई दिनों से मेरे मन में यह बात थी पर मैं कह नहीं सकी । तू इजाजत दे तो आज मैं खुद तालब पर चूरमा और गंगाजल ले कर चली जाऊं ।

सोनल ने सौत की मीठी बातों को सच मान लिया । उसने तुरन्त उसका कहना स्वीकर कर लिया । बोली — मेरे बड़े भाग्य कि आप इतने दिनों बाद यहां पधारे तो सही । आपने मेरे से क्यों छिपाया । मेरा भतीजा सो आपका भतीजा । भला इतनी तुच्छ बात के लिए मैं आपको मना कैसे कर दूं । आपकी जैसी इच्छा हो वैसा करें ।

सोनल ने सारी बात उसे ठीक तरह समझा दी कि उसके भतीजे की क्या पहचान है, तालाब किस दिशा में है और छींका कहां लटकना है । सौत ऊपर

के मन से हां हूं करती रही पर उसके मन में तो विष भरा हुआ था। सोनल के हां करते ही वह उसी समय तालाब पर पहुँच गई। सोनल की तरह उसका भोला भतीजा आवाज सुनते ही उसके सामने दौड़ा आया। उमंग से छतरी तान कर उसके पास आकर नाचने लगा। पर सौत के मन में कुटिलता थी। उसने तो भला सोचा न बुरा, गुस्से में भर कर अपनी दोनों मुट्ठियों में मोर की गरदन पकड़ कर मरोड़ दी। गरदन मरोड़ते ही तने हुए पंखों की छतरी सिमट गई और वह वहीं ढेर हो गया। बिना हाथ धोये ही, सौत उसका चूरमा खुद खा गई और सारा गंगाजल गट गट अपने कंठों के नीचे उतार लिया। फिर अपने मन में खूब हर्ष मनाती, गर्व के साथ अपने महलों में लौट आई।

दूसरे दिन सोनल अपने भतीजे के लिए कलेवा लेकर तालाब पर गई। वह रास्ते में जल्दी के कारण जल्दी जल्दी दौड़ने लगी, मानो अपने भतीजे से मिले उसे कई वर्ष बीत गए हों। तालाब के पास पहुंचते ही उसने जोर से आवाज दी। सोनल की आवाज सुनते ही तालाब के सारे मोर रोने लगे। उसने चारों ओर व्याकुल दृष्टि से देखा, पर कहीं अपना भतीजा नहीं दिखाई दिया। उसने फिर जोर से आवाज दी। उत्तर में फिर तालाब के मोर जोर से क्रन्दन करने लगे। उसका मन अनहोनी आशंका से कांप उठा। वह पागल की तरह एक पेड़ के नीचे जाती, अपने भतीजे को ढूंढ़ती और आवाज दे कर पुकारती। अन्त में ढूंढ़ते ढूंढ़ते एक पेड़ के नीचे उसे अपने भतीजे की लाश मिली। गरदन मरोड़ी हुई और पांखें टूटी हुई। सारे मोर वहां आकर इकट्ठे हो गए। सोनल के मुंह की ओर व्याकुल दृष्टि से देखकर वे क्रन्दन करने लगे।

सोनल, भतीजे की लाश पर पागल हो कर गिर पड़ी। उसको उठाकर बार बार अपनी छाती से लगाया। भतीजे की अनसोची मौत का उसके मन में ऐसा सदमा बैठा कि रोते बिलखते उसके प्राण निकल गए। पास में खड़े मोर बहुत रोये। पवन और आकाश खुद रोने लगे।

तालाब के सारे मोरों ने मिलकर सोनल और उसके भतीजे का दाह संस्कार किया। उन दोनों के वियोग में उन सब ने दाना पानी बन्द कर दिया। वे सारी रात सारे दिन क्रन्दन करते और आंसू ढलकाते। थोड़े दिनों में उन सब के प्राण पंखेरू उड़ गए। तालाब का सारा पानी खतम हो गया। सारे झाड़-धान और पेड़ सूख गए। सोनल और उसके भतीजे का जिस जगह दाह संस्कार हुआ वहां चन्दन के दो पेड़ कई युगों से अब तक उसी तरह खड़े हैं। वे सोनल और उसके भतीजे के लिए तब से खड़े खड़े झुरते, रोते और बिलखते हैं।



हंसी का अर्थ

बुढ़ापे की मार बहुत बुरी होती है। हाथी और सिंह भी इसकी मार के सामने मात खा जाते हैं। एक बार एक सिंह बूढ़ा हो गया तो विचारे को शिकार की भी तकलीफ होने लगी। यदि सिंह बूढ़ा होने पर घास खाने लग जाय तो समस्या हल हो जाय। लेकिन इन बुरे दिनों में सिंह न तो घास खा सकता है और न भूखे मर सकता है। बुढ़ापे में सिंह की हालत बहुत बुरी हो जाती है। सिंहों में केवल शक्ति ही होती है, बुद्धि तो उनके पास से भी नहीं निकलती। बुढ़ापे से अशक्त बने उस सिंह ने बहुत यत्न करके एक युक्ति निकाली। जीवन में कभी भी बुद्धि का प्रयोग करने की जरूरत ही नहीं पड़ी थी इसलिए सोचते सोचते उसके दिमाग की नसों में दर्द होने लगा। ऊंट के मींगनों की माला गले में डाल कर

उसने एक संत का वेष धारण किया। मैदान में कोई जानवर उसे दिखाई दे जाता तो वह राम नाम की झड़ी बांध देता। धीरे धीरे, डगमगाता, धरती पर फूंक फूंक कर पंजे रखता हुआ वह चलता और हमेशा अपनी नजर नीची झुकाए रखता।

एक बार उस सिंह को इमली के पेड़ पर बैठा एक बंदर नजर आया। भूख से मरते उसका आज पांचवा दिन था। बन्दर पर नजर पड़ते ही उसके पेट में जैसे भूख की भट्टी सुलग उठी। मुंह से टपकती लार को गुटकता वह राम-नाम जपने लगा। जोर से फूंक मार मार कर सावधानी से धीरे धीरे कदम रखता चलने लगा। बन्दर ने बहुत देर तक इस बात पर विचार किया तो भी उसकी समझ में सिंह का यह व्यवहार नहीं आया। अंत में हैरान होकर आश्चर्य के साथ उसने पूछा— राजा साहब, मुझे सामने न कोई खड्डा दिखाई देता है और न कहीं तीखी शूलें; फिर भी आप फूंक फूंक कर कदम रखते हैं, इसका अर्थ क्या? आपका ऐसा स्वभाव तो कभी नहीं था!

सिंह ने सात बार राम का नाम लेकर जवाब दिया—बेटा, तेरी यह बात तो बिलकुल सच्ची है; सिंह का ऐसा स्वभाव कभी नहीं होता। पर मैंने वैराग्य के कारण संत का वेष धारण कर लिया है। गले में यह रुद्राक्ष की माला नहीं दिखाई देती? जीवन भर मैंने हत्याएं कीं। अब ढलती उम्र में मैं भी काया का सुधार करना चाहता हूं। कोई चींटी या मकोड़ा मेरे पंजों के नीचे दब कर मर नहीं जाय, इसलिए फूंक फूंक कर पंजा रखता हूं।" इतना कह कर वह तो जल्दी जल्दी राम नाम जपने लगा।

बन्दर को भी उसकी बात पर सोलह आने विश्वास हो गया। बिचारा जब चींटी को भी कष्ट नहीं देना चाहता तो मेरे पर क्या वार करेगा, यह सोच कर बन्दर निर्विलम्ब इमली के पेड़ से नीचे कूद कर आ गया। ज्ञान और भक्ति की चर्चा करते करते वह उसके बिल्कुल पास आकर खड़ा हो गया। अपने पंजे में पूरा फंसे बिना सिंह ने उस पर वार की कोई चेष्टा नहीं की। अब बंदर को पूरा विश्वास हो गया। सिंह मीठे स्वर में बोला — तू कहे तो तेरे कान में भी राम-नाम का मंत्र सुना दूं।

सिंह को अपने आप पर भी भरोसा नहीं रह गया था इसलिए वार करने से पहले वह पूरी सावधानी रखना चाहता था। बन्दर ने मंत्र सुनने की इच्छा बताई तो सिंह उसके कान के पास अपना मुंह ले गया और पूरी सावधानी से झट उसकी गरदन अपने मुंह में पकड़ ली। बन्दर के सिर में अब एकदम चोट

लगी । अपने पैरों चल कर वह मौत के मुंह में फंस गया । अब क्या किया जाय ! मौत होने में अब कोई कमी नहीं, फिर भी सांस रहते आशा नहीं छोड़नी चाहिए । यह विचार कर बन्दर एकाएक जोर से हंसने लगा ।

सिंह के कानों में जब उसकी हंसी की भनक पड़ी तो उसके आश्चर्य की भी सीमा नहीं रही । मौत के मुंह में भिला हुआ यह इस तरह हंसता कैसे है ? पूछा — बड़े आश्चर्य की बात है । काल के दांत तुझे कुचलने के लिए तड़प रहे हैं और तू मूर्ख की तरह हंसता है ! तेरे जैसा बेवकूफ तो ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलेगा । बता , तुझे हंसी कैसे आई ?

बन्दर ने कहा—यदि इस वक्त मुझे हंसी नहीं आती तो फिर हंसी का अर्थ ही क्या ? मुझे तो साक्षात भगवान के दर्शन हो रहे हैं । यह रूप देख कर अपने आप ही हंसी आ जाती है । मैंने नहीं जाना था कि आपके दांतों में हंसी का यह प्रताप भी है । मुझे तो लगता है कि आपकी डाढ़ों में अमृत है—अमृत । मेरी तरह आप भी जोर से हंस सकते हैं क्या ? ज्यों ज्यों ज्यादा हंसता हूं मुझे तो भगवान के दर्शन और भी स्पष्ट होते जाते हैं ।

सिंह के मन में भी भगवान के दर्शनों का लोभ पैदा हुआ । मरने से पहले यदि एक बार भगवान के दर्शन करलूं तो क्या बुराई है ! वह जोर से हंसने लगा । हंसने के साथ ही बन्दर की गरदन छूट गई । बन्दर तो झट कूद कर इमली के पेड़ पर चढ़ गया और सिंह ने जो हंसना शुरू किया तो हंसता ही गया । पर भगवान के दर्शनों की तो झलक ही नहीं दिखाई दी । वह बन्दर के सामने देखकर बोला—कहां, मुझे तो कहीं भी भगवान के दर्शन नहीं होते ।

बन्दर ने ताना मारते हुए जवाब दिया—इधर देख इधर, भगवान तो प्रत्यक्ष तेरे सामने इमली की डाली पर बैठे हैं । जी भर कर दर्शन करले ।

अब जाकर सिंह को बन्दर की चतुराई और अपने भोलेपन का पता चला । पर पता चलने से क्या होता । चतुराई तो डाली पर चढ़ गई ।

एकाएक बन्दर जोर जोर से रोने लगा । शरमाते हुए सिंह ने हिम्मत कर के पूछा—पगले, मौत के जबड़ों में तो तुझे हंसी सूझी और अब मुक्त होने के बाद तू रोता है, इसका अर्थ क्या ?

बन्दर ने कहा—मैं तो अपनी अक्ल पर रोता हूं कि मैंने तेरी बात पर भरोसा कैसे कर लिया ? यदि तुम्हारे जैसे संत हो गए तो वन की सारी हरियाली सूख नहीं जायगी ! ऐसी भरोसा करने वाली बुद्धि तो मुझे पग पग पर तकलीफ देगी । खुशी की बात इतनी ही है कि तुम्हारे पास मेरे से भी कम बुद्धि है जो

जबड़ों में पकड़ कर भी तुमने मुझे छोड़ दिया। बोल, भगवान के दर्शनों का कैसा आनन्द आया ?

सिंह के मुंह से तो फिर राम का नाम ही नहीं निकला। पूंछ दबा कर वह धीरे धीरे वहां से रवाना हो गया।



सियारनी की चतुराई

एक था सियार और एक थी सियारनी। एक बार वे दोनों एक तालाब में पानी पीने जा रहे थे कि सामने के ऊंचे किनारे पर चढ़ता हुआ सिंह उसके सामने आ गया। भागें, तो सिंह के सामने भाग कर कहां जा सकते हैं और खड़े रहें तो मारे जावें। अब करें तो क्या करें ! मर्दानगी तो इसमें है कि सिंह के सामने से पानी पी कर बिना जोखम निकल जावें। सियारनी ने एक अटकल लगाई। सिंह से नजर मिलते ही सियारनी ने उसे दण्डवत किया और बोली : हम तो कभी से आपकी तलाश में हैं। फिरते फिरते अन्त में यहां आपका पता चला। आपके खोज खोज चल कर अ.खिर आपके दर्शन कर ही लिए।

सिह ने जाना कि शिकार तो फन्दे में फंसा हुआ ही है । मेरे से बचकर कहां जायगा ? इस सियारनी की भी थोड़ी बात सुनलें । एक जम्हाई लेकर उसने भारी गले से कहा—क्या वात हुई ? मुझे क्यों ढूंढ़ रहे थे ?

सियारनी हाथ जोड़ कर कहने लगी—अन्नदाता, केवल आपका ही भरोसा है । आपको एक न्याय इसी समय निपटाना पड़ेगा । आज हम पति - पत्नी में झगड़ा हो गया । अब मैं इसके साथ एक पल भी नहीं रहना चाहती । पर एक विवाद खड़ा हो गया है । मेरे सात बच्चे हैं । उनको कैसे पाल पोस कर बड़ा किया है, यह तो मैं जानती हूं या मेरा राम जानता है । तो भी मैंने परवाह नहीं की । सोचा, जा रे जीव ! सारे बच्चों को रख कर मैं कौन सी वैकुण्ठ चली जाऊंगी । बच्चों को बांटने की बात को लेकर एक उलझन हो गई है । मैं कहती हूं, चार मैं लूंगी, तीन तू ले ।

सियारनी ने सियार की ओर देख कर कहा—पर यह निकम्मा मानता ही नहीं । जिद्द पर अड़ा हुआ है कि चार बच्चे खुद लेगा और तीन मुझे देगा । आप ही देखें, इसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है या नहीं । अब आप जो न्याय कर देंगे वही हमको कबूल होगा । हम दोनों राजी - खुशी आपको पंच बनाते हैं । अन्नदाता, बड़ी आशाएं लेकर आपके पास आये हैं । आप जंगल के राजा हैं; यह न्याय निपटाइये । इस हत्यारे के मन में इतनी भी दया नहीं है कि मैंने कैसे सातों बच्चों को अपने पेट में पाला, कैसे मेरा खून पिला पिला कर इनको बड़ा किया ! मां का फर्ज मैं आपको क्या बताऊं ? आपसे क्या छिपा हुआ हैं ? राजा तो सब कुछ जानने वाला होता है । राज करना कोई हंसीखेल थोड़े ही है ! अब आपकी जो इच्छा हो, वही आज्ञा दें । मैं आपके सिवाय अब किसके पास फरियाद करूं !

सिह मन में बहुत खुश हुआ । समझा कि आज तो बरस बरस का दिन उगा है । सात कोमल कोमल बच्चे और दो ये । कुल जमा नौ जीव ! ऐसा शिकार तो न कभी आया, न आने वाला है । पर अपने मन की बात उसने प्रकट नहीं की । मूंछों पर हाथ फेर कर कहने लगा — मैं जरूर तुम्हारा न्याय निपटाऊंगा । यह तो मेरा काम है । वन का राजा हूं, मेरे राज्य में किसी के साथ अन्याय नहीं हो सकता । मैं दूध का दूध और पानी का पानी करके बता दूंगा । तुम मुझे अपनी खोह के पास ले चलो । मैं दोनो को खुश कर दूंगा ।

सियारनी ने सिह के पैर पकड़ लिए । बोली—नव कोटी के नाथ, आप से हम यही आशा करते हैं । तभी तो मैं आपकी शरण आई !

न्याय करने के लिए सिंह जब उनके साथ रवाना होने लगा तो सियारनी फिर हाथ जोड़ कर नम्रता से बोली—आपकी आज्ञा हो तो थोड़ा पानी पीलूं। इस झगड़े की जलन से मेरा कलेजा धधक रहा है। सिंह ने धीमे से गरदन हिलाकर आज्ञा दे दी। सियारनी ने पेट भर पानी पिया फिर अपने पति की ओर इशारा करके बोली — इसके लच्छन तो ऐसे हैं कि प्यासा मरता मर जाये तो मेरा पिण्ड छूटे। पर क्या करूं, इसके पीछे आई हूं इसलिए समाज का विचार करना पड़ता है। देखता क्या है, झट पानी पी कर जल्दी वापिस चल। अब तो मैं मर जाऊं तो भी तेरे साथ नहीं रहूंगी। जितना जल्दी फंदा कटे उतना ही अच्छा ! तेरे कांटे तुझे ही चुभेंगे।

सियारनी ने तो सिंह से पूछने की भी जरूरत नहीं समझी, अपने आप ही आदेश दे दिया। सियार चुपचाप जाकर पानी पी आया। फिर तीनों ही बच्चों का बंटवारा करने के लिए खोह की तरफ चले।

खोह के पास आ कर सियारनी खड़ी हो गई। सियार से बोली: मैंने सारे बच्चों को पाल पोस कर बड़ा किया, जा तू बाहर तो निकाल ला। इसमें क्या जोर पड़ता है। देख, आज अन्नदाता तेरा कैसा न्याय करते हैं ! सियार बिना बोले चुपचाप खड़ा रहा। सियारनी के कहते ही धीरे से खोह में घुस गया।

बहुत देर हो गई पर सियार बाहर नहीं आया तो सियारनी ने बाहर से ही जोर से आवाज दी — निकम्मे, शैतान, इतनी देर क्या करम फोड़ रहा है ? बाहर क्यों नहीं आता ? देख तुझ में ऐसी करूंगी कि याद रखेगा। पर सियार तो भी बाहर नहीं आया और न कोई जवाब दिया। सियारनी के पैरों पर तो जैसे चींटियां चढ़ने लगी। वह बाहर बेचैन होने लगी। अन्त में उसने सिंह से कहा — हुजूर, इस बेईमान के मन में पाप आ गया है। वह शायद सारे बच्चों को रखना चाहता है। आप मुझे अन्दर जाने दें, अभी पूंछ पकड़ कर लाती हूं।

सिंह ने कहा—फुर्ती करो, मुझे इतना समय नहीं है। राजा को कई काम निपटाने पड़ते हैं। साथ में बच्चों को भी लेती आना। उनके बिना कैसे न्याय करूंगा।

सियारनी ने कहा — आप थोड़ी देर विश्राम करें, पति और बच्चों को अभी लेकर आती हूं। इस नित्य के झगड़े से तो रांड होना अच्छा। आप इसे मार डालें तो मुसीबत मिटे। मेरा रोज का झंझट खतम हो जावे और

आप का पेट भर जावे ।" यह कह कर वह खोह में घुस गई । सिंह अकेला बाहर खड़ा रहा । बहुत समय तक तो वह सियार, सियारनी और सातों बच्चों की राह देखता रहा । मन में जोड़ तोड़ करता रहा कि पहले किसे खाऊं और बाद में किसे ? कोमल कोमल बच्चों के स्वाद में उसके मुंह से लार टपकने लगी । सियार और सियारनी ने तो वापिस बाहर आने का नाम ही नहीं लिया । सिंह खड़ा काफी परेशान हो गया । अन्त में जल्दी करता बोला — अन्दर जाकर जम गए क्या ? फुर्ती से बाहर आओ । मैं तुम्हारा न्याय करके अपने दरबार जाऊं ।

तब सियारनी खोह के भीतर से ही बोली — अन्नदाता, तकलीफ माफ करना । हमने घर में ही सुलझ लिया है । हरामखोर नहीं मानता तो चार बच्चे वही रखे, मैं तीन बच्चों से ही राजी । आपको तकलीफ दी वही बहुत हुई । अब आपको देर हो रही हो तो आप दरबार में पधारें । ठीक तरह जाना, हमारा तो काम निपट गया । घी गिरा तो मूंगों में ही । कितना ही निकम्मा हो, है तो मेरा पति ही । वह नहीं मानता तो न सही । गुण करेंगे तो मेरे तीन बच्चे ही बहुत हैं । आप सौ ही गुनाह माफ करना । फिर कभी झगड़ा होगा तो आपको याद करूंगी । आप राजी खुशी जाना ।

सिंह मुंह लटका कर धीरे धीरे वहां से रवाना हुआ । कोमल कोमल बच्चों को खाने की उसकी सारी जोड़ तोड़ बेकार गई । पर अब क्या हो सकता था !

बच्चों को बहलाने वाले लोकगीत

मूल ले. **रवींद्रनाथ ठाकुर** | अनु. अनुराधा बैनर्जी

बंगला भाषा में बच्चों को बहलाने के लिए स्त्रियों द्वारा रचित जो 'छड़' प्रचलित हैं, मैं कुछ समय से उन्हीं के संग्रह में लगा हुआ था। अपनी भाषा और अपने समाज के क्रमानुगत ऐतिहासिक निर्णयों में अवश्य ही इन 'छड़ों' का विशेष मूल्य होगा, किन्तु मेरी दृष्टि में तो ये सहज स्वाभाविक काव्यरस के श्रोत हैं; और यही इनके प्रति आदरणीय मर्मज्ञता है।

मुझे क्या अच्छा लगता है और क्या अच्छा नहीं लगता, ऐसी बात कह कर समालोचकों का मुह बंद करने में मुझे भय प्रतीत होता है। क्योंकि विज्ञ समालोचकों की राय में इस प्रकार का कथन प्रतिस्पर्धा जनित अपराध ही है।

उनसे यही विनीत प्रार्थना है कि विवेचना करने पर मेरी यह धारणा उन्हें अहंकार नहीं बल्कि इसके विपरीत ही दिखलाई पड़ेगी। जो जैसा उपयुक्त समालोचक होता है, उसके पास वैसा ही अपना निश्चित मापदंड होता है। जो भी रचना उनके सामने आती है, उस पर वे उपयुक्त नम्बर या छाप लगा देते हैं।

किन्तु अक्षमता एवं अनभिज्ञता वश जिन्हें वह मापदंड नहीं मिल पाया, उन्हें समालोचना करने के लिए केवल अपने अनुराग-विराग पर ही निर्भर करना पड़ता है। अतएव साहित्य पर कोई निश्चित मतामत प्रकट करना किसी भी रूप में संगत नही। रचना की अच्छाई बुराई का प्रचार न करके, मुझे क्या अच्छा या बुरा लगता है, केवल यह स्वीकार करना ही न्यायोचित होगा।

यदि कोई प्रश्न करे कि यह बात कौन सुनना चाहता है तो मैं कहूंगा कि साहित्य में सभी मनुष्य यही सुनते आ रहे हैं। साहित्य की विवेचना ही समालोचना कहलाती है, किन्तु

अधिकांश साहित्य प्रकृति व मानवीय जीवन की समालोचना मात्र है। प्रकृति के सम्बन्ध में, मनुष्य के संवन्ध में तथा घटना के सम्बन्ध में जब कवि अपना आनन्द, विषाद, विस्मय उद्भासित करते हैं और अपना वह मनोभाव केवल भावावेग व रचना कौशल द्वारा दूसरे के मन में संचारित करते हैं तो उन्हें कोई अपराधी घोषित नहीं करता। पाठक तो अहमिका-सहित केवल यही देखना चाहता है कि 'कवि का कथन उसके मन में घुलमिल गया है या नहीं।' काव्य-समालोचक भी यदि युक्ति-तर्क व श्रेणी-विभाग छोड़ कर काव्य-पाठगत मनोभाव पाठकों को उपहार देने में उद्यत हो तो उन्हें भी दोषी ठहराना उचित नहीं।

विशेषतया मैं आज जो कुछ भी स्वीकार करने बैठा हूं, उसमें आत्मकथा का कुछ अंश अवश्य ही आयेगा। बाल्य-मन को रंजित करने वाले इन 'छड़ों' में जो रसास्वादन मैं कर पाता हूं, अपनी बाल्य-स्मृति से उसे विच्छिन्न करके देखना मेरे लिए असंभव है। इन 'छड़ों' का माधुर्य कितना स्वयं की बाल्य-स्मृति पर और कितना साहित्य के चिरस्थाई आदर्श पर निर्भर करता है, इसका विश्लेषण करने की शक्ति वर्तमान लेखक में नहीं है। इसे प्रारंभ में ही स्वीकार कर लेना श्रेयस्कर है।

'वृष्टि पड़े टापुर-टुपुर नदी एल वान' यह 'छड़ा' बाल्यकाल में मेरे लिए मोहमंत्र-सा था। और वह मोह मैं अभी तक भूल नहीं पाया हूं! अपने मन की मुग्धावस्था का स्मरण किये विना मैं इन 'छड़ों' के माधुर्य व उनकी उपयोगिता को स्पष्ट रूप से समझ नहीं सकूंगा। और न यह समझ पाऊंगा कि कितने महाकाव्य, कितने खंडकाव्य तथा कितनी तत्व कथाएं व कितना नीतिप्रचार और मनुष्य की कितनी प्राणाधिक चेष्टाएं प्रतिदिन व्यर्थ व विस्मृत होती जा रही हैं। किन्तु ये असंगत, अर्थहीन, असम्बद्ध काव्य परंपरा लोक की स्मृति में चिरकाल से प्रवाहित होती आ रही है।

इन समस्त 'छड़ों' में एक स्थाईत्व है। किसने, किस काल में, कब इनकी रचना की इसका कोई परिचय प्राप्त नहीं होता और न किसी के मन में यह प्रश्न उदय होता है कि किस तारीख में किसके हाथों इनकी सृष्टि हुई। इसी स्वाभाविक चिरंतन गुण के फलस्वरूप यह काव्य-संपदा आज रचित होने पर भी पुरातन है और सहस्र वर्ष पूर्व रचित होने पर भी चिर नवीन है।

असल में देखा जाय तो शिशु के समान प्राचीन और कुछ भी नहीं है। देश, काल, शिक्षा व प्रथा के अनुसार वयस्क मानव में कितने ही परिवर्तन हो चुके हैं किन्तु बालक सहस्र वर्षों पूर्व जैसा था आज भी ठीक वैसा ही है। वही अपरिवर्तित पुरातन मानवीय जगत में यह बाल्य रूप निरन्तर जन्म ग्रहण कर रहा है, फिर भी सबसे पहिले दिन जैसा नवीन, जैसा सुकु-

मार , जैसा निर्बोध , जैसा मधुर था आज भी ठीक वैसा ही है। इस नवीन चिरतत्व का कारण यही है कि बालक प्रकृति की सृष्टि है और वयस्क मनुष्य अधिकांशतया उसकी अपनी ही चेष्टाओं का परिणाम है। इसी प्रकार ये छड़े व बाल्य - साहित्य , मनुष्य के मन में स्वयं जन्म ग्रहण करते हैं।

'स्वयं जन्म ग्रहण करते हैं' ऐसा कहने का एक विशेष तात्पर्य है। स्वभावतया हमारे मन में विश्वजगत के भिन्न भिन्न प्रतिबिम्ब तथा विभिन्न प्रतिध्वनियां विच्छिन्न रूप से घुमड़ती रहती हैं। ये विचित्र रूप धारण करके एक प्रसंग से हटकर दूसरे प्रसंग में उपस्थित हो जाते हैं। जिस प्रकार वायुमंडल में धूल के कण , पुष्प रेणु , असंख्य गंध , विच्छिन्न पल्लव , जल तत्व , वाष्प इत्यादि विचित्र अणु परमाणु इस आलोड़न - युक्त जगत में घुमड़ते रहते हैं , वैसा ही गुंजार हमारे मन में भी होता है। यहां भी नित्य प्रवहमान हमारी चेतना में कितने ही वर्ण गन्ध , शब्द , कल्पना के कितने ही वाष्प कण , चिन्तन का आभास , भाषा के छिन्न स्वरूप, व्यावहारिक जगत के कितने ही परित्यक्त विस्मृत पदार्थ अलक्षित व अनावश्यक रूप से तैरते रहते हैं।

जब हम सचेतन रूप से किसी एक वस्तु को लक्ष्य करके चिंता करते हैं तब ये समस्त गुंजन थम जाते हैं , समस्त रेणुजाल उड़ जाते हैं तथा ये समस्त छायामयी मरीचिकाएं एक ही क्षण में विलुप्त हो जाती हैं। हमारी कल्पना, हमारी बुद्धि एक विशेष मार्ग को अवलम्बित कर प्रवाहित होती है। हमारा मन इतना अधिक प्रभावशाली है कि जब यह सजग हो उठता है तो उसके प्रभाव से हमारे बहिर्जगत व अंतर्जगत का अधिकांश आच्छन्न हो जाता है। निखिल विश्व जैसे उसीके शासन से , उसीके विधान से , उसीके अनुचर-परिचर द्वारा आकीर्ण हो उठता है। देखो आकाश में पक्षियों का कलरव , पत्तों की मर्मर ध्वनि , जल का कल्लोल, लोक समाज की मिश्रित ध्वनि इत्यादि छोटे बड़े कितने ही शब्द निरंतर ध्वनित हो रहे हैं और हमारे चतुर्दिक कितना कंपन, कितना आन्दोलन , कितना गमन, कितना आगमन, छाया-लोक की कितनी ही चंचल लीलाएं नित्य प्रति आवर्तित हो रही हैं , फिर भी हम उसका यत्किंचित अंश ही ग्रहण कर पाते हैं। उसका प्रधान कारण यही है कि हमारा मन धीवर की तरह जाल फेंक कर एक बार में जितना समेट सकता है उतना ही उसका प्राप्य है , शेष सभी दुर्लभ और दुःसाध्य ! वह जब देखता है तो भली प्रकार सुन नहीं सकता , जब वह सुनता है तो अच्छी प्रकार देख नहीं पाता और जब चिंता करता है तब न पूरी तरह देख पाता है और न सुन पाता है। अपने उद्देश्य के पथ से वह समस्त अनावश्यक पदार्थों को अत्यधिक परिमाण से दूर कर सकता है। इसी क्षमता के बल पर वह इस वैचित्र्यपूर्ण जगत में रहकर

भी स्वयं अपने प्राधान्य की रक्षा कर पाया है । पुराणों में लिखा है कि प्राचीन समय में कुछ महात्माओं को इच्छामृत्यु की क्षमता प्राप्त थी । हमारे मन में इच्छा को अंधा व बधिर करने की शक्ति है और इस शक्ति का प्रयोग उसे प्रतिक्षण करना पड़ता है , जिसके फलस्वरूप जन्म से मृत्यु पर्यन्त विश्व जगत का अधिकाश उसकी चेतना के बाहर रह जाता है । जितना वह स्वय उद्योगी होकर ग्रहण करता है और अपनी आवश्यकता व प्रकृति के अनुसार गठित कर लेना है, केवल उतना ही वह उपलब्ध कर पाता है। उसके चतुर्दिक , यहां तक कि उसके अन्तर्मन में भी जो कुछ घटित होता है उसकी खोज खबर वह नहीं रखता ।

साधारण अवस्था में हमारे मानस - गगन पर स्वप्न की भांति जो छाया व शब्द समूह जैसे किसी अलक्ष्य वायुप्रभाव से दैवचालित हो कभी संलग्न, कभी विच्छिन्न होकर, आकार व वर्ण परिवर्तन पूर्वक मेघ - रचना करने रहते हैं , वे यदि किसी अचेतन पट पर अपना प्रतिबिम्ब चित्रित कर पाते तो उस प्रतिबिम्ब के साथ मेरे इन आलोच्य ' छड़ों ' की काफी सादृश्यता परिलक्षित होती । ये ' छड़े ' हमारे नियत - परिवर्तित अंतराकाश की छाया मात्र हैं , स्वच्छ तरल सरोवर की लहरियों पर आकाश में क्रीड़ा करते बादलों की प्रतिच्छाया के समान । इसीलिए कह रहा था कि ये स्वयं जन्म ग्रहण करते हैं । उदाहरण स्वरूप कुछ ' छड़ों ' को उद्धृत करने के पूर्व पाठकों से क्षमा याचना करूंगा । प्रथमतः इन 'छड़ों' के साथ चिरकाल से जो सरल , स्नेहार्द्र , मधुर कंठ ध्वनित होता आया है , मुझ जैसे मर्यादा भीरु , गभीर स्वभाव के वयस्क पुरुष की लेखनी से वह ध्वनि क्योंकर गुंजरित हो सकेगी ? आशा है पाठक - गण मन ही मन अपनी बाल्यस्मृति के माध्यम से वह सुधासिंचित स्वर संग्रह कर लेंगे । परन्तु इसके साथ जो स्नेह , जो सगीत , जो प्रदीपालोकित सौंदर्य छबि मिश्रित है , वह मैं किस मोहमंत्र द्वारा पाठकों के सम्मुख उपस्थित करूं । शायद इन्हीं ' छड़ों ' वह मोहमंत्र अन्तर्निहित हो ।

द्वितीयतः , चारों ओर से कस कर बंधी हुई शुद्ध परिमार्जित भाषा में लिखित निबन्ध के बीच में इन अकृतवेश , असंस्कृत स्त्रियोचित इन ' छड़ों , को खड़ा कर देना इनके प्रति कुछ अत्याचार सा लगता है — जैसे कि घर की वहुरानी को अदालत में जिरह के लिए उपस्थित किया जा रहा हो । किन्तु, दूसरा उपाय भी तो नहीं । अदालत के नियमानुसार अदालत में काम होता है , निबन्ध के नियमानुसार निबन्ध की रचना होती है ; इतनी निष्ठुरता तो अपरिहार्य है ।

जमुनावती सरस्वती काल जमुनार बिये ।
जमुना जाबेन श्वसुरबाड़ि काजितला बिये ।।

काजिफुल कुड़ते येये गेलुम माला।
हात झुमझुम पा झुमझुम सीतारासेर खेला ॥
नाचो तो सीताराम काँकाल बेंकिये।
आलोचाल वेब टापाल भरिये ॥
आलोचाल खेते खेते गला हल काठ।
हेथाय तो जल नेई त्रिपूर्णिर घाट ॥
त्रिपूर्णिर घाटे माछ भेसेछे।
एकटि निलेन गुरुठाकुर एकटि निलेन के ॥
तार बोनके बिये करि ओड़फुल दिये।
ओड़फुल कुड़ते हये गेल बेला ॥
तार बोनके बिये करि ठिक दुक्षुर बेला ॥

[अर्थ : कल यमुनावती सरवस्ती का विवाह है। वे काजीतला होकर [एक प्रकार का फूल] ससुराल जायेंगी। काजीफूल लेने गई तो उन्हें माला मिल गई। सीताराम हाथों में कंकन व पांवों में नूपुर पहिनकर छमछम नाचने लगा। कवि सीताराम को नृत्य में निमग्न रखने के लिए उसे आलोचाल [चावल] का प्रलोभन देते हैं। आलोचाल खाते खाते गला सूख गया और पानी पीने के लिए त्रिपूर्णी के घाट पर जाना पड़ा। त्रिपूर्णी के घाट पर दो मछलियां थीं। एक को गुरुजी ने लिया और दूसरी न जाने किसके हाथ लगी। उस अनजान व्यक्ति की बहिन से मैं ओड़फूल लेकर ब्याह करूंगा। ओड़फूल लाने में देर हो गई और उसकी बहिन से दुपहरिया में मेरा विवाह संपन्न हो गया।]

अत्यंत पक्षपाती समालोचक भी स्वीकार करेंगे कि इसके भाव परस्पर सम्बन्धित नहीं हैं। साधारण प्रसंग का अवलम्बन कर कुछ असंलग्न प्रतिकृतियां उपस्थित की गई हैं। उसमें किसी भी प्रकार का भेद भाव नहीं है। जैसे शरत की निस्तब्ध दुपहरिया में कवित्व के सिंह-द्वार पर द्वारपाल आराम से पांव फैलाकर सो गया हो। कविता के शब्द व भाव अपना परिचय देने की कोई अपेक्षा न रख, किसी भी प्रकार का उपलक्ष न कर, अनायास उस दरबान का पांव उलांघकर, यहां तक कि कभी कभी हलके से उसका कान मलकर कल्पना के अभ्रभेदी मायाप्रसाद में अपनी इच्छानुसार घूम फिर रहे हैं। यदि हठात् द्वारपाल चौंककर कहीं जाग उठे तो वे उसी क्षण सबके सब दौड़ भाग कर कहां अदृश्य हो जायेंगे, इसका कुछ भी पता नहीं लगेगा।

जमुनावती सरस्वती जो भी हों, इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि कल उनका शुभ

विवाह है। यद्यपि विवाह के पश्चात् उनके ससुराल जाने का उल्लेख बहुत आवश्यक नहीं लगता, तब भी बात नितांत अप्रासंगिक नहीं है। परन्तु विवाह के लिए किसी प्रकार का उद्योग या उस कारण किसी के तिलमात्र औत्सुक्य का परिचय नहीं मिलता। 'छड़ों' का राज्य हमारे जैसा राज्य नहीं है। उस राज्य में सभी घटनाएं अनायास ही घटित हो सकती हैं और नहीं भी घट सकती, और इस कारण किसी को किसी के लिए दुश्चिंता ग्रस्त अथवा चिंतित होने की आवश्यकता नहीं पड़ती। अतएव श्रीमती यमुनावती का विवाह आगामी कल के लिए स्थिर हो चुका है तो भी उस घटना को जरा भी प्रधानता नहीं दी गई है। और उनके विवाह की बात यहा उठी ही क्यों, इसका भी उत्तर मिलना सहज नहीं। काजीफूल किस प्रकार का फूल है, मैं महागनरी का वासी ठीक बता भी नहीं सकता, परन्तु यह स्पष्ट अनुमान कर सकता हू कि यमुनावती के विवाह के साथ काजीपुष्प संग्रह का कोई संबन्ध नहीं है और इस बीच सीताराम ने हाथ का कंकन और पांव का नूपुर झुनझुनाकर नृत्य प्रारंभ कर दिया, इसका भी कोई कारण हम नहीं दिखा सकते। आलोचावल का प्रलोभन एक बहुत बड़ा कारण हो सकता है। परन्तु वह कारण हमें सीताराम के नृत्य से त्रिपूर्णी के घाट पर ला खड़ा करता है। उस घाट पर दो मछलियों का दिखाई पड़ना आश्चर्य का उद्रेक नहीं करता। परन्तु आश्चर्य की बात यही है कि उन दो मछलियों में से एक को जो व्यक्ति ले गया है, उसी अनजान व्यक्ति की बहन से विवाह करने का दृढ़ संकल्प हमारे रचयिता कर बैठे। इस पर प्रचलित विवाह प्रथा की संपूर्ण उपेक्षा कर उन्होंने शुभकर्म के आयोजन में ओड़फूल संग्रह ही यथेष्ट समझा एवं जो लग्न स्थिर किया वह भी नूतन अथवा पुरातन किसी भी पंचांग में नहीं दिया गया।

यही तो कविता का बन्धन है। यदि इस कविता की रचना का भार हमारे ऊपर रहता तो अवश्य ही ऐसी कुशलता से प्लॉट बांधते कि ग्रन्थ के अंतिम परिच्छेद में प्रथमोक्त यमुनावती ही त्रिपूर्णी घाट के उस अनिर्दिष्ट व्यक्ति की भगिनी स्वरूप उपस्थित हो जाती और ठीक मध्यान्ह काल में ओड़फूल की माला बदलकर जो गान्धर्व विवाह रचाया जाता उससे सभी सहृदय पाठकों को तृप्ति मिलती।

किन्तु बालक की प्रकृति में मन का प्रताप कुछ क्षीण है। जगत् संसार एवं उसकी अपनी कल्पनाएं उसे विच्छिन्न रूप से आघात करती हैं; एक के बाद एक आकर उपस्थित होती हैं। उसके लिए मन का बन्धन पीड़ा दायक है। सुसम्बद्ध कार्य-कारण का सूत्र पकड़ कर किसी भी वस्तु का आरंभ से अंत तक अनुसरण करना उसके लिए दु:साध्य है। बहिजगत में बालक समुद्र के किनारे बैठ कर रेत के महल बनाता रहता है, मानस - जगत के सिन्धुतीर पर भी

उसी आनन्द में निमग्न रेत के महल बनाने में आबद्ध है। रेत के कण आपस में जुड़ते नहीं। महल स्थायी नहीं होता – किन्तु बालुका में योजनाशीलताका आभव ही बाल्य स्थापत्य का सर्वोत्कृष्ट उपकरण है। मुट्ठी भर भर कर पल भर के अल्पतम समय में उसे उच्च आकार दिया जा सकता है, मनोनीत न होने पर उसका सहज ही संशोधन हो सकता है एवं श्रान्ति-बोध होने पर पदाघात से तत्क्षण उसे भूमिशायी कर लीलामय सृजन कर्त्ता छोटा मन लेकर घर लौट सकता है। परन्तु जहां गांथ गाथ कर कार्य करने की आवश्यकता है, वहां कर्त्ता को भी काम का नियम मान कर चलना पड़ता है। बालक नियम मान कर चल नहीं सकता— वह सम्प्रति नियम हीन इच्छानन्दमय स्वर्ग-लोक से जो आया है। हमारी तरह दीर्घकालीन नियम के दासत्व का वह अभ्यस्त नहीं है, इसीलिए वह अपनी क्षुद्र शक्ति के अनुसार समुद्र-तीर पर रेत के घरोंदे एवं मन में छड़ों की चित्तरचना कर मृत्यु-लोक में देवता की जगत-लीला का अनुकरण करता है। इसी कारण हमारे शास्त्रों में बाललीला के साथ ईश्वरीय लीला की तुलना की जाती है। दोनों में ही इच्छामय आनन्द का एक सादृश्य है।

पूर्वोउद्धृत 'छड़ों, में संलग्नता नहीं है, पर चित्त है। काजीतला, त्रिपूर्णी का घाट एवं ओड़ वन की घटनाएं स्वप्न की तरह अद्भुत और स्वप्न ही की तरह सत्यवत हैं। स्वप्न की तरह सत्य कहने पर पाठक मेरी बुद्धि पर संदेह न करें। अनेक दार्शनिक पण्डितों ने प्रत्यक्ष जगत को स्वप्न कह कर उड़ा दिया है, किन्तु वही पण्डित स्वप्न को नहीं उड़ा सके। वे कहते हैं कि प्रत्यक्ष सत्य नहीं है — तो फिर वह क्या है? नहीं, वह तो स्वप्न है। अतएव देखा जाता है कि प्रवल युक्ति के द्वारा सत्य को अस्वीकार करना सरल है, पर स्वप्न को अस्वीकार करना आसान नहीं। यह बात सजग-स्वप्न पर नहीं, केवल निद्रावस्था के स्वप्न पर ही घटित होती है। तीक्ष्ण बुद्धि पंडितों के लिए भी यह संभव नहीं कि स्वप्नावस्था में वे स्वप्न पर पर अविश्वास कर सकें। जागृत अवस्था में तो वे संभाव्य सत्य को भी संदेह की दृष्टि से देखते हैं किन्तु स्वप्नावस्था में वे ही चरमतम असंभव को भी बिना किसी संशय के ग्रहण करते हैं। अतएव विश्वसनीयता, जो सत्य का सर्व प्रधान गुण होना चाहिये वह स्वप्न से अधिक किसी में भी नहीं है।

इससे पाठकों के लिए यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्यक्ष जगत हमारे लिए जितना वास्तविक है, स्वप्न-जगत स्वप्नदर्शी बालक के निकट उससे भी अधिक सत्य है। इसलिए कई बार सत्य को असंभव समझ कर हम उसका परित्याग कर देते हैं और इसके विपरीत बालक तो असम्भव को भी सत्य समझ कर उसे ग्रहण करते हैं।

वृष्टि पड़े टापुर-टुपर नदी एल बान ।
शिबु ठाकुरेर बिये हलो तिन कन्ये दान ।
एक कन्ये रांधेन बाड़ेन एक कन्ये खान ।
एक कन्ये ना खेये बापेर बाड़ि जान ।

[वर्षा का पानी टपटपाकर गिर रहा है। नदी में बाढ़ आ रही है। शिबू ठाकुर ने तीन कन्याओं से ब्याह रचाया। एक कन्या रांध रही है, दूसरी खा रही है और तीसरी बिना कुछ खाये, मैके जा रही है।]

इस उम्र में सुनने पर पहले यही लगता है कि शिबू ठाकुर की तीन पत्नियों में मध्यमा ही सर्वाधिक बुद्धिमती है। किन्तु इस वयस्क के पूर्व एक और समय था जब इस प्रकार के चरित्र-विश्लेषण की मुझ में क्षमता नहीं थी। ये ही चार पंक्तियां मेरे बाल्यकाल में मेघदूत के समान थीं। मेरे मानसपट पर एक मेघान्धकार दिन एवं एक उत्ताल तरंगित नदी के प्रतिबिंब साकार हो उठते थे। उसके बाद देखता कि नदी के किनारों की बालू पर दो एक नौकाएं बंधी हुई हैं और शिबू ठाकुर की नव विवाहिता बहुएं वहां पर खाना बना रही हैं। दरअसल, शिबू ठाकुर के जीवन को अत्यंत सुखमय समझ मेरा हृदय बड़ा ही व्याकुल हो उठता था। यहां तक कि तीसरी बहू के क्रोधित होकर पिता के घर जाने का चित्र भी मेरे सुख-स्वप्न में जरा भी आघात नहीं पहुंचाता था। यह निर्बोध तब नहीं समझ पाता था कि वह अंतिम पंक्ति हतभाग्य शिबू ठाकुर के जीवन के किस हृदय विदारक परिणाम को सूचित करती है। किन्तु पहिले ही कह चुका हूं तब मन की गति चरित्र-विश्लेषण की अपेक्षा चित्र-रचना की ओर थी। यह अब समझता हूं कि हतबुद्धि शिबू ठाकुर ने अपनी कनिष्ठा स्त्री के पितृगृहप्रस्थान दृश्य को ठीक मनोरम चित्र रूप से ग्रहण नहीं किया था।

शिबू नाम का कोई व्यक्ति किसी काल में था या नहीं, यह प्रश्न भी कभी कभी मन में उठता है। शायद था। शायद इस 'छड़े', में पुरातन विस्मृत इतिहास का एक अति क्षुद्र अंश रह गया हो। शायद और किसी 'छड़े' में भी उसका कोई अंश हो।

ए पार गंगा, ओ पार गंगा मध्यिखाने चर ।
तारि मध्ये बसे आछे शिव सदागर ।।
शिब गेल श्वसुर बाड़ि, बसते दिल पिड़े ।
जलपान करिते दिल शालिधानेर चिड़े ।।
शालिधानेर चिड़े नय रे, बिन्निधानेर खई ।
मोटा मोटा सबृरि कला, कागमारे दई ।।

[गंगा के बीच में एक रेतीला टापू है और वहां पर शिव सौदागर बैठे हुए हैं। शिव जब ससुराल गया तो ससुराल वालों ने बैठने के लिए एक पीढ़ा दिया। और जलपान के लिए शालिधान चावल का चिवड़ा दिया। अरे शालिधान का चिवड़ा नहीं वह तो ब्रिन्निधान का लावा था। साथ में मोटे मोटे केले और दही भी था।]

मेरा अनुमान है कि शिब्रू ठाकुर एवं शिव सौदागर दोनों एक ही व्यक्ति रहे होंगे। दांपत्य-सम्बन्ध में दोनों की विशेष रुचि है और आहार के प्रति अवहेलना भी कहीं दिखाई नहीं देती है। तिस पर गंगा के बीचोंबीच जिस स्थान का निर्वाचन किया गया है, वह नवपरिणितों के लिए अत्यंत उपयुक्त है।

यहां पाठक यह लक्ष्य करेंगे कि पहले शिव सौदागर के जलपान में शालिधान के चिवड़े का उल्लेख था, परंतु तत्क्षण उसका संशोधन करके कहा गया कि वह शालिधान का चिवड़ा नहीं बल्कि ब्रिन्निधान का लावा था। जिससे कि घटना की सत्यता में किसी को बिन्दुमात्र भी संदेह न रहे। परंतु उस संशोधन से जलपान की व्यवस्था में कुछ विशेष अंतर आया हो या जमाई के सत्कार के सम्बन्ध में ससुराल का गौरव प्रकट हुआ हो, यह भी नहीं कहा जा सकता। परंतु कवि लक्ष्य उस क्षेत्र में ससुराल की मर्यादा रक्षा से अधिक सत्य की मर्यादा रक्षा पर है वह भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। शायद यह भी स्वप्न की तरह है। शायद शालिधान का चिवड़ा ही देखते देखते बिन्निधान का लावा हो उठा हो। शायद शिब्रू ठाकुर भी इसी तरह कब शिव सौदागर में परिणत हो गया है किसी को नहीं मालूम।

कहते हैं कि मंगल व वृहस्पति के आसपास कुछ छोटे छोटे ग्रह हैं। कुछ विद्वान तो कहते हैं कि वे एक ही ग्रह के छोटे छोटे टुकड़े हैं। मुझे ऐसा लगता है कि ये 'छड़े' भी छोटे छोटे विच्छिन्न जगत हैं। प्राचीन इतिहास, प्राचीन स्मृति के अनेकों क्षुद्र अंश इनमें बिखरे हुए हैं, पुरातत्वविद अब उन्हें जोड़कर एक नहीं कर सकते, किन्तु हमारी कल्पना इन भग्नावशेषों में उस प्राचीन विस्मृत जगत का परिचय प्राप्त करने की चेष्टा करती रहती है।

परंतु बालक की कल्पना इस ऐतिहासिक एकता के लिए जरा भी उत्सुक नहीं है। उसके लिए सभी कुछ वर्तमान है और वर्तमान ही उसके निकट गौरव शाली है। उसे केवल प्रत्यक्ष चित्र की आवश्यकता है और उस चित्र को वह भावावेग के अश्रुओं से धुंधला नहीं करना चाहता।

निम्नलिखित 'छड़े' में कुछ असंलग्न चित्र चिड़ियों के झुंड की तरह उड़ते दिखाई देते हैं। इनमें प्रत्येक की इस स्वच्छंद गति से बालक का हृदय जैसे नये नये आघात पाकर विचलित हो उठता है। —

नोटन नोटन पायरागुलि झोंटन रेखेछे।
बड़ो साहेबेर बिबिगुलि नाईते ऐसेछे।।
दु पारे दुई रुई कात्ला भेसे उठेछे।
दादार हाते कलम छिल छुंड़े मेरेछे।।
ओ पारेते दुटि मेये नाईते नेबेछे।
झुनु झुनु चुलगाछटि झाड़ते नगेछे।।
के रेखेछे के रेखेछे, दादा रेखेछे।
आज दादार ढेला फेला, काल दादार बे।
दादा जाबे कोनखान दे। बकुलतला दे।।
बकुल फुल कुड़ते कुड़ते पेये गेलुम माला।
रामधनुके बाद्दि बाजे सीतेनाथेर खेला।।
सीतेनाथ बले रे भाई चालकड़ाई खाब।
चालकड़ाई खेते खेते गला हल काठ।
हेथा होथा जल पाब चित्पुरेर माठ
चित्पुरेर माठेते बालि चिक् चिक् करे।
सोना - मुखे रोद नेगे रक्त फेटे पड़े।।

[मोटे मोटे कबूतरों के सिर में झोंटा रखाया हुआ है। बड़े साहब की बीवियाँ नहाने आई हैं। दोनों किनारे दो मछलियाँ तैर रही हैं। दादा के हाथ में कलम था सो उसने खींच मारा। घाट के दूसरे किनारे दो लड़कियां नहाने पानी में उतरी हैं और अपने घने घने बाल झाड़ रही हैं। दादा का कल ब्याह है और बकुल तले होकर ब्याह करने जायेगा। बकुल फूल चुनते मुझे माला मिल गई। बाजे - गाजे बज रहे हैं और सीतानाथ खेल रहा है। सीतानाथ कहता है कि मैं चावल - मुरमुरे खाऊंगा। मुरमुरे खाते खाते गला सूख गया और पानी की तलाश में चित्तपुर के मैदान तक जाना पड़ा। चित्तपुर के मैदान में रेत चिक चिक कर रही है। मुंह पर धूप लगने से मुंह रक्तिम - सा हो रहा है]

इनमें कोई भी चित्र हमें एकाग्र नहीं कर सकता, हम भी किसी चित्र को पकड़कर रख नहीं पाते। झोंटेदार मोटे मोटे कबूतर, बड़े साहब की बीबियां, किनारे पर तैरती मछलियां, दूसरे किनारे स्नान - मग्न लड़कियां, दादा का विवाह, रामधनुक के बाजे साथ सीतानाथ का खेलने लगना और भरी दुपहरिया की कड़ी धूप में मुख का रक्तिम हो जाना — ये सभी स्वप्न से लगते हैं। उस पार जो दोनों लड़कियां नहाने लगी हैं और हाथों की चूड़ियां खनखना कर

केश सुखा रही हैं, वे चित्र में प्रत्यक्ष सत्य हैं, परंतु प्रासंगिकता के हिसाब से अपरूप स्वप्न है।

पाठकों को यह भी स्मरण रखना आवश्यक हैं कि स्वप्न - रचना अत्यंत कठिन है। हम यह सोच सकते हैं कि जैसे तैसे लिखने से ही 'छड़ों' की सृष्टि की जा सकती है। परंतु यह जैसे - तैसे लिखना कुछ सहज नहीं। सांसारिक कार्य करते करते हमें सभी विषयों में सचेष्ट रहने की आदत सी पड़ गई है। चेष्टा का आमंत्रण न देने पर भी वह अपने ही आप आ जाती है। और जहां पर उसका हस्तक्षेप होता है वहीं पर भावों के मेघ अपना लघु आकार त्याग कर ठोस बनने लगते हैं और फिर आकाश में उड़ने का उनमें वह सामर्थ्य नहीं रहता। इसीलिए ये 'छड़े' भी जिनके लिए आसान हैं, उनके लिए बेहद आसान हैं और जिनके लिए जरा भी कठिन हैं, उनके लिए एकदम असाध्य हैं। सहज का प्रधान लक्षण यही है कि जो सर्वापेक्षा सरल है, वही सर्वाधिक कठिन है।

पाठकों ने शायद यह भी लक्ष्य किया होगा कि हमारे प्रथमोद्धृत 'छड़े' से यह काफी मिलता - जुलता है। जिस प्रकार मेघ के साथ मेघ और स्वप्न के साथ स्वप्न मिल जाता है, उसी प्रकार ये भी परस्पर जड़ित व मिश्रित होते रहते हैं। इस कारण कवि इनमें चोरी का अभियोग नहीं लगाते और न कोई समालोचक भी भाव - विपर्यय का दोषारोपण ही करते हैं। ये 'छड़े' वास्तव में मन के मेघराज्य की लीला है, और इनकी सीमा, आकार व अधिकार निर्णय का कोई प्रश्न ही यहां नहीं उठता। इनके लिए पुलिस या कायदे - कानून सर्वथा अमान्य है। दूसरी जगह से प्राप्त निम्नलिखित 'छड़े' के प्रति तनिक मनोयोग करके देखिये :

ओ पारे जन्तिगाछटि जन्ति बड़ो फले।
गो जन्तिर माथा खेये प्राण केमन करे॥
प्राण करे हाईढ़ाई गला हल काठ।
कतक्षणे जाब रे भाई हरगौरीर माठ॥
हरगौरीर माठे रे भाई पाका पाका पान।
पान किनलाम, चून किनलाम, ननदे भाजे खेलाम।
एकटि पान हाराले दादा के बोले देलाम॥
दादा दादा डाक छाड़ि दादा नाईको बाड़ि।
सुबल सुबल डाक छाड़ि सुबल आछे बाड़ि॥
आज सुबलेर अधिवास काल सुबलेर बिये।
सुबलके निये जाब आमि दिग्नगर दिये॥
दिग्नगरेर मेयेगुलि नाईते बसेछे।

मोटा मोटा चुलगुलि गो पेते बसेछे ।
चिकन चिकन चुलगुलि झाड़ते नेगेछे ।।
हाते तादेर देबशांखा मेघ नेगेछे ।
गलाय तादेर तक्तिमाला रक्त छुटेछे ।
परने तादेर डुरे शाड़ि घुरे पड़ेछे ।।
दुई दिके दुई काल्ला माछ भेसे उठेछे ।
एकटि निलेन गुरुठाकुर एकटि निलेन टिये ।।
टियेर मार बिये ।
नाल गामछा दिये ।।
अशथेर पाता घने ।
गौरी बेटि कने ।।
नका बेटा घर ।
ढ्याम् कुड़कुड़ बाद्दि बाजे चड़क डांगाय घर ।।

[उस पार (नदी अथवा पोखरे के) के जन्ति वृक्ष में खूब जन्ति फल लगे हैं । जन्ति फल खाकर जी मिचलाने लगा और गला सूख गया । जाने कब हरगौरी के मैदान में पहुचगी । वहां पहुचने पर खूब पान मिले । हम ननद भौजाई ने मिलकर पान और चूना खरीद कर खाया । पर जब एक पान खो गया तो मैं दादा से शिकायत करने चली । दादा को आवाज लगाई तो वे घर नहीं मिले । सुबल को पुकारा तो वह मिल गया । सुबल का आज अधिबास है और कल उसका विवाह है । वह शादी करने दिग्नगर होकर जायगा । दिग्नगर की लड़कियां अपने घने मोटे बाल बिखेर कर नहाने बैठी हैं । कभी अपने चिकने बालों को झाड़ रही हैं । उनके हाथ में शंख की बनी चूड़ियां हैं और गले में माला है । डोरिया साड़ी उन्होंने घुमाकर पहिन रखी है । घाट के दोनों ओर दो मछलियां थीं । उनमें से एक गुरुजी ले गये और दूसरे को तोते ने लिया । लाल गमछा देकर तोते की मा का ब्याह होगा ।]

इस 'छड़े' की पंक्तियां में सत्य का अन्वेषण अत्यंत कठिन है । प्रथम 'छड़े' में देखा कि कच्चा चावल खाकर सीताराम नामक नृत्यप्रिय लुब्ध बालक को त्रिपूर्णी के घाट पर पानी पीने जाना पड़ा था । द्वितीय 'छड़े' में देखा कि सीताराम चना-मुरमुरा खाकर पानी की तलाश में चित्तपुर के मैदान में आ उपस्थित हुआ । फिर तृतीय 'छड़े' में हम देखते हैं कि सीताराम अथवा सीतानाथ नहीं बल्कि किसी एक अभागिनी भ्रातृवधू की विद्वेष परायणा

ननद जनिहफल खाने के बाद पान खाने हरगौरी के मैदान गई थी और उसके बाद भावज की असावधानी के तुच्छ अपराध की शिकायत दादा [भाई] से करने के लिए अड़ोस-पड़ोस में उसने शोर मचा दिया था।

यह तो है इन तीन 'छड़ों' की असंगति। इसके अलावा इनमें कोई धारावाहिक घटना भी नहीं है। स्पष्ट समझा जा सकता है कि ये सारी बनाई हुई बातें हैं। किन्तु अधिकांश क्षेत्र में बातें बनाते समय लोग जिस प्रकार प्रमाणों के द्वारा उसे सत्य से अधिक विश्वासयोग्य बना देते हैं। इस क्षेत्र में यहां उस प्रकार की कोई भी चेष्टा लक्षित नहीं हुई है। यह सत्य मिथ्या दोनों के बाहर है। एक स्थान पर सुबल के विवाह का जो उल्लेख किया गया है, वह कोई असंभव घटना नहीं, परन्तु वह सत्य भी प्रतीत नहीं होता।

दादा दादा डाक छाड़ि, दादा नाईको बाड़ि।
सुबल सुबल डाक छाड़ि, सुबल आछे बाड़ि॥

दादा को पुकारने पर वे घर नहीं मिले और सुबल को पुकारने पर वह घर ही में मिला। जैसे ही सुबल नाम का उल्लेख हुआ वैसे ही कहा गया कि आज सुबल का अधिवास है और कल उसका विवाह है। यह बात भी स्थाई नहीं रही। इसके बाद दिग्नगर की दीर्घकेशिनी स्त्रियों की बात छिड़ गई। स्वप्न में भी ठीक ऐसा ही होता है। शायद शब्दों के सादृश्य को लेकर अथवा इसी प्रकार के किसी तुच्छ सम्बन्ध का अवलम्बन कर क्षण-क्षण में एक से दूसरे पद की रचना होती है। एक क्षण पूर्व उनके रहने की कोई सम्भावना दिखाई नहीं देती; एक क्षण पश्चात भी वे बिना चेष्टा के अदृश्य हो जाते हैं। सुबल के विवाह में पाठकगण यदि तत्कालीन अथवा तत्स्थानीय कोई सत्य घटना का आभास पाते हों तथापि यह सभी एक मत हो स्वीकार करेंगे कि 'लाल गमछा देकर तोते की मां का विवाह' किसी भी प्रकार तत्कालीन इतिहास में स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। क्योंकि विधवा विवाह यदि उसमें प्रचलित भी हो तब भी लाल गमछे का व्यवहार उनमें कभी सुना नहीं गया। परन्तु जिनके पास छन्द और ताल सहित ये सब असंभव घटनाएं सुमिष्ट कण्ठ से उपस्थित की जाती हैं वे विश्वास भी नहीं करते और संदेह भी नहीं करते, सारे चित्र वे मन ही मन प्रत्यक्ष रूप से देख लिया करते हैं।

बालक चित्त भी अल्पयोजना द्वारा सहज ही देख सकता है। इसका कारण मैं पहिले ही बता चुका हूं कि इच्छाशक्ति के सम्बन्ध में देवताओं के साथ बालक का कुछ सादृश्य है। बालक जिस प्रकार अपनी इच्छा-मात्र से जितनी सरलता पूर्वक सृष्टि कर सकता है, हम वैसा नहीं कर सकते। सोचने की बात है कि एक कपड़े के टुकड़े में गांठ लगाकर मुण्ड-

विशिष्ट मनुष्य की कल्पना कर, अपनी संतान के रूप में उसका लालन - पालन करना कोई सामान्य बात नहीं है। हमें किसी मूर्ति को मनुष्य रूप में देखने के लिए उसे ठीक वैसा ही बनाना पड़ता है। अनुकरण में थोड़ी-सी भी त्रुटि होने पर हमारी कल्पना को आघात पहुंचता है। बहिर्जगत के जड़ शासन द्वारा हम नियंत्रित हैं, जो कुछ हम देखते हैं उसे किसी भी प्रकार अन्य रूप से नहीं देख सकते किन्तु शिशु जो कुछ भी आंख से देख रहा है उसे उपलक्ष बनाकर मन ही मन अपनी मन पसन्द वस्तु की सृष्टि कर सकता है। मनुष्य मूर्ति के साथ वस्त्रखंड का असादृश्य उसे दिखाई नहीं पड़ता। वह अपनी ही सृष्टि को अपने सम्मुख जाज्वल्यमान करके देखता है।

तथापि 'छड़ों' के ये समस्त अयत्नरचित चित्र केवल बालक की स्वाभाविक सृजनशक्ति के द्वारा ही सृजित होते हों ऐसी बात नहीं, उनकी रेखाओं में अनेक स्थानों पर ऐसी स्पष्टता है वह हमारे संशयी मन में अत्यंत संक्षिप्त वर्णन द्वारा निर्विलम्ब चित्र अंकित कर देती है।

ये सभी चित्र एक ही रेखा से बने हुए हैं। जिस प्रकार दियासलाई एक बार घिसने से दप्प करती हुई प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार बालक के हृदय में एक ही बात से संपूर्ण चित्र क्षण भर में चित्रित हो उठता है। जोड़ - तोड़ कर बनाने से काम नहीं चलता।

चित्तपुरेर माठेते बालि चिक्‌चिक् करे।

[चित्तपुर के मैदान में रेत चमक रही है]

इस एक पंक्ति द्वारा एक वृहत् उजाड़ रौद्रालोकित मैदान हमारी आंखों के सामने दीप्त हो उठता है।

आय घुम आय घुम बाग्‌दिपाड़ा दिये।
बाग्‌दिदेर छेले घुमोय जाल मुड़ि दिये॥

[अरी निंदिया तू बागदी पाड़े में होकर नन्हें की आंखों में आ। वहां बागदियों का लड़का जाल ओढ़कर सो रहा है]

दूसरी पंक्ति में बागदियों का लड़का जाल ओढ़कर बेखबरी के साथ सो रहा है, यह चित्र सभी पाठक आसानी से उपलब्ध कर सकते हैं, और कुछ नहीं केवल जाल ओढ़कर सोने की बात को विशेष रूप से कहने पर ही बागदी पुत्र की नींद प्रत्यक्ष हो उठी है।

आय रे आय छेलेर पाल माछ धरते जाई।
माछेर कांटा पाये फुटल दोलाय चेपे जाई।
दोलाय आछे छ : पण कड़ि गुनते गुनते जाई॥

ए नदीर जलटुकु टलमल करे ।
ए नदीर धारे रे भाई बालि झुरझुर करे ॥
चांदमुखेते रोद लेगेछे रक्त फुटे पड़े ॥

[लड़कों आओ, मछली पकड़ने चलें। मछली का कांटा पांव में चुभ गया। डोले में बैठ चलें। डोले में कौड़ियां हैं। उन्हें गिनते हुए जा रहे हैं। इस नदी में पानी छलछला रहा है और किनारे से झुरझुर कर रेत गिर रही है। चांद जैसे मुख पर धूप लगने से लगता है जैसे खून छलक आया हो।]

डोले में बैठकर कौड़ियां गिनते हुए जाने की क्रिया को यदि पाठकों की दृष्टि में अकिंचन समझा भी जाय तो भी अंतिम तीन पंक्तियों की वे उपेक्षा नहीं करेंगे। नदी में पानी का छलछलाना और किनारे से रेत का भरभर गिरना — बालू तटवर्ती नदी का ऐसा संक्षिप्त सरल व सुस्पष्ट चित्र भला और क्या हो सकता है ?

ये तो हुए एक श्रेणी के चित्र। एक और भी श्रेणी है जो वर्णनीय विषय का अवलम्बन कर एक संपूर्ण चित्र हमारे मन में जागृत करती है। एक तुच्छ विषय के उल्लेख मात्र से समस्त बंगसमाज प्राणवंत होकर हमारे हृदय को स्पर्श करता है। ये तुच्छ बातें गंभीर साहित्य में इस प्रकार निःसंकोच रूप से प्रवेश नहीं कर पातीं। और कर पाने पर भी उनका अपने आप ही रूपान्तर व भावान्तर हो जाता है।

दादा गो दादा शहरे जाओ ।
तिन टाका करे माईने पाओ ॥
दादार गलाय तुलसीमाला ।
बऊ बरने चन्द्रकला ॥
हेई दादा तोमार पाये पड़ि ।
बऊ एने दाओ खेला करि ॥

[दादा, तुम तो शहर में नौकरी करते हो और तीन रुपया तनख्वाह पाते हो। तुम्हारे लिए मैंने चांद-सी बहू, देख रखी है। ऐ दादा, मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूं, मेरे खेलने के लिए बहू ला दो]

दादा [भाई] का वेतन अधिक नहीं है, परन्तु बहन के लिए वही प्रचुर है। उस प्रचुरता का उदाहरण देकर वह विनय करती है — दादा, तुम्हारे पांव पड़ती हूं, बहू घर ले आओ, मैं खेलूंगी।

चतुर बालिका अपने इस स्वार्थोद्वार के लिए भाई को इसका भी आभास दे रही है कि बहू का रंग चन्द्रकला के समान है। यद्यपि बहिन के खिलौने का मूल्य तीन रुपया वेतन में महगा पड़ेगा, तब भी यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि उसका कातर अनुरोध रखने में भाई को देर नहीं हुई।

उलु उलु मादरेर फुल।
बर आसछे बत दूर ॥
बर आसछे बाघनापाड़ा।
बड़ो बऊ गो रान्नाचड़ा।
छोटो बऊ लो जलके जा ॥
जलेर मध्ये न्याकाजोका।
फुल फुटेछे चाका चाका ॥
फुलेर वरण करि।
नटे शाकेर बड़ि ॥

[मदार के पेड़ में फूल लगे हैं और स्त्रियां मंगल ध्वनि कर रही हैं। वर न जाने कितना दूर है अभी। घर अभी बाघनापाड़े में ही है। बड़ी बहू तू खाना पकाना शुरू कर, छोटी बहू तू पानी भरला। वर आयेगा तब फूलों से उसका वरण होगा।]

जमाई के आगमन की प्रत्याशा में ग्रामीण स्त्रियों के औत्सुक्य व आनन्द-उत्सव का चित्र अपने-आप साकार हो उठा है और उसी के उपलक्ष में गांव की पगडंडियां, वन, पोखर, घड़ा लेकर जाती हुई बधुएं और शिथिलगुंठन व्यस्त ग्रहणियों का चित्र इन्द्रजाल के सदृश्य प्रतिभासित हो उठा है।

इसी प्रकार की प्रत्येक 'छड़े' की तुच्छ बात में बंगाल का समस्त रूप मूर्त हो उठता है — ग्राम्य संगीत और गृहसुख का मधुर आस्वाद गुजरित होता है किन्तु उन्हें यहां उद्धृत करने में शंका उत्पन्न होती है, क्योंकि 'भिन्नरुचिर्हि लोकः'।

चित्र कुछ अद्भुत हो तो उसमें नुकसान नहीं लाभ ही है, क्योंकि उसकी नवीनता हृदय का स्पर्श करती है। बालक के लिए कुछ भी अद्भुत नहीं, क्योंकि उसके निकट असंभव जैसी कोई बात नहीं। वह कहता है, यदि कुछ भी सम्भव है तो सभी कुछ सम्भव है। एक वस्तु यदि अद्भुत नहीं है तो दूसरी क्योंकर अद्भुत होगी। उसका कहना है कि एक सिर वाले मनुष्य को मैंने बिना कोई प्रश्न किये स्वीकार कर लिया है, क्योंकि वह मेरे निकट प्रत्यक्ष है। दो मस्तक वाले के विरुद्ध भी मुझे कुछ नहीं कहना क्योंकि मैं उसे अपने मन में स्पष्ट

देखता हूं ; मस्तकहीन मनुष्य भी मेरे निकट समान रूप से सत्य है , क्योंकि वह भी मेरे निकट अनुभवगम्य है । एक कहानी है — किसी व्यक्ति ने सभा में उपस्थित होकर कहा — आज रास्ते में एक अजीब घटना देखने को मिली । झगड़े में एक आदमी का सिर कट गया , फिर भी वह दस कदम तक चला गया । सभी चकित हो बोले — कहते क्या हो ? द — स कदम चला ? उनमें एक महिला थी । वह बोली — दस कदम चलना आश्चर्य की बात नहीं, उसका पहला कदम चलना ही आश्चर्य की बात है ।

सृष्टि में भी प्रथम पदक्षेप ही महान आश्चर्य जनक है , कुछ हुआ है — यही प्रथम और परम विस्मय है । इसके बाद और भी कुछ होगा , इसमें आश्चर्य की क्या बात है ! बालक उसी प्रथम विस्मय को पहली बार देख रहा है । आंख खोल कर वह बहुत - सी वस्तुएं देखता है , और भी बहुत सारी वस्तुओं का अस्तित्व उसके लिए असंभव नहीं । इसलिए ' छड़ों ' में संभव या असंभव का कोई प्रश्न नहीं उठता । —

आय रे आय टिये ।
नाये भरा दिये ।
ना निये गेल बोआल माछे ।
ता देशे देशे भोंदड़ नाचे ।।
ओ रे भोंदड़ , फिरे चा ।
खोकार , नाचन देखे जा ।।

[अरे ! तोते तू जरा यहां तो आ । देख , नाव में चढ़कर आना । तोते की नैय्या बोआल मछली ले गई । इसे देखकर ऊदबिलाव ने नाचना शुरू किया । अरे ऊदबिलाव तू जरा अपना नाच छोड़कर मेरे मुन्नेका नाचना तो देख ।]

पहिले तो , तोता नाव में चढ़कर आ रहा हो , ऐसा दृश्य किसी बालक ने अपने पिता की उमर में भी नहीं देखा ; बालक के पिता को लेकर भी यही बात कही जा सकती है । परंतु इसकी अपूर्वता ही इसका प्रधान कौतुक है । विशेषतया , जब अथाह जल के भीतर से हठात् एक स्फीतकाय बोआल मछली बिना कुछ कहा - सुनी किये ख्वामखा उसकी नाव लेकर चल पड़ी और क्रुद्ध व व्यस्त तोता रोयें फुला कर , पांख फड़फड़ाकर , घोर चीत्कार करके आपत्ति करने लगा — तब कौतुक और भी बढ़ जाता है । बेचारे तोते की दुर्गति और उस जलचर प्राणी का नितांत अभद्र व्यवहार देखकर अकस्मात् ऊदबिलाव की दुर्निवार नृत्य-आकांक्षा भी बड़ी विचित्र है । और उस नृत्य निष्ठुर ऊदबिलाव को अपना नृत्यवेग थमाकर मुन्ने का नाच देखने के आग्रह में भी बड़ा रस है । जिस प्रकार मनमोहक छन्द सुनकर ही उसे

गीत में बांधकर गाने की इच्छा होती है, वैसे इन सब भाषा - चित्रों को देखते ही इन्हें रेखा-चित्रों में अंकित करने की प्रबल लालसा होती है। परन्तु इन चित्रों के रस को नष्ट न कर इनकी सरलता, उज्वल नवीनता, असंशयता, असंभाव्य की सहज संभवता की रक्षा करते हुए इनका चित्रण करें ऐसे चित्रकार हमारे देश में कहां हैं और शायद सभी जगह दुर्लभ हैं।

खोका जाबे माछ धरते क्षीरनदीर कूले।
छिपनिये गेल कोला बंग, माछ निये गेल चिले ॥
खोका ब'ले पाखिटि कोन बिले चरे।
खोका ब'ले डाक दिले उड़े एसे पड़े।

[खोका अथवा मुन्ना मछली पकड़ने क्षीर नदी के तीर पर जायेगा। पर वहां जाने पर मुन्ने की वंसी मेंढ़क ले गया और मछली चील ले गई। मुन्ना नाम का पक्षी किस तालाब के किनारे चरता हैं ? उसे मुन्ना कहकर पुकारने पर उड़कर मां के पास आ जाता है।]

क्षीर नदी के किनारे मछली पकड़ने जाकर मुन्ने पर जो आपत्ति आई थी उसे तूलिका द्वारा चित्रित किये बिना क्या मन का क्षोभ मिट सकता है ? इसमें सन्देह नहीं कि क्षीर नदी का भूगोल हमारी अपेक्षा मुन्ना बाबू ही अधिक जानते हैं ; किन्तु जिस किसी नदी में ही हो, वे प्रौढ़जनोचित गंभीरता धारण कर बड़े धैर्य के साथ अपने से चतुर्गुण दीर्घ बंसी लेकर मछली पकड़ने बैठे हैं ; यही अत्यंत कौतुक जनक है ; उस पर पानी से गोल गोल आंखों वाला एक मोटा मेंढ़क जब मुन्ने की बंसी लेकर खींचातानी कर रहा है, तब उनका विप्रत, विस्मित व व्याकुल मुखभाव—एक बार पीछे को प्राणपण झुककर बंसी को खींचना, एक बार उड्डीय-मान चोर के उद्देश से दो व्यग्र उत्सुक हाथों को ऊपर फैलाना — ये सब चित्र सहृदय व मर्मज्ञ चित्रकार की प्रतीक्षा बहुत दिनों से कर रहे हैं।

मुन्ने की पक्षीमूर्ति भी चित्र के लिए एक अच्छा विषय है। एक बहुत बड़ा तालाब है। उसका दूसरा किनारा ठीक से नजर नहीं आता। इस पार तीर के पास एक कोने में बड़ा बड़ा घास है और सरकंडे की झाड़ियां उग रही हैं ; पानी में शैवाल का जंगल है और उसी के बीच में गंभीर प्रकृति ध्यान मग्न लम्बे पांव और लम्बी चोंच वाले कुछ बगुले और सारसों के साथ मिलकर मुन्ना बाबू अपने पंख समेट कर नतशिर निविष्ट भाव से चर रहे हैं, यह दृश्य भी अच्छा है — और उस तालाब से कुछ दूर भादों महीने के जलमग्न, पक्वशीर्ष धान्यक्षेत्र से संलग्न एक छोटी सी कुटिया, उस कुटिया के प्रांगण में बांस की टाटी के ऊपर बांया हाथ रखकर और दाहिने हाथ को सामने प्रसारित कर संध्या के सूर्यालोक में मां अपने मुन्ने को

बुला रही है, आंगन में बंधी गाय भी नीरव कौतूहल से उधर देख रही है और उधर भोजन-तृप्त मुन्ना बाबू शैवाल वन के बीच में मां की पुकार सुनकर तथा कुटिया की ओर देखकर उड़ने की तैय्यारी कर रहे हैं, यह भी सुन्दर दृश्य है। तीसरे दृश्य में मुन्ना बाबू मां के पास उड़कर उनके कंधे में मुंह छुपाये हुए हैं और अपने पंखों में उसने मां को प्रायः ढक लिया है और निमिलित नेत्र - मात्र ने उसे हृदय से लगाकर स्नेहबंधन में बांध दिया है, यह भी सुंदर चित्र है।

ज्योतिर्विद्गण नीहारिका पर्यवेक्षण करते करते देखते हैं कि उस ज्योतिर्मय वाष्प राशि में किसी किसी जगह वाष्प एकत्रित होकर नक्षत्र बनने का उपक्रम कर रहा है। हमारे इस 'छड़' की नीहारिका राशि में भी स्थान स्थान पर वैसे आकार बद्ध अर्धमिश्रित कवित्वमूर्ति दृष्टिगोचर होती है। उस नवीन सृष्ट कल्पनामंडल में जटिलता कुछ भी नहीं है। प्रथम काल की बालपृथ्वी - सा वह अभी तक तरलावस्था में है, कठोर नहीं हुआ। एक उदाहरण उपस्थित है:

जादु, ए तो बड़ो रंग जादु, ए तो बड़ो रंग।
चार कालो देखाते पार जाब तोमार संग।
काक कालो, कोकिल कालो, कालो फिंगेरवेर॥
ताहार अधिक कालो, कन्ये तोमार माथार केश॥
जादु, ए तो बड़ो रंग जादु, ए तो बड़ो रंग।
चार धलो देखाते पार जाब तोमार संग॥
बक धलो, वस्त्र धलो, धलो राजहंस।
ताहार अधिक धलो, कन्ये तोमार हातेर शंख॥
जादु, ए तो बड़ो रंग जादु, ए तो बड़ो रंग।
चार रांगा देखाते पार जाब तोमार संग॥
जवा रांगा, करवी रांगा, रांगा कुसुम फुल।
ताहार अधिक रांगा कन्ये, तोमार माथार सिंदुर॥
जादु, ए तो बड़ो रंग जादु, ए तो बड़ो रंग।
चार तितो देखाते मार चाब तोमार संग॥
निम तितो निसुन्दे तितो, तितो माकार फल।
ताहार अधिक तितो, कन्ये, बोन - सतिनेर घर॥

जादु , ए तो बड़ो रंग जादु , ए तो बड़ो रंग ।
चार हिम देखाते पार जाब तोमार संग ।।
हिम जल , हिम स्थल , हिम शितलपाटि ।
ताहार अधिक हिम , कन्ये , तोमार बुकेर छाति ।।

[भई , यह तो बड़े मजे की बात है । अगर चार काली चीजों के नाम गिना सको तो तुम्हारे साथ चलूंगी । कौआ काला , कोयल काली और गुलेल भी काली । पर हे कन्या सबसे अधिक काले तो तुम्हारे केश हैं ।

भई , यह तो बड़े मजे की बात है । अगर चार सफेद चीजों के नाम बताओ तो तुम्हारे साथ चलूं । बगुला सफेद, वस्त्र सफेद और राजहंस भी सफेद । पर सबसे अधिक सफेद हे कन्या तुम्हारे हाथ के शंख हैं ।

भई बड़े मजे की बात है । चार लाल वस्तुओं के नाम गिनाओ तो तुम्हारे साथ चलूं । जवा का फूल लाल , कनेर का पुष्प लाल और कुसुम का फूल भी लाल । पर हे कन्या सबसे अधिक लाल तो तुम्हारे माथे का सिन्दूर है ।

भई बड़े मजे की बात है । चार कड़ुवी चीजों के नाम बताओ तो तुम्हारे साथ चलूं । नीम कड़ुवा , निसुन्द कड़ुवा , और माकाल भी कड़ुवा पर हे कन्या , सबसे अधिक कड़ुवा तो सौतेली बहिन के साथ रहना ।

भई बड़े मजे की बात है । चार शीतल वस्तुएं के नाम बताओ तो तुम्हारे साथ चलूं । जल ठंडा , स्थल ठंडा और ठंडी है शीतलपाटी । पर हे कन्या सबसे अधिक शीतल है तुम्हारा हृदय ।]

काव्य - सृष्टि के आरंभ काल से कविगण विविध भाषाओं में विचित्र छन्द अलंकारों के द्वारा नारी जाति का स्तवगान करते आ रहे हैं , किंतु उपरोक्त स्तवगान में जो सहज सरल भाव है वह बहुत कम काव्यों में देखने को मिलता है । इसमें एक सरल कौतुक भी छिपा हुआ है । इसमें किसी को संदेह नहीं कि सीता का धनुर्भंग और द्रौपदी का लक्ष्यभेद प्रण बहुत ही कठिन थे , किन्तु इस सरल सीधी कन्या ने जो प्रण किया है वह उतना कठिन नहीं लगता । पृथ्वी में इतनी सारी काली , सफेद , लाल और सुमिष्ट वस्तुएं हैं उनमें सिर्फ चार का नाम गिनाकर ऐसी कन्या को प्राप्त करना भाग्य की बात है । आज के कलयुगी पुरुषों का भाग्य पलट गया है ; धनुर्भंग , लक्ष्यभेद अथवा विचार सभा में विजय प्राप्ति की कोई आवश्यकता नहीं । बल्कि कम्पनी के कागज प्रण करते हैं और उसका पुरुषोचित नीचता के कारण जरा भी लज्जा का अनुभव नहीं करते । इसकी अपेक्षा हमारे आलोच्य ' छड़ा ' के नायक महोदय

को जिस सरल परीक्षा में उत्तीर्ण होकर कन्या को प्राप्त करना पड़ा वह कहीं अच्छा है। यद्यपि परीक्षा फल का विवरण इस ' छड़ा ' में नहीं मिलता, तो भी अनुमान से पता लगता है कि उस व्यक्ति को पूरे नम्बर मिले होंगे। क्योंकि स्पष्ट दिख रहा है कि प्रत्येक श्लोक के चारों उत्तरों में चतुर्थ उत्तर अत्यत संतोष जनक था। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि जब परीक्षिका स्वयं सामने उपस्थित थी, तब हमारे नायक को उन प्रश्नों का उत्तर देना कठिन मालूम हुआ था, यह तो किताब खोलकर उत्तर देना हुआ। किन्तु इस कारण मैं ईर्ष्या प्रकट नहीं करना चाहता। परीक्षिका यदि सन्तुष्ट हुई हों तो हमें और कुछ नहीं कहना।

कन्या प्रथम पंक्ति में कह रही हैं —

जादु, ए तो बड़ो रंग जादु, ए तो बड़ो रंग

इससे लगता है कि परीक्षा बहुत पहिले से ही प्रारंभ हो गई थी और परीक्षार्थी ने ऐसा संतोषप्रद उत्तर दिया कि कन्या की प्रश्न - जिज्ञासा उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। वास्तव में ऐसे मजे की बात और हो ही क्या सकती है।

जो भी हो, हमारे ऊपर इसकी रचना का भार रहने पर शायद खूब लम्बी चौड़ी भूमिका बांधते, इस तरह बीच में ही अकस्मात शुरू नहीं करते। सर्वप्रथम एक परीक्षाभवन का विस्तृत वर्णन करते। वह यदि सेनेट हॉल से नहीं तो ईडनगार्डन से अवश्य मिलता - जुलता होता। और उसके साथ ज्योत्सना, दक्षिणी पवन और कोयल के पंचमस्वर का योग उसे और भी रंगीन बना देते। आयोजन बहुत हो सकता था किन्तु यह सरल सुन्दर कन्या, जिसके केश बुलबुल से अधिक काले हैं, हाथ का शंख राजहंस की अपेक्षा अधिक सफेद है, मांग का सिंदूर कुसुम फूल की अपेक्षा अधिक लाल है और वक्ष:स्थल हिम से भी अधिक शीतल व स्निग्ध है वह कन्या जो सामान्य स्तुति वाक्य सुनकर सहज विश्वास व सरल आनन्द से आत्म-विसर्जन करने को आतुर हो गई है — उस कन्या को हमारे वर्णन-बहुल मार्जित छन्द के बन्धन इस प्रकार से हमेशा के लिए बांधकर नहीं रख सकेंगे।

केवल यह एक ही क्यों, हमारे ऊपर भार रहने से हम अधिकांश ' छड़ों ' का सम्पूर्ण संशोधन कर उन्हें नये संस्करण के योग्य बना सकते हैं। यहां तक कि उनमें सर्वविदित नीति और सर्वजन दुर्बोध तत्वज्ञान का महल भी खड़ा कर सकते हैं। अधिक नहीं तो उन्हें हमारी वर्तमान शिक्षा व सामाजिक स्तर की उन्नत श्रेणी में उत्तीर्ण कर सकते हैं। आप विवेचना करके देखिए वर्तमान सभ्यसमाज में यदि कभी हम चांद को निमंत्रण पत्र भेजकर बुलायें तो क्या उन्हें निम्नलिखित रूप से यह तुच्छ प्रलोभन दे सकते हैं —

आय आय चांदामामा टी दिये जा
चांदेर कपाले चांद, टी दिये जा।
माछ कुटले मूड़ो देब,
धान भानले कुंड़ो देब,
कालो गोरुर दुध देब,
दुध खाबार बाटी देब,
चांदेर कपाले चांद टी दिये जा॥

[चंदा मामा, तू आकर मेरे चाद के माथे पर टीका लगादे। मैं मछली काटने पर तुझे उनका सिर दूंगी, चावल बीनने पर तुझे चावल दूंगी, काली गाय का दूध दूंगी, दूध पीने की कटोरी भी दूंगी। तू मेरे चांद के माथे पर टीका लगा दे।]

यह कौन सा चांद है ? यह हमारे बाल्यसमाज का साधारण चंदा मामा है ! बंगालियों का घरेलू चांद है। यह चांद हमारे गांव में कुटिया के पास वायु आंदोलित बांसवन की आड में झांक कर परिचित स्नेहमयी दृष्टि द्वारा आंगन की धूल में लोटते हुए उलंग शिशु को खेलते हुए देखा करता है; इसके साथ हमारा ग्राम सम्पर्क है। नहीं तो, इतने बड़े व्यक्ति को जो सप्तविंशति नक्षत्र सुन्दरियों के अंतःपुर में विलास करते हैं, जो समस्त सुरलोक के सुधारस को अपने अक्षय रौप्यपात्र में अहिर्निश रक्षा करते आ रहे हैं उस शशलांछन हिमांशुमाली को मछली का सिर, चावल के टूटे दाने और काली गाय का दूध पीने के लिए कटोरी का प्रलोभन देने की कौन हिम्मत करता। हम शायद इन वस्तुओं के बदले पारिजात का मधु, रजनी गन्धा की सौरभ, कोयल का गान, मिलन की हंसी, हृदय की आशा, नयनों का स्वप्न, नववधू की लज्जा इत्यादि विविध प्रकार के दुर्लभ व अपूर्व पदार्थों के नाम गिनाते— किन्तु चांद तब भी जहां है वहीं रहता परन्तु 'छड़ा' के चांद को 'छड़ा' के रचयिता मिथ्या प्रलोभन देने का साहस नहीं करते। मुन्ने के माथे पर टीका लगाना चांद के लिए असंभव है ऐसा वे नहीं सोचते थे। वे ऐसे विश्वासहीन, संदिग्ध नास्तिक प्रकृति के नहीं थे। इसलिए भंडार में जो मौजूद है जमाखाते में जो रोकड़ है उससे अधिक वे कुछ भी कवित्व के उत्साह में स्वीकार नही कर बैठते थे। हमारे बंगदेश का चंदामामा बंगाल की सहस्र झोंपड़ियों में सहस्र सुकण्ठों का निमंत्रण पाकर चुपचाप हंसता रहता; हां या ना कुछ भी नहीं कहता ऐसा प्रकट करता मानो किसी दिन, किसी को भी कुछ संवाद दिये बिना, पूर्व की ओर यात्रा करते समय बीच रास्ते से अपना कौतुक प्रफुल्ल हास्य परिपूर्ण मुख लेकर घर के कोने में आ खड़ा होगा।

हम पहले ही कह चुके हैं कि ये 'छड़े' एक संपूर्ण जगत के टूटे हुए टुकड़े लगते हैं। इनमें विचित्र विस्मृत सुख दुख अंतर्निहित है। पुरातन पृथ्वी के समुद्र तीर के कीचड़ पर जैसे विलुप्त - वंशी प्रभात - पक्षियों के पदचिन्ह शेष रह गये थे और निःशेष कालक्रम की कठोर पदचापों सहित वह कीचड़ जम कर पत्थर हो गया है—वह चिन्ह अपने - आप ही पड़ा था और अपने - आप ही रह गया है, किसी ने उन्हें खोदा नहीं, किसी ने विशेष यत्न से उसकी रक्षा नहीं की — उसी प्रकार इन 'छड़ों' में बहुत दिनों से, बहुत हँसीखुशी और रोना - धोना अपने - आप अंकित हो गये हैं, टूटे फूटे शब्दों में हृदय वेदना सहज ही संलग्न होकर रह गई है। एक मनुष्य का मन बहुत पुराने समय से काल - समुद्र में तैरता तैरता दूरवर्ती वर्तमान के तट पर उत्क्षिप्त हुआ है; हमारे हृदय के निकटवर्ती होने पर उसकी समस्त विस्मृत वेदना जीवन के उत्ताप से उत्तेजित होकर अश्रुओं से सजीव हो उठी है।

ओ पारेते कालो रंग, वृष्टि पड़े झमझम,
ए पारेते लंका गाछटि रांगा टुकटुक करे।
गुणवती भाई आमार, मन केमन करे॥
ए मासटा थाक् दिदि, कँदे ककिये।
ओ मासेते निये जाब पाल्कि साजिये॥
हाड़ हल भाजा भाजा, मास हल दड़ि।
आय रे आय नदीर जले झांप दिये पड़ि॥

[उस पार आकाश का रंग काला लग रहा है, झमझमा कर बारिश हो रही है। इस पार मिर्च का रंग लाल हो चुका है। मेरे गुणवती भाई, मेरा दिल न जाने कैसा हो रहा है। दीदी, तू इस महीने तो रो धो कर रह जा, अगले महीने पालकी सजाकर ले जाऊंगा। सोचते सोचते मेरा शरीर सूख गया है, जी करता है कि नदी में कूद कर जान दे दूं]

यह अंतर्व्यथा, यह रुद्ध संचित अश्रुजलोच्छ्वास किस काल में किस गोपन गृहकोण में किस अज्ञात, अख्यात, विस्मृत नववधू के कोमल हृदय को विदीर्ण कर बाहर घुमड़ आया था। ऐसे कितने ही असह्य दुख जगत में कोई चिन्ह शेष न रख, दीर्घनिश्वास की तरह अदृश्य रहकर वायु में विलीन हो चुके हैं। यह एक दीर्घश्वास न जाने दैवक्रम से किस प्रकार एक श्लोक में आवद्ध रह गया।

ओ पारेते कालो रंग, वृष्टि करे झमझम

ऐसे समय में, ऐसी अवस्था में कोई रह भी कैसे सकता है। ऐसा चिरकाल से होता आया है। बहुत समय पहिले उज्जैन राजसभा के महाकवि भी कह गये हैं।

मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्तिचेतः
.... किम्पुनरदुरसंस्त्रे ।।

कालिदास ने एक दीर्घनिश्वास के साथ जिसका उल्लेख किया है, उनमें वही बात बिलख बिलख कर रो उठी है।

गुणवती भाई आमार, मन केमन करे...
हाड़ हल भाजा भाजा, मास हल दड़ि।
आयरे आय नदीर जले झाँप दिये पड़ि ।।

इसके भीतर जो मर्मान्तक व्यथा, जो दुर्निवार वेदना घुमड़ उठी है उसे कौन व्यक्त कर सकता है? प्रति दिन व प्रति रात व प्रत्येक मुहुर्त में कितना कुछ सहना पड़ रहा है— ऐसे समय में उस स्नेहहीन सुखहीन अपरिचित घर में अचानक पीहर से सुख-दुख का साथी भाई, बहिन की सुधि लेने आया है — हृदय में संचित निगूढ़ अश्रुराशि क्या उस दिन कोई बाधा मान सकते हैं? वही पुराना घर, वही खेलना, वे ही मा-बाप, वही सुख-दुख मय शैशव सब याद करके व्याकुल द्रवित मन हृदय को क्या बांधकर रखा जा सकता है? उस दिन एक महीने की प्रतीक्षा भी लम्बी मालूम दे रही थी। विशेषकर जिस दिन नदी के उस पार काले बादल छाये हुए थे, झमझमाकर बरसात हो रही थी; उस समय इच्छा हो रही थी कि वृष्टि धारामुखरित मेघश्यामल अगाध परिपूर्ण शीतल नदी में डूब कर हृदय की ज्वाला बुझा दूं। इसमें व्याकरण की एक छोटी सी गलती है। उसे बंगभाषा के सतर्क अभिभावकगण क्षमा करेंगे, उसके लिए एक बिन्दु अश्रुपात भी करेंगे। भाई के प्रति 'गुणवती' विशेषण का प्रयोग कर उस अज्ञातनामा कन्या ने असीम मूर्खता प्रदर्शित की है। उस अभागिनी ने स्वप्न में भी नहीं सोचा होगा कि उसके एक दिन के मर्म भेदी क्रंदन के साथ व्याकरण की वह छोटी सी भूल भी जगत में चिर-स्थाई होकर रहेगी। जानने पर शायद वह लज्जा से मर जाती। शायद वह भूल इतनी गंभीर न भी हो, शायद बहन को सम्बोधन करके वह बात कही हो। सम्प्रति बंगभाषा की विशुद्धि की रक्षा हेतु जो उसकी भाषा परम्परा और पुरातन सौंदर्य का बलिदान करने को उद्यत हुए है, आशा है वे भी कभी कभी स्नेहवश भगिनी को भाई सम्बोधन करते हैं। यहां तक कि पत्नियों के द्वारा प्रीतिपूर्ण भाई सम्बोधन का अभिहित होने पर भी पति महोदय उनका तत्क्षण भ्रम संशोधन नहीं करते।

हमारे बंगदेश में एक कठिन अंतर्वेदना है — लड़की को ससुराल भेजना। अप्राप्तवयस अनभिज्ञ मूढ़ कन्या को पराये घर जाना होगा, इस कारण बंगाली – कन्या के मुख पर समस्त बंगदेश की स्नेहकरुण दृष्टि निबद्ध रहती है। उस सकरुण कातर स्नेह ने बंगाल के शारदोत्सव में स्वर्गीयता प्राप्त की है। हमारे घर का यह स्नेह, दुख, बंगाली परिवार की इस चिरंतन वेदना से अश्रुजल आकर्षित कर बंगवासी के हृदय में शारदोत्सव के द्वारा अपनी प्रतिष्टा प्राप्त कर चुके हैं। बंगाली की यह अम्बिका पूजा है, साथ ही साथ उसकी कन्यापूजा भी है। अगमनी [देवी दुर्गा का आगमन] और विजया [उनकी विदा] बंगाल के मातृहृदय के गीत हैं। अतएव यह सहज ही समझा जा सकता है कि हमारे इन 'छड़ों' में भी बंगजननी की मर्मव्यथा नानास्वरूपों में व्यंजित हुई है। —

आज दुर्गार अधिवास काल दुर्गार बिये।
दुर्गा जाबेन श्वसुरबड़ि संसार कांदाये॥
मा कांदेन मा कांदेन धुलाय लुटाये
सेई - जे मा पलाकाटि दियेछेन गला साजाये॥
बाप कांदेन बाप कांदेन दरबारे बसिये
सेई - जे बाप टाका दियेछेन सिन्दुक साजाये॥
मासि कांदेन मासि कांदेन हेंशेले बसिये
सेई - जे मासि भात दियेछेन पाथर साजिये॥
पिसि कांदेन पिसि कांदेन गोयाले बसिये
सेई - जे पिसि दुख दियेछेन बाटि साजिये॥
भाई कांदेन भाई कांदेन आंचल धरिये
सेई - जे भाई कापड़ दियेछेन आलना साजिये॥
बोन कांदेन बोन कांदेन खाटेर खुरो धरे
सेई - जे बोन —

[दुर्गा का आज अधिवास है, कल उसका विवाह है। दुर्गा सारे घर भर को रुलाकर ससुराल जायेगी। मां धूलि में लोट कर रो रही है, वही जिसने गले में गहने सजाकर दिये थे। पिता बाहर सभा में बैठकर रो रहे हैं, वही पिता जिसने सिन्दूक भरकर रुपये दिये थे। मौसी चौके में बैठकर रो रही है, वही मौसी जिन्होंने पत्तल भरभरकर भात खिलाया था। बूआ बाड़े में बैठकर रो रही है : वही बूआ जिसने कटोरी भर-भरकर दूध पिलाया था। भाई आंचल पकड़ कर रो रहे हैं, वे ही भाई जिन्होंने ढेरों

कपड़े दिये थे । बहिन खटिया का पाया पकड़कर रो रही है । वही बहिन जो —]

यहां पाठकों से पास अपराधी बहिन की आशंका में इस 'छड़े' को शेष करने से पहिले ही एक दो बात कह लेना उचित समझता हूं । जो बहिन आज खाट पकड़कर अजस्र अश्रुवर्षा कर रही है उसका पूर्ण व्यवहार किसी सभ्य कन्या के अनुकरण योग्य नहीं है। बहनों में आपसी झगड़े न होना ही अच्छा है, फिर भी ऐसी लड़ाई रोज ही होती रहती है। किन्तु इसलिए उन्हें ऐसी भाषा का व्यवहार करना उचित नहीं जिसे आज मैं सभ्य समाज में उच्चारित करने में कुछ कुण्ठा अनुभव कर रहा हूं । फिर भी वह पंक्ति मैं यहां काट नहीं पा रहा हूं। क्योंकि उसकी भाषा यद्यपि श्रुति मधुर नहीं है, किन्तु उसमें तदपेक्षा विशुद्ध करुण रस की मात्रा अधिक है। भाषांतरित करने से उसका अर्थ यह निकलता है कि इस क्रंदनशीला बालिका ने झगड़े में अपनी सहोदरा को भर्तृखादिका कहकर अपमान किया है । उस बात को थोड़े परिवर्तन के साथ कुछ सभ्य भाषा में नीचे दिया जा रहा है —

बोन कांदेन बोन कांदेन खाटेर धुरो धरे
से - ई जे बोन गाल दियेछेने स्वामी खाकी बले ।

मां ने अलंकार दिये हैं, पिता ने अर्थ दिया है, बूआ ने भात खिलाया है, बूआ ने दूध पिलाया है, भाई ने कपड़े खरीदे हैं, आशा थी कि इस स्नेह मय परिवार में बहिन ने भी इसी के अनुरूप कोई कार्य किया होगा । किन्तु अंतिम पंक्ति पढ़कर अचानक एक आघात-सा पहुंचता है और साथ ही आंखें भी छलछला उठती हैं। मां बाप के पूर्ववर्ती स्नेहशील व्यवहार के साथ विदाई का रुदन सामंजस्यपूर्ण है। लेकिन बहिन, जो हमेशा झगड़ा किया करती थी, एक अकथनीय गाली दिया करती थी । विदा के समय उसीका रोना सर्वाधिक करुण है । आज अचानक यह प्रकट हो गया कि उसके समस्त द्वंद्व - कलह के साथ गुप्त रूप से बहिन के प्रति सुकोमल स्नेह भी संचित हो रहा था—वह अलक्षित स्नेह तीव्र अनुशोचना के साथ उसे आज आघात करने लगा । वह खाट पकड़कर रोने लगी । बचपन में इसी खाट पर वे दोनों सोया करती थीं। यह शयनगृह उनके खेल कूद व कलह विवाद का लीलाक्षेत्र था । आज विच्छेद के समय इस शयनघर में खाट को पकड़, सबसे छुपकर व्यथित बालिका ने जो अश्रुपात किया, उसे स्नेह - गंभीर निर्मल जलधारा में उसका समस्त दोष अपराध घुलकर बह गया ।

इन समस्त 'छड़ों, की एक पंक्ति में, एक शब्द में, सुख-दुख के बड़े बड़े अध्याय गुप्त रह गये हैं। यहां पर जो 'छड़े, उद्धृत हैं उसकी दो पंक्तियों में बंगजननी के चिरकाल के शोक का इतिहास व्यक्त हुआ है—

दोल दोल दुलुनि ।
रांगा माथाय चिरुनि ।।
बर आसबे एखनि ।
निये जाबे तखनि ।।
कँदे केन मर !
आपनि बुझिया देखो कार घर कर ।।

[मां अपनी छोटी बच्ची को झुला रही है। वह सोच रही है कि कुछ दिन बाद वर आकर उसे ले जायेगा। सोच कर उसकी आंखों में आंसू आ जाते हैं। तब उसे इसी में सांत्वना मिलती है, यह स्वाभाविक है।]

शिशु-कन्या को भी झुलाते समय दूर भविष्य की विच्छेद-सभावना मन में उदय होती है और मां की आंखें भर आती हैं। तब एक मात्र सांत्वना इसी से मिलती है कि ऐसा हमेशा से होता आया है। तुम भी एक दिन अपनी मां को रुलाकर पराये घर आई थी—उस दिन के उस निदारुण विच्छेद की वह क्षत वेदना सम्पूर्ण रूप से अदृश्य हो चुकी है—तुम्हारी लड़की भी तुम्हें यथा समय छोड़ कर जायेगी और वह दुख भी अधिक काल तक स्थाई नहीं होगा।

[1] पुंटु जाबे श्वसुरबाड़ि संगे जाबे के ।
घरे आछे कुनो बेड़ाल कोमर बेंधेछे ।।
आम कांठालेर बागान देब छायाय छायाय जेते ।
चार मिन्से काहार देब पाल्कि बहाते ।।
सरू धानेर चिड़े देब पथे जल खेते ।
चार मार्ग दासी देब पाये तेल दिते ।।
उड़कि धानेर मुड़कि देब शाशुड़ि भुलाते !

[पुंटू ससुराल जायगी तो उसके साथ कौन कौन जायगा। घर की बिल्ली ने कमर बांध रखी है साथ जाने के लिए। मैं आम कटहल के बाग दूंगी। उनकी छाया में जाने के लिए। पालकी ले जाने के लिए चार कहार दूंगी। महीन चावल का चिवड़ा रास्ते में जलपान के लिए दूंगी। चार दासियां पांव में तेल लगाने के लिए। और सास को खुश करने के लिए मुड़की [एक प्रकार की मिठाई] दूंगी।]

अंतिम पंक्ति देखने से विदित होता है कि सास को प्रसन्न करने की चिन्ता उस समय भी

---

१. श्री नित्यानन्द विनोद गोस्वामी—संकलित 'छेड़े भुलानो छड़ा' का पाठान्तर द्रष्टव्य।

विद्यमान थी। किन्तु केवल मुड़की द्वारा वह दु:साध्य बात सफल हो सकती है—यह बात यदि विश्वास योग्य हो तो आज की अनेकों माताएं उस सत्य युग के लिए दीर्घनिश्वास सहित आक्षेप करेंगी। आज कल कन्या की सास को किस उपाय से भुलाया जाय इसे कन्या के पिता इस जन्म में नहीं भूल पाते।

कन्या का विछोह ही शोक का एक मात्र कारण नहीं, अयोग्य पात्र से उसका विवाह भी शूल-समान है। फिर भी कई बार जान बूझ कर मां बाप व आत्मीयगण स्वार्थ, धन अथवा कुल को दृष्टि में रख कर निरुपाय बालिका को अयोग्य पात्र के हाथों सौंपते हैं। कभी कभी समाज उस अन्याय की वेदना को प्रकट करता है। उसका परिचय 'छड़ों' में मिलता है। किन्तु पाठकों को स्मरण रहे कि इन 'छड़ों' में सभी कुछ टूटा-फूटा सा है, हंसना रोना सब कुछ इनमें मिलता है।

डालिम गाछे परभु नाचे।
ताक धुमाधुम वाद्दि बांजे॥
आई गो चिनते पार ?
गोटादुई अन्न बाड़ो॥
अन्नपूर्णा[1] दुधेर सर।
काल जाब गो परेर घर॥
परेर बेटा मारले चड़।
कान्‌ते कान्‌ते खुड़ोर घर॥
खुड़ो दिले बुड़ो वर।
हेई खुड़ो तोर पाये धरि।
कुये आयगा मायेर बाड़ि॥
माये दिल सरु शांखा बापे दिल साड़ि।
भाई दिल हुड़को ठेंगा 'चिल श्वसुर बाड़ि'॥

[लड़की के विवाह पर खूब बाजे बज रहे हैं। धाई मां, मुझे पहिचान रही हो ? कुछ खाने को दो मुझे, कल पराये घर जाना है। पराये बेटे ने (दूल्हे ने) तमाचा मारा तो मैं रोते रोते चाचा के पास गई। चाचा ने ही बूढ़े से मेरी शादी की थी। चाचा, मैं तेरे पांव पड़ती हूं। मुझे तू मां के पास पहुंचा दे। मां ने हाथ में शंख की

१. पाठान्तर — अन्न व्यंजन

चूड़ियां पहिनाई , बाप ने साड़ी दी । और भाई ने कहा — ससुराल चल ।]

उस जमाने में अंग्रेज का कानून नहीं था । अर्थात् पहरेदार के ऊपर दांपत्य सम्बन्ध की पुनः प्रतिष्ठा का भार नहीं था । इसलिए आत्मीयजनों को उद्योगी होकर उस काम को यथासाध्य सरलता पूर्वक और संक्षेप में करना पड़ता था । अपनी क्षुद्र बुद्धि द्वारा मैं सोचता हूं कि घर की बहू को शासन करने के लिए पुलिस के विचार की अपेक्षा गृहस्थी का नियम , चौकीदार की बेंतों के बनिस्पत सहोदर भाई की लाठी कहीं अच्छी थी । आज हम स्त्री को पीहर से लाने के लिए अदालत - कचहरी कर रहे हैं, कल शायद उनका मान दूर करने के लिए प्रेसीडेंसी मेजीस्ट्रेट के निकट दरख्वास्त करनी है । किन्तु नये अथवा पुराने किसी भी नियम के द्वारा , केवल पाशविक बल का प्रयोग कर असहाय कन्या को अयोग्य पात्र के हाथ में देना — इतनी बड़ी बर्बर नृशंसता शायद जगत में कहीं नहीं होगी ।

समाज मां - बाप का अपराध तो धीरे धीरे भूल जाता है , किन्तु बूढ़ा पति उसकी आंख की किरकिरी है । तीव्र विद्रूप के द्वारा समाज उसी के ऊपर मन का सारा क्रोध उतारता है । —

तालमाछ् काटम बोसेर बाटम गौरी एल[3] झि ।
तोर कपाले बूड़ो वर आमि करब की ।।
टंका भेंगे शंखा दिलाय काने मदनकड़ि ।
बियेर बेला देखे एलुम बूड़ो चापदाड़ि ।।
चोख खाओ गो बाप - मां , चोख खाओ गो खुड़ो ।
एमन वरके बिये दियेछिले तामाकखेगो बुड़ो ।।
बुड़ोर हुंको गेल भेसे , बूड़ो मरे केशे ।
नेड़े चेड़े देखि बुड़ो मरे रयेछे ।
फेन गालबार समय बुड़ो नेचे उठेछे ।।

[मां बाप कहते हैं अगर लड़की के भाग्य में बूढ़ा पति हो तो उसका क्या कर सकते हैं ? हमने तो उसे सभी कुछ दिया है । रुपये दिये , गहने दिये , पर ब्याह के समय देखा कि घनी दाढ़ी वाला बूढ़ा वर है । मेरे मां - बाप की , रिश्तेदारों की आंखें फूट जांय । देखभाल कर उन्होंने तमाखू खोर बूढ़े के साथ मेरी शादी की । एक दिन जब बूढ़े का हुक्का टूट गया तो बूढ़ा खांस खांस कर मर गया । पर भात का माड़ निका-

३. पाठान्तर — हेन

लते समय देखा तो बूढ़ा नाच उठा था ।]

इससे अधिक वृद्ध की लांछना और क्या हो सकती है ?

अब बंगगृह के जो सम्राट हैं, जो घर में क्षुद्रतम आयु और प्रबलतम प्रताप रखते हैं, उन महामहिम खोका व खुकु [मुन्ना व मुन्नी] का उल्लेख अभी बाकी है ।

प्राचीन ऋगवेद, इंद्र चंद्र वरुण आदि देवताओं के उपलक्ष में रचे गये हैं — और मातृ-हृदय के युगल - देवता खोका एवं पटु के स्तव से इन ' छड़ों ' की उत्पत्ति हुई । किसी की भी प्राचीनता कम नहीं है । क्योंकि ' छड़ों ' की प्राचीनता ऐतिहासिक प्राचीनता नहीं है, वह सहज ही पुरातन है । अपनी आदिम सरलता के कारण वह मानव की सर्व - प्रथम रचना है । इस उन्नीसवीं शताब्दी के वाष्प शून्य तीव्र सूर्यताप में भी वह मानव हृदय के नवीन अरुणोदय राग की रक्षा कर रहा है ।

इस चिरपुरातन नवीनवेद में जो स्नेह गाथाएं, जो शिशुस्तवगान हैं उनके वैचित्र्य, सौंदर्य व आनंद उच्छ्वास की कोई सीमा नहीं है । मुग्धहृदया वन्दनाकारिणीगण एक ही खुकुदेवता की कितनी मूर्तियां गढ़ते हैं, उसका कुछ ठिकाना नहीं, वह कभी पक्षी, कभी चांद, कभी रत्न और कभी फूलों का बन है ।

धनके निये बनके जाब, सेखाने खाब की ।
निरले बसिया चांदेर मुख निरखि ।।

[अपने हृदय - धन को लेकर मैं बन में जाऊंगी तो वहां खाऊंगी क्या ? निराली ठौड़ बैठकर चांद का मुख निरखा करूंगी ।]

सृष्टि को छोड़कर प्रेम जैसा अन्य कोई पदार्थ नहीं । आरंभ काल से वह इस सृष्टि के आदि - अंत व अभ्यान्तर में व्याप्त है तथापि सृष्टि के सभी नियम-कायदे तोड़ना चाहता है । सृष्टि के लोह - पिंजर में वह जैसे आसमान का पंछी है । सहस्रों बार प्रतिषेध, प्रतिरोध, प्रतिवाद, प्रतिघात पाने पर भी उसका यह विश्वास किसी भी प्रकार विचलित नहीं होता कि वह अनायास ही नियम भंग कर सकता है । अपने मन में उसे सम्पूर्ण विश्वास है कि ' मैं उड़ सकता हूं' इसलिए लोहे के सींकचों को वह बार बार भूल जाता है । धन-संपदा को लेकर बन में जाने की कोई आवश्यकता नहीं, घर में रहने से सभी प्रकार की सुविधाएं मिलती हैं । हां, बन में एकांत जरूर मिलता है, पर सिवाय उसके और विशेष कुछ नहीं मिलता । और यहां यह स्वीकार भी किया गया है कि वहां जाने पर उपयुक्त खाद्यवस्तु का अभाव होगा । किन्तु प्रेम तब भी दृढ़ता के साथ कहता है –' तुम क्या सोचते हो, मैं ऐसा कर नहीं सकता ? ' उसके इस असंकोच स्पर्धावाक्य को सुनकर हमारे जैसे प्रवीण विवेचकों की भी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है;

हम कहते हैं, ठीक ही तो है, कर क्यों नहीं सकेगा ? यदि कोई संकीर्ण हृदय संशयी यह पूछ बैठे कि 'वहां खाओगे क्या, तो वह तत्क्षण अम्लान-मुख उत्तर देता है — एकांत में बैठा चांद का मुख देखूंगा। सुनते ही हम सोचते हैं – एकदम ठीक उत्तर मिला। दूसरे के मुंह में जो स्वतः सिद्ध घोर मिथ्या है, उन्माद की अत्युक्ति है, प्रेम के मुख में वही अविवादित प्रामाणिक सत्य है।

प्रेम का एक और गुण यह है कि एक को कुछ और बना देता है। भिन्न पदार्थों में भेद नहीं देखता। पाठकों को पहिले ही उसका उदाहरण मिल चुका है — वे देख चुके हैं कि एक 'छड़' में बिना किसी भूमिका के ही खोका को पक्षियों में शामिल कर दिया गया है— कोई प्राणीतत्ववेत्ता उसमें आपत्ति नहीं करते। और दूसरे क्षण ही जब खोका को चंद्रमा का घनिष्ठ आत्मीय बताया जाता है तब कोई ज्योतिविद उसका प्रतिवाद करने का साहस नहीं करते। परन्तु स्नेह की स्वेच्छाचारिता तभी सर्वाधिक प्रकाशित होती है जब वह आडम्बर सहित युक्ति की अवतारणा कर अंत में उस पर अवज्ञापूर्वक पदाघात कर उसे तोड़फोड़ डालता है। उसका एक दृष्टांत नीचे दिया जा रहा है। —

चांद कोथा पाब बाछा, जादुमणि !
माटिर चांद नय गड़े देब,
गाछेर चांद नय पेड़े देब—
तोर मतन चांद कोथाय पाब।
तुई चांदेर शिरोमणि।
घुमो रे आमार खोकामणि।

[बच्चे मेरे, मैं चांद कहां से लाकर दूं। वह मिट्टी का नहीं जो गढ़ दूं, पेड़ का फल नहीं जो तोड़ दूं। पर तुझ जैसा चांद कहां से लाऊंगी। तू तो स्वयं चांद का शिरो-मणि है।]

चांद पहुंच से बाहर है, वह मिट्टी का बना हुआ नहीं है, पेड़ का फल नहीं है – ये सभी युक्तियां विशुद्ध हैं – अकाट्य व नूतन भी, इसमें कहीं भी कोई छिद्र नहीं है। किन्तु यहां तक पहुंच कर यदि खोका से कहना पड़े कि तुम ही चांद हो, और सभी चन्द्रों में श्रेष्ठ हो तो मिट्टी का चांद भी सम्भव है और पेड़ का चांद भी असम्भव नहीं। तब फिर पहले युक्ति बताने की क्या आवश्यकता थी ?

यहां पर यह कहना अनुचित नहीं होगा कि स्त्रियों में जो युक्तिहीनता की बहुलता दिखाई देती है वह उनकी बुद्धिहीनता नहीं है। जिस जगत में वे रहती हैं, उस जगत में स्नेह का

ही एकाधिपत्य है। प्रेम स्वर्गीय है। उसका कहना है कि मेरी अपेक्षा और किसी को प्रधानता क्यों मिले ? मेरी इच्छा है इसलिए विश्व - नियमों की सारी बाधाएं क्यों नहीं दूर होंगी ? वह स्वप्न देखता है कि अभी भी वह स्वर्ग ही में है। किन्तु हाय, पृथ्वीलोक पर स्वर्ग के जैसा घोर अयौक्तिक पदार्थ और क्या होगा ? तथापि पृथ्वी पर जितना भी स्वर्ग है उसे केवल रमणी, बालक, प्रेमी व भावुक व्यक्तियों ने मिलकर समस्त युक्ति व नियम के प्रतिकूल धारा में इस धरातल पर आबद्ध कर रखा है। पृथ्वी केवल पृथ्वी ही है, यह बात वे समय समय पर भूल जाते हैं और उसी भूल के कारण पृथ्वी पर देवलोक उतर आता है।

एक तरफ प्रेम भेद - विभेद की सीमा लुप्त कर चांद, फूल, खोका, पक्षी सबको एकाकार कर सकता है, वैसे ही दूसरी ओर जहां सीमा न हो वहां सीमा रेखा खींच देता है, जहां आकार न हो वहां आकार निर्मित कर देता है।

अब तक किसी भी प्राणीतत्ववित् ने नींद को स्तन्यपायी अथवा दूसरे किसी जीवश्रेणी में स्थान नहीं दिया है। परंतु नींद खोका की आंखों में आया करती है, इसलिए सदा प्यार के सृजनहस्त में रह कर वह भी जाने कब एक मनुष्य - मूर्ति धारण कर बैठी है।

हाटेर घुम, घाटेर घुम, पथे पथे फेरे।
चार कड़ा दिये, किनलेम घुम, मणिर चोखे आयरे ॥

[हाट की नींद, घाट की नींद रास्ते रास्ते फिर रही है। चार कौड़ी देकर मैंने उसे खरीद लिया है। अब तू खोका की आंखों में आ।]

रात बहुत हुई है, अब तो हाट में, घाट पर आदमी नहीं है। इसलिए हाट की नींद, घाट की नींद आश्रयहीन होकर अंधियारे पथ पर लोगों की तलाश में घूम रही है। शायद इसलिए इतने सुलभ मूल्य पर वह मिल गई। नहीं तो पूरी रात के लिए चार कौड़ियां आजकल की मजदूरी की तुलना में कुछ भी नहीं है।

कहते हैं कि ग्रीक कवियों ने और माईकल मधुसूदनदत्त ने भी नींद का वर्णन स्वतंत्र मानवी रूप में किया है। किन्तु नृत्य की एक निर्दिष्ट वस्तु रूप में गणना केवल हमारे 'छड़ों' में ही लक्षित होती है।

थेना नाचन थेना। बट पाकुड़ेर फेना ॥
बलदे खालो चिना छागले खालो धान ।
सोनार जादुर जन्ये जाये नाच्ना किने आन ॥

[बैल ने चने खाये और बकरी ने धान खाया। कोई जाकर मेरे सोने के टुकड़े के लिए नाच खरीद कर लाओ।]

केवल इतना ही नहीं। खोका के अंग - प्रत्यंग में इस नृत्य को स्वतंत्र करके देखना, यह भी अणुवीक्षण या दूरवीक्षण के द्वारा सम्भव नहीं, केवल स्नेहवीक्षण के द्वारा ही सम्भव है।

हातेर नाचन, पायेर नाचन, बाटा मुखेर नाचन—
नाटा चक्षेर नाचन, कांटालि भुरुर नाचन।
बांशिर नाकेर नाचन, माजा बेंकुर नाचन—
आर नाचन की।
अनेक साधन क'रे
जादु पेयेछि॥

[खोका के हाथ नाच रहे हैं, पांव नाच रहे हैं, मुख नाच रहा है, आंखें नाच रही हैं, कंटाली भौहें नाच रही हैं, बांसुरी जैसी सीधी नाक नाच रही है, और मैं किसका नाच देखूं। बड़ी साधना के बाद मुझे यह रत्न मिला है]

प्यार कभी अनेक को एक करके देखता है, कभी एक को अनेक करके देखता है, कभी वृहत् को तुच्छ और कभी तुच्छ को वृहत् बना देता है। 'नाचो रे नाचो रे जादु, नाचन - खानि देखि।' [नाचो रे नाचो बच्चे, तुम्हारे नाचने को जरा देखूं] नाचने को ! जैसे बच्चे से उसके नाचने को अलग करके स्वतंत्र रूप से देखा जा सकता है; जैसे वह भी बड़े प्यार की चीज है।

खोका एल बेड़िये।
दुध दाओ गो जुड़िये॥
दुधेर बाटि तप्त।
खोका हलेन क्षाप्त॥
खोका जाबेन नाचे।
लाल जुतुया पाये॥

[घूम कर खोका घर आया है। उसे दूध ठंडा करके दो। दूध की कटोरी गर्म है और इससे उनका मिजाज भी गर्म हो गया। खोका बाबू लाल जुतुआ पहिन कर नाव में घूमने जायेंगे।]

खोका बाबू भ्रमण के बाद घर आकर दूध की कटोरी देखकर बड़े क्रोधित हो उठे हैं और वह घटना गृहराज्य में बहुत बड़ी घटना है, एवं उन्होंने नौकाभ्रमण का संकल्प कर रखा है, यह बात भी इतिहास में लिपिबद्ध करने योग्य है — किन्तु पाठकगण अंतिम पंक्ति

को ओर जरा लक्ष्य कर देखेंगे। हम यदि सर्वश्रेष्ठ अंग्रेजी दूकान से घुटनों तक ऊंचा बूट खरीद कर खटपटा कर घूमें तो भी लोग, उसे जूता अथवा जूती ही कहेंगे। किन्तु खोका बाबू के अतिक्षुद्र कोमल चरणयुगल में छोटी छोटी घण्टियों वाला सामान्य मूल्य का जो अति-क्षुद्र लाल जूता है वह 'जुतुआ' कहलाता है। इसमें स्पष्ट दिख रहा है कि जूता का आदर भी बहुत कुछ पदयुगल पर ही निर्भर करता है, उसके अन्य मूल्य की कोई भी खबर नहीं रखते।

उपसंहार में एक और बात लक्ष्य करके देखनी है। जहां पर मनुष्य का गंभीर स्नेह, अकृत्रिम प्रीति है, वहीं उसकी देवपूजा भी है। हम जहां मनुष्य से प्रेम करते हैं वहीं पर देवता को उपलब्ध करते हैं। वहां जो कहा गया है – 'एकांत में बैठकर चांद का मुख निरखा करूं,' वह देवता का ही ध्यान है। शिशु के क्षुद्र मुख पर ऐसा क्या कुछ है जिसका निरीक्षण करने के लिए जिसे परिपूर्ण रूप से उपलब्ध करने के लिए अरण्य के एकांत में जाने की इच्छा होती है – लगता है मानो समस्त संसार, संसार नियमित नित्यकर्म इस आनन्द-भण्डार से हृदय को विक्षिप्त किये दे रहे हैं। योगीगण जिस अमृतलालसा में पानाहार त्याग कर अरण्य में अवसर की खोज में जाया करते थे, जननी को अपनी संतान के मुख पर उस देवदुर्लभ अमृतरस का सन्धान मिला है तभी तो उनके हृदय के उपासनामन्दिर से यह गाथा फूट पड़ी है —

धनके निये बनके जाब, सेखाने खाब की।
निरले बसिया चांदेर मुख निरखि॥

इसीलिये 'छड़ों' में प्रायः यह देखा जाता है कि स्वयं के पुत्र के साथ देवकी के पुत्र को मिला दिया गया है। किसी और देश में मनुष्य और देवता को इस प्रकार एक कर देने से देवता का अपमान कहा जाता। किन्तु मेरे विचार में मनुष्य के उच्चतम गभीरतम मधुरतम जीवित सम्बन्धों से देवता को स्वतंत्र रखने से मनुष्यत्व का भी अपमान होता है और देवत्व का भी आदर नहीं होता। हमारे 'छड़ों' में मर्त्य का शिशु स्वर्ग के देवता के साथ जब तक एक हो गया है – वह सहज ही, बड़ी अवहेलना के साथ, उसके लिए स्वतंत्र चालचित्र की भी आवश्यकता नहीं पड़ती है। शिशु देवता के अति अद्भुत, असंगत, अर्थहीन चालचित्र के साथ स्वर्ग के देवता अलक्ष्य रूप से अपने आप ही शिशु से मिल खड़े होते हैं।

खोका जाबे बेड़ करते तेलिमागिदेर पाड़ा।
तेलिमगिरा मुख करे छे केन रे मानख चोरा॥

भांड़ भेंगे छे, ननि खेये छे, आर की देख पाब।

कदमतला देखा पेले बांशि केड़े नब ।।

[खोका तेलियों के महल में घूमने जायेगा। अरे माखनचोर, बता उनकी वे स्त्रियां तेरे ऊपर लांछन क्यों लगा रही हैं? वे कह रही हैं कि भांडे तोड़ दिये, मक्खन खा डाला, अब और वह कहां मिलने वाला है? कदम्ब बन में दिखाई दिया तो हम उसकी बांसुरी छीन लेंगी।]

हठात्, तेलियों के मुहल्ले में खोका बाबू कब बांसुरी लेकर आये हैं वह वे ही समझ पायेंगे जिनके कानों से वह वंशीध्वनि जाकर मर्म में पहुंची है।

मैंने 'छड़ां' की तुलना मेघ से की है। दोनों परिवर्तनशील हैं, विविध वर्ण द्वारा रंजित, वायुस्रोत में यथाइच्छा भ्रममान! देखने पर निरर्थक से लगते हैं। 'छड़ां' में भी कला-विचार शास्त्र से बाहर है, मेघ विज्ञान भी शास्त्र की पकड़ में ठीक से नहीं आता। किन्तु जड़जगत व मानवजगत में ये दोनों उच्छृंखल अद्भुत पदार्थ चिरकाल से महान उद्देश्य की साधना कर रहे हैं। मेघ, जलधारा के रूप में बरस कर शिशुशस्य को प्राणदान दे रहा है और 'छड़ां' में भी स्नेहरस से विगलित होकर कल्पना-वृष्टि द्वारा शिशु-हृदय को उर्वर बना रहा है। लघुकाय बन्धनहीन मेघ अपने लघुत्व व बंधनहीनता से जगत के हित-साधन में स्वतः उपयोगी हो उठा है, एवं ये 'छड़े' भी भारहीनता, अर्थ-बन्धनशून्यता और विचित्रतावश हमेशा से शिशुओं का मनोरंजन करते आ रहे हैं – ये शिशुमनोविज्ञान के किसी भी सूत्र के अनुसार रचित नहीं हुए हैं।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'लोकसाहित्य' का पहिला अध्याय समाप्त।

क्रमशः

जच्चा के गीत

बागां रा बड़बोर

राज म्हांनै भावै बागां रा बड़बोर
जीमौ नीं सीरौ लापसी, बवड़ मती जीमौ खाटा बोर
जेठजी सा आगै वीणती, म्हांनै लै दौ सूवापंखी बोर
राज म्हांनै भावै बागां रा बड़बोर

जीमौ नीं घेवर मोकळा, बवड़ मती जीमौ खाटा बोर
देवर आगै वीणती, म्हांनै लै दौ बागां रा बड़बोर
राज म्हांनै भावै सूवापंखी बोर

लास्यां केळा मोकळा, भावज मती जीमौ खाटा बोर
साईना आगै वीणती, म्हांनै लै दौ बागां रा बड़बोर
धण नै भावै बाड़ियां रा बड़बोर

साईना बागां मांचरिया, लाया बागां रा बड़बोर
धण नै भावै बागां रा बड़बोर
जच्चा रांणी नै भावै सूवापंखी बोर

राज — आदर सूचक सम्बोधन । **म्हांनै** — हमें । **भावै** — खाने में स्वादिष्ट लगते हैं । **रा** — के । **बड़बोर** — बड़े बेर । **जीमौ** — खाओ । **सीरौ** — हलुआ । **बवड़** — बहू । **खाटा** — खट्टे । **वीणती** — विनती । **मोकळा** — अत्यधिक । **लास्यां** — लायेंगे । **साईना**— पति । **धण** — पत्नी । **मांचरिया** — रवाना हुए ।

दाई - माई

सार रमता स्यांम पासा राज रा दूर करो
आंगण सोहंता नार, पिछोकड़ क्यूं रे खड़ा
अलबेल्यां पिछोकड़ क्यूं रे खड़ा
कांई थारै माथै मतवाय
जी ओ धण, कांई रे दूखै आंखड़ली
अलबेल्यां कांई रे दूखै आंखड़ली

नहीं रे म्हारै माथै मतवाय,
जी ओ ढोला, नहीं म्हारै माथै मतवाय
नहीं रे दूखै आंखड़ली
कसमस दूखै छै पेट, जांघां थरराय रही
अलबेली जांघां थरराय रही

होय घुड़लै असवार
जी ओ ढोला होय घुड़लै असवार
दाई - माई नै लेण चढ़ी

व्हिया ढोला घोड़ै असवार, दाई - माई नै लेण चढ़्या
पूछै ढोलौ पांणी री पिणियार, दाई - माई रौ घर किसौ
सूरज सांम्ही पोळ, जी ओ ढोला सूरज सांम्ही पोळ
सूवा, दाई रै केळां करै
बैठी दाई तखत बिछाय, बोलै दाई गरब भरी

सार — चौपड़। **रमता** — खेलते हुए। **स्यांम** — स्वामी। **सोहंता** — शोभित। **पिछोकड़**— पीछे। **कांई** — क्या। **थारै** — तुम्हारे। **मतवाय** — सिर दर्द। **दूखै** — दुख रही है। **ढोला** — पति के लिए सम्बोधन। **पिणियार** — पनिहारिन। **सांम्ही** — सामने। **केळां** — क्रीड़ा - केलि।

ऊठौ दाई म्हांरै घरै चाल , अबै थांरी वेळा हुई
कांईं थारी कस्टियोड़ी बैन , कांईं घर री गोरड़ी
नहीं म्हांरै कस्टिया है बैन , भलां घर री गोरड़ी
हां जी घर री गोरड़ी
जद चालूं थांरै साथ , पैली म्हां सूं कौल करौ
जे थांरै जलमै पूत , दाई - माई नैं बाळलौ घड़ावौ
जे थांरै जलमैला धीव , दाई - माई नैं चूंदड़ ओढ़ावौ

कचमच्च माच्यौ है कीच , पाळा नहीं रे चलां
अलबेल्यां जी म्हैं पाळी नहीं रे चलां
थे घुड़लै असवार , जी औ दाई थे घुड़लै असवार
अबै पाळौ म्हैं जी चलूं
पड़ै छै सियाळै रौ सी , उघाड़ो नहीं रे चलूं
थे म्हारौ थिरमौ ओढ़ , उघाड़ौ म्हैं जी चलूं

गवाड़ै धड़ूक्यौ है सांड , माराजा नैं सुगन भला
आई दाई डोढ़यां रै मांय , पदारथ जलम गिया
आई दाई साळां रै मांय , हिगैमिग लाग रही
पूत दियौ रघुनाथ , दाई म्हांरै कांईं रे करचौ

दाई - माई रै खुला छै केस , जच्चा - रांणी डरप रह्या
दाई - माई री आंख्यां छै गीढ़ , जच्चा - रांणी सूग करै
अलबेली जच्चा - रांणी सूग करै
दाई - माई रे मोटौ छै पेट , जच्चा - रांणी लाज मरै

बुलावौ म्हारा देवर जेठ , दाई - माई नैं देवौ रे थड्डा

कस्टियोड़ी — प्रसव से पीडित । **कौल** — वचन । **बाळलौ**—गले का एक गहना । **धीव**—पुत्री । **पाळा**—पैदल । **थिरमौ**—दुशाला । **पदारथ**—पदार्थ , रत्न । **हिगैमिग**—भागदौड़ , हलचल । **सूग** — घृणा , घिन । **थड्डा** — धक्के ।

आंगण सूखै है सूंठ, दाई - माई चोरटड़ी
गवाड़ में ब्याई गाय, पिछोकड़ कूकरड़ी

दाई - माई दौड़ सकै तौ दौड़, धाबळ थारो फाड़ लेसी
बुलावौ हालरिया रौ बाप, पैली म्हां सूं कौल करसी
चालौ दाई सोनी री दुकांन, दाई - माई नै बाळलौ घड़ाऊं
चालौ दाई मोदी री दुकांन, दाई - माई नै चूंदड़ ओढ़ाऊं
सुगरौ हालरिया रौ बाप, नुगरी जच्चा आप हुई
अलबेली जच्चा - रांणी नुगरी हुई

मती कोई लोग सुणावौ

सोजत गढ़ सूं अजमौ मंगावौ
अजमौ आप कुटावौ गाढ़ा मारूजी
धमकौ लोग सुणैला

दाई - माई सुणसी तौ दौड़ घर आसी
थें ईं म्हारै साज संवारौ, सेला मारूजी
मती कोई लोग सुणावौ

मासूजी सुणसी दौड़ घर आसी
थें ईं म्हारै सीरौ रांधौ, सेला मारूजा
मती कोई लोग सुणाजौ

कूकरड़ी — कुतिया। **धाबळ** — लहंगा, घाघरा। **हालरिया** — शिशु। **बाळलौ** — गले का गहना विशेष। **सुगरौ** — कृतज्ञ। **नुगरौ** — कृतघ्न। **अजमौ** — अजवाइन। **गाढ़ा** — घनिष्ठ। **मारूजी** — पति के लिए सम्बोधन। **सीरौ** — हलुवा। **रांधौ** — पकाओ।

जेठांणी सुणसी दौड़ घर आसी
थें ईं म्हारै पिलंग बिछावौ , सेला मारूजी
मत कोई लोग सुणावौ

बाई सा सुणसी दौड़ घर आसी
थें ईं म्हारै साख्या पुराओ , सेला मारूजी
मत कोई लोग सुणाजो

नेवगी सुणसी दौड़ घर आसी
थें ईं म्हारै हरी बंधावो , सेला मारूजी
मत कोई लोग सुणावौ

कुड़छी फेर , कड़ाई फेरी
मूछयां पै मिरियौ फेरावौ , सेला मारूजी
मती कोई लोग जगाजौ

दिल री दरियाव जच्चा हालर जायौ
छांनै सै पीव जगायौ , सेला मारूजी
मती कोई लोग सुणावौ

बुगलौ

बुगलौ तौ पूछै म्हारी सारस बुगली
थांरी तौ चांच किण विध चरचरी
जच्चा रांणी रै गीगौ जायौ ,
अजमा री बोरी म्हारा बुगला म्हैं खोली

नेवगी — नाई । हरी — बंदनवार । छांनै — चुपके । थांरी — तुम्हारी । चरचरी — चटपटी , नमकीन ।

भूठी अै बुगली भूठ मती बोलै
कोई जिनावर सेजां रम गियौ
सुणौ सुणौ हे म्हांरी सही अै सहेलियां
जंगळ रौ जिनावर बुगली रौ अंत लियौ
चार महीना बुगलौ पांख पसारी
बुगली चुग लावै, म्हांरौ बुगलौ नहीं चुगै

बुगलौ तौ पूछै म्हारी सारस बुगली
थांरी तौ चांच किण विध चीकणी
जच्चा रांणी रै गीगौ जायौ, ललयौ जायौ
घी रा पीपा म्हारा बुगला म्हैं खोलिया

भूठी अै बुगली भूठ मत बोल
कोई रे असमाधियौ सेजां रम लियौ
सुणौ सुणौ हे म्हांरी सही अै सहेलियां
जंगळ रौ जिनावर बुगली रौ अंत लियौ
चार महीना बुगलौ पांख पसारी
बुगली चुग लावै, म्हारौ बुगलौ नहीं चुगै

बुगलौ तौ पूछै म्हारी पारस बुगली
थांरी तौ चांच किण विध मीठड़ी
जच्चा रांणी रै गीगौ जायौ, घेनड़ियौ जायौ
गुळ री बोरी म्हांरा बुगला म्हैं खोली

भूठी अै बुगली भूठ मत बोल
कोई अै पखेरू सेजां रम लियौ
देखौ अै म्हारी सही अै सहेलियां

पांख पसारी — एक ठौड पांखे पसार कर बैठ जाना, उड़ने की कतई चेष्टा न करना। **गीगौ** — शिशु। **असमाधियौ** — बाधित। **घेनड़ियौ** — शिशु।

उडण पंखेरू बुगली रौ अंत लियौ
चार महीना बुगलौ पांख पसारो
बुगली चुग लावै, म्हांरौ बुगलौ नहीं चुग

पगल्या लिख मेलौ

जच्चा रांणी जायौ है पूत
पगल्या लिख मेलौ भंवर सा म्हारा बाप रै
बाभौजी म्हांरा केहीजै दातार
घुड़ला तौ देसी नाईजी थांनै हींसता

कोरा - कोरा कागदिया मंगाय
पगल्या लिख मेलौ ओ भंवरसा म्हारा बाप रै
काकौसा म्हारा केहीजै दातार
करहा तो देसी नाईजी थांनै गाजता

कोरा - कोरा कागदिया मंगाय
पगल्या तौ लिख मेलौ भंवरसा म्हारा बाप रै
वीरौसा म्हारा केहीजै दातार
मोहरां तौ देसी ओ नाईजी थांनै सोवनी

कोरा - कोरा कागदिया मंगाय
पगल्या लिख मेलौ ओ भंवरसा म्हारै बाप रै
माताजी म्हारा केहीजै दातार
पीळौ तौ मोलासी भंवरसा म्हांरै केसरिया

पगल्या— सद्य - जात शिशु के पैरों के गुलाबी निशान भेजने की बधाई को 'पगल्या' भेजना कहते हैं। **भंवरसा** — पति के लिए सम्बोधन । **करहा** — ऊंट । **वीरौसा** — भाई । **पीळौ** — पीले रंग की ओढनी ।

पीळौ

गाढ़ा मारू म्हांनै पीळौ दो रंगाय
धण पीळा रा साबल्या जी म्हारा राज
दिवर जिठाण्यां पैरै पीळा रा वेस
धण रै पीळौ लावज्यौ जी म्हारा राज

दिवर - जिठाण्यां जाया लाडण पूत
कोई थें धण जाई धीवड़ी जी म्हारा राज
किण आगै करूंला पुकार
किण आगळ करस्यूं वीणती जी म्हारा राज

सूरज आगै करूंली पुकार
वेमाता आगळ वीणती जी म्हारा राज
सूरज म्हांनै देसी लाडण पूत
वेमाता रळी पुरावसी जी म्हारा राज

सूरज म्हांनै दीनौ लाडण पूत
वेमाता रळी पुराविया जी म्हारा राज
आई माराजा सैं जळवा री रात
कमधजियौ मै'ल पधारिया जी म्हारा राज

ओ लौ सायबा लाडण पूत
त्रोल्याड़ा बोल संभाळजौ जी म्हारा राज

गाढ़ा — घनिष्ठ। **मारू** — पति के लिए सम्बोधन। **धण** — पत्नी। **साबल्या** — विर - लता। **धीवड़ी** — बेटी। **आगळ** — सामने। **वेमाता** — विधात्री। **रळी पुरावसी** — रंग-रली सार्थक करेगी। **सैं** — उसी दिन। **जळवा** — नवप्रसूता स्त्री का सूतिका - गृह से बाहर निकलने पर सर्वप्रथम किसी जलाशय पर जल - पूजन की क्रिया। **कमधजियौ** — पति के लिए सम्बोधन।

पीळा प्यारी धण दो रंगावां चार
थें पीळौ भल ओढ़ज्यौ जी म्हारा राज

पैलौ पीळौ म्हारी दाई - माई नै ओढ़ाव
म्हारौ नाजक जीव उबारियौ जी म्हारा राज
दूजौ पीळौ म्हारा सासूजी नै ओढ़ाव
साईणा ओदर लोटिया जी म्हारा राज

तीजौ पीळौ म्हारा वाभीसा नै ओढ़ाव
साईणा नै गोद खिलाविया जी म्हारा राज
चोथौ पीळौ म्हारा बाईसा नै ओढ़ाव
महेलियां में कहीजै लाडला जी म्हारा राज
पांचवौ पीळौ थांरी प्यारी धण नै ओढ़ाव
माराजा रौ बंस बधावियौ जी म्हारा राज

पीळौ

गाढ़ा मारू म्हांनै पीळौ दौ रंगाय
नवा नगर सूं माराजा पोत मंगाद्यौ सा
हाथ पचीसां गज तीसां
छकिया मारूजी पीळौ रंगाद्यौ सा

नवा नगर सूं माराजा छींपौ बुलावौ मा
बजारां में बैठ रंगावौ धण रा मारूजी
पीळौ रंगाद्यौ सा

पीळा — पीले रंग की ओढ़नी। **धण** — स्त्री, पत्नी। **साईणा** — पति। **ओदर** — उदर। **वाभीसा** — जिठानी। **बाईसा** — ननद। **गाढ़ा** — घनिष्ठ। **मारू** — पति के लिए सम्बोधन। **म्हांनै** — हमें। **पीळौ** — पीले रंग की ओढ़नी।

अल्लां पल्लां तौ माराजा बंधण बंधावौ मा
मोतीचूर छपावौ धण रा मारूजी
पीळौ रंगाद्यो सा

पीळौ तौ लाय माराजा माळां में मेल्यौ मा
माळ पवासा लेवै धण रा मारूजी
पीळौ रंगाद्यौ मा

पीळौ तौ ओढ़ जच्चा रांणी सूरज पूज्यौ मा
दिवर जिठांणियां मुखड़ौ मोड़ियौ धण रा मारूजी
कांई तौ पीळौ जच्चा री माय मोलायौ
कांई थारै जांमणजायौ लायौ धण रा मारूजी

नहीं तौ पीळौ म्हारी माय मोलायौ
नहीं तौ जामणजायौ लायौ धण रा मारूजी
बापजी सा रा छावा, वूजीसा रा जाया
बाईसा रा वीरा पीळौ लाया धण रा मारूजी
पीळौ रंगाद्यौ मा

पीळौ तौ ओढ़ जच्चा मैल पधारचा मा
दिवर जिठांणियां निजर लगाई धण रा मारूजी
पीळौ रंगाद्यौ मा

आंख्यां नीं खोलै जच्चा मुखड़ै नीं बोलै सा
जच्चा रा राजन विलखा डोले
धण रा मारूजी पीळौ रंगाद्यौ मा

मोतीचूर छपावौ — लड्डू के समान चित्रित। **पवासा लेवै** — जगमगा रही है। **जांमणजायौ**—भाई। **बापजी सा**—श्वसुर। **छादा** — पुत्र। **वूजीसा**—सास। **बाईसा** — ननद। **वीरा** — भाई। **धण** — पत्नी।

नवा नगर सूं माराजा वेद बुलावौ सा
जच्चा रै डीलां रा जतन करावौ सा
धण रा मारूजी पीळौ रंगाद्यौ सा

आपरै चढ़ण रौ माराजा घुड़लौ वगसावौ सा
जच्चा री निजर उतारौ
धण रा मारूजी पीळौ रंगाद्यौ सा

आंख्यां भल खोलै, जच्चा मुखड़ै भल बोलै सा
जच्चा रा राजन हरखिया डोलै
धण रा मारूजी पीळौ रंगाद्यौ सा

जच्चा झिरमिर बरसै मेह

जच्चा झिरमिर बरसै मेह बड़भागण
पीळौ तौ भीजै थांरौ केसरिया
मंडग्यौ चौपड़ रौ ख्याल बड़भागण
तीतर पंखी बादळ होय रह्यौ
जच्चा सीस बण्यौ नारेळ अै बड़भागण
आटी तौ वासग नाग ज्यूं बड़भागण
जच्चा थारी नाक सुवा री चांच अै बड़भागण
होठ कसूंमल घोंटिया अै बड़भागण
जच्चा थारा दांत दाड़म रा बीज अै बड़भागण

डीलां — देह। **जतन** — यत्न। **वगसावौ** — बख्शीश करो। **हरखिया** — हर्षित। **बड़भागण** — बड़े भाग्य वाली। **पीळौ** — पीले रंग की ओढ़नी। **थांरौ** — तुम्हारा। **नारेळ** — नारियल। **आटी** — चोटी। **वासग नाग** — वासुकि नाग। **कसूंमल घोंटिया** — घुटे हुए लाल रंग के समान।

मिरग सरीसा धण रा लोयणा अै बड़भागण
जच्चा थारी बांह चंपा री डाळ अै बड़भागण
पासा तौ वेलण वेलिया अै बड़भागण
जच्चा थारी जांघ देवळ गढ़ रौ थांभ अै बड़भागण
पींड्यां तौ राय रूंवाळियां अै बड़भागण
जच्चा गात बण्यौ गिणगोर अै बड़भागण
कांई संचै धण उतरिया अै बड़भागण
जच्चा कांई थानै घड़िया अै सोनार अै बड़भागण
कांई संचै धण उतरिया अै बड़भागण
माराजा जलम दियौ म्हारी माय अै बड़भागण
रूप दियौ रुघनाथ जी अै बड़भागण
जच्चा धिन थारै सुसराजी रौ भाग अै बड़भागण
ज्यांरै भलांई बवड़ पधारिया अै बड़भागण
जच्चा धिन थारै साईणै राजा रौ भाग अै बड़भागण
ज्यांरौ बंस बधावियौ अै बड़भागण

घर आणंद हुवौ

सांवळड़ी पदारथ जायौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रा साईणा नै वेग बुलावौ अै घर आणंद हुवौ

मिरग — मृग। **सरीसा** — समान। **धण** — पत्नी। **लोयणा** — लोचन। **पासा वेलण वेलिया** —धड़ के बाजू ऐसे चिकने मानो वेलन से घुटे हुए हों। **थांभ** — थंभा। **पींड्यां** — पिंडली। **राय रूंवाळियां** — रक्तिम रोमावलि। **धिन** — धन्य। **बवड़** — बहू। **साईणै**— स्वामी। **ज्यांरौ** — जिनका। **बंस** — बंश। **बधावियौ** — बढ़ाया। **सांवळड़ी** — सांवले रंग की पत्नी के लिए सम्बोधन। **पदारथ**—पदार्थ, रत्न। **जायौ**—जन्म दिया। **साईणा**—स्वामी।

जच्चा री दाई-माई नै वेग बुलावौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रांणी हालरियौ जायौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रा सासूजी नै वेग बुलावौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रै डीलां रा जतन करावौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रा जेठांणी नै वेग बुलावौ अै घर आणंद हुवौ
सांवळड़ी पदारथ जायौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रै नेवगी नै वेग बुलावौ अै घर आणंद हुवौ
म्हांरै डोढ़यां में हरी बधावौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रांणी हालरियौ जायौ अै घर आणंद हुवौ
जच्चा रै ढोलीजी नै वेग बुलावौ अै घर आणंद हुवौ
म्हारै डोढ़यां में ढोल घुरावौ अै घर आणंद हुवौ
सांवळड़ी पदारथ जायौ अै घर आणंद हुवौ

अजमौ

थें ई ओ म्हारा गाढ़ा मारू चाकरियां सिधावौ
अजमौ म्हांरै कुण जी मोलावसी ओ म्हारा राज
म्हांरै छै धण वाभोसा वडेरा, वाभोसा वडेरा
अजमौ म्हांरै वै ई मोलावै हो राज

थांरा ओ वाभौसा रौ नहीं ओ भरोसौ
थांरा ओ वाभौसा पांच रौ मोलावै पचीस रौ वतावै सा
ओ जिवड़ो म्हारौ नहीं पतीजै राज

वेग — जल्दी। **हालरियौ** — शिशु। **डीलां** — देह। **जतन** — यत्न। **नेवगी** — नाई। **हरी**—बंदनवार। **अजमौ** — अजवाइन।

आप औ म्हारा गाढ़ा मारू चाकरियां सिधावौ
पीळौ म्हारै कुण जी मोलावसी ओ म्हारा राज
थें ई म्हारी सुंदर गोरी हालरियौ ई जिणजौ, धेनड़ियौ ई जिणजौ
पीळौ म्हारा काकौसा मौलावै ओ राज

थांरा ओ काकौसा रौ नहीं ओ भरोसौ
पांच रौ मोलासी पच्चीस रौ बतासी
ओ जिवड़ौ म्हारौ नहीं पतीजै राज

थें ई ओ म्हारा गाढ़ा मारू चाकरियां सिधावौ
सूंठ म्हारै कुण जी मोलावसी ओ म्हारा राज
थें ई म्हारी सुन्दर गोरी हालरियौ ई जिणजौ, धेनड़ियौ ई जिणजौ
सूंठ म्हारा वीरौसा मोलावसी ओ म्हारा राज

थांरा ओ वीरौसा रौ नहीं ओ भरोसौ
पांच रौ मोलावै पचीसां रौ बतावै
ओ जिवड़ौ म्हारौ नहीं ओ पतीजै राज

आप तौ गाढ़ा मारू चाकरियां सिधावौ
लाडू म्हारै कुण जी संधावै ओ म्हारा राज
थें ई म्हारी मिरगानैणी हालरियौ ई जिणजौ, धेनड़ियौ ई जिणजौ
लाडू म्हारा बाभीजी संधावै ओ राज

थांरा रै बाभीसा रौ नहीं ओ भरोसौ
सांधतां गटकावै, पकड़ावतां गटकावै
लाडू म्हारै आप संधावौ म्हारा राज

थें—तुम। **म्हारा**—मेरे। **गाढ़ा** — घनिष्ठ। **मारू**—पति के लिए सम्बोधन। **सिधावौ** — रवाना हुए। **कुण**— कौन। **धण** — पत्नी। **बाभीसा** — पिता। **पतीजै** — विश्वास होना। **हालरियौ** — शिशु। **जिणजौ** — जन्म देना। **धेनड़ियौ** — शिशु। **पीळौ** — पीले रंग की ओढनी। **काकौसा** — चाचाजी। **बाभीजी** — भावज।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध , सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रन्थों का
राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

संस्कृत - प्राकृत

प्रकाशन का नाम	सम्पादक	मूल्य : रुपये
दशकण्ठवधम्	श्री गंगाधर द्विवेदी	४-००
श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्र	श्री गोपालनारायण बहुरा	३-७५
रत्नपरीक्षादि सप्त ग्रन्थ - संग्रह	पद्मश्री मुनि जिनविजय , पुरातत्त्वाचार्य	६-२५
स्वयम्भूछंद	प्रो. एच डी. वेलणकर	७-७५
वृत्तजातिसमुच्चय	,, ,, ,,	५-२५
कविदर्पण	,, ,, ,,	६-००
वृत्तमुक्तावली	स्व. पं. श्री मथुरानाथ भट्ट	३-७५
कर्णामृतप्रपा	पद्मश्री मुनि जिनविजय , पुरातत्त्वाचार्य	२-२५
पदार्थरत्नमंजूषा	पद्मश्री मुनि जिनविजय , पुरातत्त्वाचार्य प्रस्तावना — श्रीदलसुख मालवणिया	३-७५
त्रिपुराभारती लघुस्तव	पद्मश्री मुनि जिनविजय , पुरातत्त्वाचार्य	३-२५
प्राकृतानन्द	,, ,, ,, ,,	४-२५
इंद्रप्रस्थ प्रबन्ध	डॉ. दशरथ शर्मा	२-२५
एकाक्षर नाम कोश संग्रह	पन्यासप्रवर मुनि रमणीकविजय	६-००
वासवदत्ता कथा	जे. एम. शुक्ल	४-५०
वृत्तमौक्तिक	म. विनयसागर	१८-२५
चान्द्रव्याकरण	पं. बेचरदास दोशी	७-००

पुस्तक विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है

[राजस्थान सरकार द्वारा प्रसारित]

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित — स. । विज्ञा. । डी । ६८ । ८ । ६६–८३ बी.

डाक पंजियक संख्या जे. ५६४

अनोखा पेड़

वनस्पति, जड़ - पदार्थ तथा पशु - पक्षी आदि प्राकृतिक चरित्रों से संबंधित राजस्थान की लोक कथाएं, विजयदान देथा द्वारा लिखित ।

रूपायन संस्थान, बोरून्दा



लोक संस्कृति

अगस्त ८६



चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया

वर्ष ८ अंक २

लोक संस्कृति

संपादक
कोमल कोठारी , विजयदान देथा

कथा , गीत , गाथा , कहावत , मुहावरा ,
धर्म , देवी-देवता , त्यौहार, नाट्य , चित्र ,
मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

अनुक्रम

संपादकीय

राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में, विभिन्न लोगों द्वारा लोकगीतों के संग्रह का कार्य हो रहा है। ये संग्रह विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में स्वतंत्र रूप से अथवा कभी कभी लेखबद्ध रूप में उद्धृत होते हैं। लोकगीतों की यह प्रकाशन - शृंखला केवल शोध विद्यार्थी, संग्रह विद्वानों अथवा लोकवार्ता क्षेत्र में कार्य करने वालों तक ही सीमित नहीं है। सामान्य साहित्यिक रुचि-संपन्न व्यक्ति कभी कभी दो-चार गीतों के भावार्थमय एवं भावनामय लेखों के द्वारा गीतों पर कलम भी चला दिया करते हैं। अपने-आप में यह स्थिति एक ऐसी मानसिक अवस्था की द्योतक है जो लोकगीतों से अभिभूत और उसके सौन्दर्य को इस ग्राह्यता के आधार पर ग्रहण करने को तत्पर हैं।

किन्तु लोकगीतों का यह प्रकाशन अनेक मूलभूत प्रश्नों को हमारे सामने उपस्थित करता है। सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है : क्या राजस्थान के लोकगीतों को हम भाषायी दृष्टि से ठीक तरह लिपिबद्ध कर रहे हैं ? क्या हमने राजस्थानी भाषा के आन्तरिक अनुशासन अर्थात व्याकरणगत नियमों का कुछ अध्ययन कर लिया है ? अध्ययन की बात छोड़िये—क्या हमने भाषा के स्वरूप पर दस मिनट भी सोचने का उपक्रम किया है ? यदि यह उपक्रम नहीं किया है तो निस्संदेह राजस्थानी लोकगीतों को भाषायी रूप देना एक कठिन कार्य है। क्योंकि प्रत्येक भाषा के बोल-चाल के स्वरूप और उसके ऐतिहासिक वर्ण - विन्यास के बीच एक समन्वयपूर्ण व्यवस्था बिठानी पड़ती है। शब्द के वर्ण-विन्यास के साथ ही वाक्य-विन्यास अथवा पद्य-विन्याम का अनुमान होना भी आवश्यक है।

लेकिन राजस्थानी के सहृदय रसिक के लिए संभवतया भाषा विज्ञान एवं व्याकरण का यह शुष्क विषय रुचिकर न हो। तब क्या किया जाय ? क्या उसका कोई सहज निदान हमें प्राप्त है ?

हमारा खयाल है कि इस शुष्क विषय के अध्ययन की दुरूहता से बचकर भी, एक नियम का परिपालन किया जा सकता है। वह नियम है—**अपने ही द्वारा लिखे गये अथवा संग्रहीत किये गये गीत में आने वाले समान रूप के शब्दों को समान वर्ण - विन्यास प्रदान करने का प्रयत्न करना।** अत्यंत सामान्य शब्द प्रयोग और उसके वर्ण-विन्यास के विषय में ही लिखना उचित होगा। एक ही गीत की पक्तियों में पुनरावृत्त रूप मे 'नी' का प्रयोग देखिए !

१. पाणी रो ढोळणवाळौ नहीं अे माता राणकदे

२. सं'रयां में घूघरा नीं वाज्या अे माता रूपकदे

इसमें एक स्थल पर ' नहीं ' एवं ठीक उसी जगह ' नीं ' को लिखा गया है। लोकगीत के संग्राहक को केवल यही ध्यान रखना है कि वर्ण-विन्यास को एक ही रूप प्रदान करे। इसी प्रकार ' कहते हैं ' के लिए केवे , केवैं , कँवे , केहे आदि प्रयोग मिल जाते हैं। संग्राहक अपनी बुद्धि के अनुसार एक रूप को स्वीकार करले और फिर अपने संग्रहीत गीतों में उसका एक ही विन्यास कायम करले तो शीघ्र ही राजस्थानी भाषा का स्वरूप स्थिरीकरण की ओर अग्रसर होने लगेगा और गीत के लिपि-रूप में भावात्मक चेतना का युग प्रारंभ हो सकेगा। हम देखते हैं कि राजस्थान के विभिन्न सर्वनामों के प्रयोग में भी विकट स्वतंत्रता का उपयोग किया हुआ मिलता है। म्हारै , म्हानै का प्रयोग तो निसंकोच है किन्तु ' म्हैं ' के लिए ' मैं ' का प्रयोग कर लिया जाता है।

भाषा के लिपिबद्ध रूप पर विचार करते हुए हमें यह भी ध्यान रखना जरूरी होगा कि जो शब्द जैसा सुनाई देता है — उसका ऐतिहासिक रूप क्या है और क्या सुनाई देने वाला रूप हम सही रूप में सुन रहे है ? एक उदाहरण है—गढ़। अर्थात एक छोटा मोटा किला। यदि हम इसे ' गड़ ' लिखने लगे तो गलत हो जायेगा। क्योंकि ' गड़ ' का लिप्यात्मक रूप अन्य अर्थ की ओर भी लेजा सकता है।

आज की स्थिति में, हम राजस्थानी संग्राहकों को उस ओर जाने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये जहां राजस्थानी की विभिन्न बोलियों का प्रश्न खड़ा हो जाता है। उदाहरण स्वरूप मेवाड़ क्षेत्र में शब्द के प्रथम वर्ण से जिस ' इ ' का लोप और मारवाड़ क्षेत्र में ' इ ' का आगम हो जाता है। जिन शब्दों के ऐतिहासिक रूप में प्रथम वर्ण के साथ ' इ ' है, मेवाड़ में वहां से इ हट जाती है। जैसे मिल्यौ — मेवाड़ में हो जायेगा — मल्यौ। दिन का हो जायेगा दन। इस प्रकार मारवाड़ में जिन शब्दों के प्रथम वर्ण के साथ इ नहीं है, वहां भी इ पहुंच जायेगी। जैसे खरगोश को खिरगोस बोला भी जायेगा और यही रूप लिखने में भी आ रहा है। जहां तक लोकगीतों को लिपिबद्ध करने का प्रश्न है, वह बोली के लिखित रूप से भिन्न नहीं होना चाहिये किन्तु उस एक लिखित रूप में वर्ण-विन्यास का विभेद भी नहीं होना चाहिये।

यदि हम सभी सतर्कतापूर्वक लोकगीतों को सही सही लिखित रूप दे सकें तो गीतों को समझने, भाषा के सौन्दर्य को आत्मसात करने एवं उनके सामाजिक संदर्भ को सही रूप में पहिचानने में सुविधा रहेगी।

सोने चांदी का चबूतरा

एक था सियार। वह बड़ा शैतान था। मौके के अनुसार मन चाहता तब कोई न कोई अड़गा कर लेता। जंगल के जानवरों से बहुत छेड़ छाड़ करता। एक बार एक तालाब के किनारे उसने फिर एक तमाशा किया। तालाब के पानी से मिट्टी गीली करके उसने मिट्टी का एक बड़ा चबूतरा बनाया। कानों में गोबर के दो उपले लटकाए। गले में मिगनों की माला पहन ली और जोगी का रूप धारण करके वह उस चबूतरे पर पलथी लगा कर बैठ गया। जंगल के सारे जानवर उसी तालाब में पानी पीने आया करते थे। जोगी का वेष धारण किया हुआ वह सियार उन जानवरों को पानी पीने से रोकता। कहता — मुझे भगवान ने इस तालाब का रखवाला बना कर भेजा है। मैं भगवान का दूत हूं। पहले मेरी आरती करके फिर पानी पीओ। मेरे चरणों में शीष झुका कर यूं बोलो :

सोने चांदी का चबूतरा, कुंकुम केसर वाला है
कानों में गजमोती चमके गले में घुंघरु माला है
देवदूत सा बना हुआ जी यह योगेश्वर कौन है ?

चरणों में बंदगी करके इस प्रकार आरती उतारे बिना वह किसी को उस तालाब में पानी नहीं पीने देता।

हरिण, लोमड़ी, खरगोश आदि जानवर तो प्यासे मरते, डर कर आरती कर देते तो कोई बड़ी बात नहीं, पर बघनाहर और बब्बर शेर तक आरती करके पानी पीने लगे। एक दिन दूर के पहाड़ों से एक केसरी सिंह प्यासा मरता उस तालाब में पानी पीने आया। उसे इस काण्ड का पता नहीं था। उसने किनारे

पर खड़े होकर पानी पीने की इच्छा की कि उस चबूतरे पर बैठे हुए ही उस सियार ने एक हाथ ऊंचा करके कहा —- ऊं हूं ! मेरी आज्ञा के बिना, पानी में मुंह मत डालना । मैं इस ताल का रखवाला हूं । पहले इधर आवो । सिंह ने सोचा, यह क्या माया है ? वह डरता हुआ उस चबूतरे के पास जाकर खड़ा हो गया । सियार ने उसे आरती करने की सारी विधि समझाई । उसने समझा कि सचमुच यह कोई देवदूत है इसलिए डरते हुए उस सियार के चरणों में बन्दगी की और फिर उसकी इस तरह आरती उतारी :

सोने चांदी का चबूतरा , केसर कुंकुम वाला है
कानों में गजमोती चमके , गले घुंघरु माला है
देवदूत सा बना हुआ जो यह योगेश्वर कौन है ?

यह आरती करने के बाद वह सिंह पूंछ हिलाता तालाब पर पानी पीने गया । एक चन्दन गोह दूर से यह रचना देख रही थी कि एक सिंह सियार की आरती कर रहा है । सियार के अफंड उससे छिपे नहीं थे । उसने मन में सोचा कि इस कपटी सियार ने तो सब जानवरों पर अपनी धौंस जमा रखी है; इसमें भी वापिस कुछ न कुछ बिताई जानी चाहिए । सिंह के जाने के बाद वह गोह उस चबूतरे के पास से पानी पीने के लिए निकली । सियार ने तो उसे भी मना किया—ऊं हूं, मेरी इजाजत बिना पानी में मुंह मत डालना । मैं इस तालाब का रखवाला हूं । मेरी आरती बोलने के बाद पानी पी सकती है — पहले नहीं ।

गोह किटकिटाती हुई बोली—मेरा तो प्यास के मारे जीव निकल रहा है, तुम्हें आरती की पड़ी है । मेरा तो कण्ठ सूख रहा है, पहले पानी पीने दे , फिर तू कहेगा उतनी आरती कर दूंगी ।

सियार ने जाना , कोई बात नही । इस नाकुछ गोह की कौन परवाह करता है उसने पानी पीने की आज्ञा दे दी । गोह ने पेट भर पानी पिया , ठंडे निर्मल पानी में तीन चार डुबकियां लगाई, फिर सियार के पास आई । सियार मर्यादा के साथ कहने लगा— अब तुझे दो बार बन्दगी करनी पड़ेगी और दो बार आरती उतारनी पड़ेगी ।

गोह बोली — दो बार की भली कही , मैं तो सो बार आरती कर दूंगी , पर किनारे पर चढ़ते मेरा सांस भर गया है ; धूप से मेरा जी घबरा रहा है , उस फरांस के पेड़ के नीचे जा कर आप जैसा कहेंगे वैसी बन्दगी कर दूंगी ।

सियार ने सोचा , कोई बात नहीं , इस नाकुछ गोह की कौन परवाह करता है !

वह गोह उस फरांस की छाया में खड़ी रह कर जोर से बोलने लगी :

मिट्टी का तो घूरा है, गोबर लीद वाला है
कानों में दो उपले डाले, गले में मिगन माला है
यह सचमुच का स्यार है जो वेष बनाए बैठा है

पलथी मार कर बैठा हुआ योगीश्वर क्रोध से दांत किटकिटाता उस गोह की तरफ लपका। गोह फुरती से फरांस पर चढ़ गई। सियार नीचे बैठ कर उसके उतरने की राह देखता रहा। तब गोह बोली :

गोह चढ़ी है फरांस, अब उतरेगी छठवें मास।

तब सियार ने जवाब दिया दिया :

पलथी मारे गीदड़ बैठा, मेहा बरसे ऊठेगा
क्या खायेगी ऊपर बैठी, गोहों से कोई पूछेगा ?

तब गोह ने कहा :

चूल्हा मेरा रायरंगीला, छठवें महीने जलता है।

सियार ने वापिस जवाब दिया :

पाहुना तेरा मन का लोभी, वर्षा में उठ चलता है !

गोह ने मन में विचार किया कि यह कपटी सियार तो यहां से उठेगा नहीं। उसे एक तरकीब सूझी। फरांस पर चढ़ कर इधर उधर देखने लगी। एक तरफ नजर टिका कर बोली:

कौन आ रहे चारों साथ,
हाथ कुल्हाड़ी, कुत्ते सात !

कुत्तों का नाम सुनते ही सियार की हिम्मत ने जवाब दे दिया। वह थर थर कांपने लगा। कांपने से कानों के उपले नीचे गिर गए। सियार की की यह हालत देख कर उस गोह ने ऊपर ही से चिल्ला कर आवाज दी — ओ भई राहगीर, थोड़ा इधर आना, मेरे मेहमान को भोजन कराना !

सियार ने हाथ जोड़ कर कहा—बहन, आवाज मत दे, ले मैं जाता हूं।

और इतना कह कर वह तो वहां से भाग खड़ा हुआ। निश्चिंत होकर गोह फरांस से नीचे उतरी और अपने घर गई। पर वह केसरी सिंह वहां पास ही खड़ा था। उसने सियार को पहिचान लिया। बोला — योगेश्वर महाराज, जरा रुकना, आपकी थोड़ी आरती उतार लूं। जोर से दहाड़ कर सिंह उस

पर झपटा। सिह के सामने सियार कैसे बचता ? उसके तो वहीं पांव चिपक गये। सिह ने एक हत्थल मारा और एक ही वार से उस कपटी सियार को मार डाला। गले के मींगनों की माला चारों तरफ बिखर गई !

सियार की अक्ल और सिंह का बल

एक था सियार और एक थी उसकी घरवाळी। सियारनी जब गाभन हुई तो उसने सियार से कहा — बच्चे देने के लिए कोई बढ़िया घुरसाली तो बनाओ। सियार ने कहा — इसकी फिक्र तू क्यों करती है। जब भी मन करेगा, घुरसाली बना दूंगा। पर सियार आज कल पर टालता रहा, घुरसाली बनाई नहीं। सियारनी पूरे महीने हुई तो उसने जोर देकर कहा — आज कल, करते इतने दिन हो गए, आपने अब तक घुरसाली बनाई नहीं। भरपूर सर्दी का मौसम है। खुले मैदान में कैसे बच्चे दूं। आप तो थोड़ी बहुत भी परवाह नहीं करते। काम तो करने से पूरा होगा।

अब जाकर सियार को भी जल्दी लगी। उसने घूमते फिरते एक सिह की मांद का पता लगाया। वह मांद उसे बहुत पसन्द आई। सिह पानी पीने के लिए तालाब पर गया हुआ था। सियार ने तो सोचा, न विचारा; भागा हुआ अपनी घरवाली के पास गया। बोला — देख, देवताओं के रहने जैसी बढ़िया घुरसाली बनाई है। जल्दी रवाना होकर चल। मुहूर्त टलता है। सियारनी गर्भ से थी इसलिए दौड़ तो नहीं सकी पर जल्दी जल्दी चली। मांद के पास आकर

सियार ने कहा — घुरसाळी घुरसाळी सुनते सुनते मेरे तो कान पक गए। देख कैसी सुन्दर घुरसाळी बनाई है। अब तू निश्चित होकर इसमें रह।

सिंह की उस मांद के ऊपर एक बन्दर रखवाली किया करता था। वह इस बात का ध्यान रखता था कि कोई दूसरा सिंह उस पर कब्जा नहीं करले। सियार और सियारनी को अन्दर जाते देखा तो उसने रोका। बोला — सियार की मौत आती है तो वह गांव की तरफ भागता है। वाकई तेरी मौत तो नहीं आई है जो सिंह की मांद में आया है? दिनमान बुरे आ गए लगते हैं। पर सियार ने बन्दर के कहने की कोई परवाह नहीं की। बोला — ऐसे कई सिंह, कुत्तों की तरह मेरे सामने हाजरी में फिरते हैं। पागल, तू मुझे सिंह के बल का क्या डर दिखाता है! ऐसे सिंह तो मैं जेब में रखता हूं। फिर उसने अपनी घरवाली से कहा — तू तो अन्दर जाने की चिन्ता कर; बाकी मैं निपट लूंगा। सियारनी तो चुपचाप अपने पति के कहने से मांद में घुस गई। और पीछे मना करते करते सियार भी अन्दर चला गया।

सियारनी के चार बच्चे हुए। चांद के टुकड़े जैसे चार बच्चे। कोमल रेशम की तरह। पति पत्नी दोनों बेहद खुश हुए। पर सिंह के वापिस लौटने का डर भी कम नहीं था। सबसे पहले इसका उपाय करना जरूरी था। थे तो वे सियार की जात के ही — मन में तो जानते ही थे। पर अपनी हिम्मत के बल पर सिंह को छकाना चाहते थे। सियार को अपनी बुद्धि का भरोसा था। सिंह के पानी पीकर वापिस आने से पहले ही सियार ने सियारनी को सारी तरकीब बतादी कि सिंह को कैसे डराया जाय।

सिंह पानी पीकर वापिस अपनी मांद के पास आया तो सियार के इशारे पर सियारनी ने अपने बच्चों को रुलाया। सियार से पूछा—क्या बात है, बच्चे क्यों रो रहे हैं? सियारनी के पास भी घड़ा घड़ाया जवाब तैयार था। बोली: बच्चे सिंह का ताजा कलेजा मांगते हैं। कल के बासी चार पांच कलेजे तो पड़े हैं, पर उनमें तो ये मुंह भी नहीं देते। ताजे कलेजे के लिए हठ करते हैं। आप जाकर जल्दी से तीन चार सिंहों को मार कर उनके कलेजे तो ले आवो। बच्चों को रुलाने से कैसे काम चलेगा?

तब सियार ने कहा—इसका क्या फ्रिक किया? अभी जाकर सिंहों के कलेजे लाता हूं। तू थोड़ी देर और सब्र कर!

सिंह ने मांद के सामने खड़े होकर अन्दर से आते हुए इस वार्तालाप को सुना तो उसके पांव चिपक गए। पूंछ दबाकर वहां से भागा। पीछे मुड़कर

भी नहीं देखा। रखवाली करनेवाले वन्दर ने यह खेल देखा तो उसके मन में बड़ा अचरज हुआ कि देखो पट्ठे सियार ने साक्षात सिंह के पैर छुड़ा दिये। वह सिंह के पीछे दौड़ा। सिंह के पास जाकर निवेदन किया—वन के राजा, आप क्यों इस गीदड़ा भभकी से भाग आए! मैंने खुद अपनी आंखों से सियार सिर-यारनी को मांद में जाते देखा। मैंने उसे वहुत रोका, मना किया; पर वह माना नहीं। जवाब दिया कि ऐसे सिंह तो मैं जेब में रखता हूं। तू मुझे क्या सिंह का डर दिखाता है। पर मैं तो जानता था कि सियार खुद अपने आप पैरों चल कर मौत के मुंह में आया है। खुद शिकार अपने आप फंसता है तो रोकना क्यों? सियार, सियारनी और चार कोमल कोमल बच्चे हैं — अभी अभी आपकी मांद में पैदा हुए। पर आप तो ऐसे डरे कि सीधे भागते ही नजर आये। मुझे पूछना तो था। मैं रखवाली झख मारने के लिए करता हूं क्या? सिंह की जाति के होकर भी इस तरह पांव पीछे हटाते हो? फिर आपको मानेगा कौन?

सिंह की कंपकंपी अभी तक मिटी नहीं थी। डरता डरता बोला—भाई, तू मान चाहे मत मान, यह तो कोई सिंह के भी ऊपर की बला है, जो सिंह को भी जेब में रखता है। मेरी तो हिम्मत नहीं है। आज तो कोई पिछले जन्म के पुण्य काम आए। वन्दर ने वहुत समझाया तब कहीं सिंह को धीरज बंधा। ज्यों त्यों करके अपनी मांद के पास वापिस पहुंचा कि सियार अपने बच्चों को पुचकारते हुए जोर से बोला — थोड़ी देर और सब्र करलो। बन्दर को सिखा कर भेजा है, सिंह को फुसला कर लाने के लिए। अभी उसे चकमा देकर वह लाता ही होगा। देखो वह आया। मैं नहीं कहता था कि बन्दर मेरा कहना कभी नहीं टालेगा। अभी इसी वक्त उसका कलेजा निकाल कर लाता हूं। सिंह बेचारा मेरे आगे कहां जायगा!

सिंह ने यह बात सुनी तो फिर वहां से भाग खड़ा हुआ। आगे आगे सिंह और पीछे पीछे बन्दर! बन्दर ने कहा — रुको, रुको, सियार चालबाजी कर रहा है। आप भागो मत। पर सिंह को तो अपने जीव की पड़ी थी; वह क्यों कर रुकता! काफी दूर जाकर सांस लिया। उल्टा वन्दर को फटकारता हुआ कहने लगा — तुझे ऐसी रखवाली करने को रखा कि तू मुझे ही मरवाने का सरंजाम करता है? भरोसा करने का तो जमाना ही नहीं! तुझे मैंने कितना खर्च करके नौकर रखा। आज एक मजबूत मालिक के आते ही तूने मेरे साथ ही धोखा कर दिया? नीच, निर्लज्ज कहीं के। जा, मेरी आंखों के सामने से हट जा।

नहीं तो मैं तुझे अभी जान से मार दूंगा ।

बन्दर हाथ जोड़ कर बोला — आप जैसे मालिक के हाथों मारा जाऊं, इससे बढ़ कर मेरा और क्या सौभाग्य हो सकता है ! मुझे मेरे मरने की बिलकुल चिन्ता नहीं है । सारी उमर आपका नमक खाया है, अब कैसे आपके साथ छल कर सकता हूं । थोड़ा विचार तो करिये । जंगला का राजा जंगल छोड़ कर भाग जाय तो कितनी भद्दी बात है ! मुझसे तो यह देखा नहीं जाता । इससे तो अच्छा है कि आप मुझे अपने हाथों मार डालो तो मुझे शान्ति मिले !

सिंह के दिमाग में कुछ बात जंची । वह तो पशोपेश में पड़ गया । करे तो क्या करे । बन्दर की बात सुनकर काफी जोश आया, हिम्मत बढ़ी, परन्तु पैर आगे नहीं बढ़े । कंपकंपी बन्द नहीं हुई । बन्दर ने बहुत समझाया, बहुत हाथ पांव जोड़े तब जाकर बड़ी मुश्किल से उस पर भरोसा हुआ । लेकिन पैर आगे चलें तो । तब बन्दर जबरदस्ती अपनी पूंछ से सिंह की पूंछ बांध कर दूसरी बार मांद की तरफ ले आने में सफल हुआ ।

सियार पूरा सावधान था । वह क्या निकाल कर देना ! मांद में बैठा हुआ भी सारी बातों का ध्यान रखता था । बन्दर की पूंछ से बंधे हुए सिंह को आता हुआ देखा तो समझ गया कि सिंह के पैर तो कच्चे हैं । पूंछ बांध कर आया है ; इससे तो कुछ भी होनी जानी नहीं है । सियार की हिम्मत फिर बढ़ गई । बच्चों को आश्वासन देता हुआ अधिकार पूर्ण स्वर में कहने लगा : अब क्यों रोते हो वह आया सिंह ! इस बार बन्दर को ऐसा सिखा कर भेजा है कि वापिस भी नहीं भाग सके । पूंछ से मजबूत बंधवा कर मगवाया है । तुम एकाध पल चुपचाप रहो । अभी सिंह का कलेजा जगमगाते अंगारों पर सेंक कर खिलाता हूं । पहले भाग कर चला गया, वही बहुत है । मेरा प्रण है कि दौड़ते शिकार को पीछे भाग कर कभी नहीं मारता । पर इस बार पूंछ से बंधा हुआ भागकर कहां जायेगा । फिर अपनी घरवाली से बोला—तू अंगारे जला, मैं अभी आया । सिंह पूरा काबू में है, छूट तो सकता ही नहीं । इस बार तो बन्दर ने लाज रखली । उसे अपना प्रधान बना दूंगा तो कभी काम आयेगा ।

सियार की ये बातें सुनकर सिंह ने समझा कि आज तो मारे गए । बुरे फंसे । बन्दर ने तो कमाल छल किया । नमक हराम छल करके मुझे मरवाने को लाया है ! उसे तो पसीना छूट गया । कैसे ही हिम्मत करके वहां से भागा । पूंछ में मजबूत गांठ लगी हुई थी । सिंह के दौड़ते ही पूंछें तन गईं और गांठ ज्यादा मजबूत हो गई । बन्दर पीछे पीछे घिसटने लगा । सिंह किसकी परवाह

करता ! उसे तो अपने जीव की पड़ी थी । वह तो दौड़ता ही गया और गांठ घुलती ही गई । बन्दर की बोटी बोटी बिखर गई । परन्तु सिंह की पूंछ से एक पूंछ और जुड़ गई । गांठ दी हुई पूंछ फिर बंधी हुई ही रही । सिंह ने अपने भाग्य को खूब सराहा । आज तो बचे पर बचे ! जिन्दा रहा तो फिर मांद बना लूंगा । पर एकाएक जीवन खोने से कैसे काम चले ! जीवन एक बार जाने के बाद वापिस नहीं आता । सियार की अक्ल के सामने सिंह के बल को भागना पड़ा । उस सिंह ने तो फिर कभी उस मांद की तरफ रुख ही नहीं किया और सियार ने जबरदस्ती उस मांद पर कब्जा कर लिया । वहीं उसने अपने बच्चों को पाला - पोसा , बड़ा किया और निर्भय आनन्द करता रहा ।

सियार का न्याय

एक बार एक सिंह लोहे के पिंजरे में फंस गया । फंसने के बाद राम का नाम लो । बहुत ही गरजा, बहुत पैर पटके, बहुत कोशिशें कीं , बहुत तड़पा , पर पिंजरे से बाहर नहीं निकल सका । बेहद बलवान था , वन का राजा कहलाता था , पर पिंजरे से बाहर निकलने की तरकीब नहीं जानता था । दो दिनों से बिल्कुल भूखा प्यासा अन्दर तड़पता रहा ।

संयोग की बात कि एक ब्राह्मण उस पिंजरे के पास से निकला । वह कमाने के लिए परदेश जा रहा था । सिंह ने उस ब्राह्मण को हाथ जोड़े और खींसे निपोरते हुए कहा — पंडित जी पालागन ! ब्राह्मण ने उसे आशीर्वाद दिया । वह वहीं खड़ा रह गया । सिंह ने कहा — पंडित जी, दो दिनों से भूखा प्यासा हूं । यदि आप मुझे बाहर निकालने की कृपा करें तो मैं आपको ये हीरे

जड़े हुए दो सोने के कंगन दे दूंगा। यह कह कर सिंह ने ब्राह्मण को अपने हाथों में पहने हुए मोटे मोटे सोने के कंगन दिखाये। उन पर अमूल्य रत्न जड़े हुए थे। ब्राह्मण ने सोचा कि इतनी कमाई करने के लिए तो परदेश में न जाने कहां कहां भटकना पड़ेगा, न जाने कितने घरों के चक्कर देने पर भी इतनी कमाई होगी कि नहीं ! यह तो कल्पना से भी अधिक बड़ा खजाना हाथ लग गया। ब्राह्मण को लोभ हो आया। सोने का उजाला देखते ही उसकी आंखें चकाचौंध हो गईं। परन्तु सिंह के हाथ से कंगन ले लेना सहज नहीं था। बोला—बाहर तो निकाल दूं, पर भूखे मरता तू मुझे ही गटक जावे तो ये कंगन मेरे क्या भाव पड़ें। मैं तो मौत का दरवाजा नहीं खोलूंगा।

सिंह ने कहा—पण्डित जी, यह बात तो मन में भी मत लाना। आप मेरे प्राण बचाओ ओर मैं आपको खा जाऊं ! मैं ऐसा अकृतज्ञ नहीं हूं, यह आप निश्चय जान लेना। सिंह ने उसे पूरे वचन दिये तो ब्राह्मण ने झट अंकुश निकाल कर दरवाजे की अर्गला खोल दी। पर बाहर आते ही सिंह को तो भूख के मारे अपने वचनों का कोई ध्यान रहा नहीं। बोला— पंडित जी, आप मरते बाप किसे याद आता है ! पेट पापी है, मैं तो आपको खाऊंगा। मरने से पहले अपने इष्ट देव का ध्यान कर लीजिए। ब्राह्मण ने सिंह के बहुत हाथ पैर जोड़े, उसके वचनों की याद दिलाई पर सिंह को तो भूख के आगे कुछ समझ में नहीं आया। ब्राह्मण ने सोचा कि अब मरना तो दिखता ही है ; लोभ का यही फल होता है। पर बात को यदि उलझन में डाल दूं तो शायद कुछ उपाय बन आवे। बोला — मेरा अंत समय तो पास आ गया है, इसमें किसी बात की मीन मेख नहीं है। पर एक बात मेरी भी मान लें, मैं मर गया तो मन में रह जायगी। इस बात का किसी से न्याय करालें तो मुझे सन्तोष हो जावे।

सिंह कुछ धीमा पड़ा। बोला — न्याय तो मैं करा लूंगा, पर कराऊंगा जंगल के जानवर से ही। आदमी का मुझे भरोसा नहीं। आदमी ने ही तो मुझे पिंजरे में बन्द किया। और फिर आदमी आदमी का पक्ष लेता मेरी कब सुनेगा ! सिंह जानता था कि जंगल के जानवर तो डरते हुए मेरा ही पक्ष लेंगे। न्याय भी हो जायगा और मैं ब्राह्मण को भी खा लूंगा।

तो भगवान भले दिन दें, दोनों जने न्याय कराने के लिए रवाना हुए। जाते जाते मार्ग में उनको एक सियार सामने मिला। अभिवादन होने के बाद ब्राह्मण ने कहा — सियार भाई, आज तो एक काम आ पड़ा है। हम दोनों में एक बात पर विवाद हो गया है, तुझे उसका न्याय करना पड़ेगा।

सियार कान पकड़ कर बोला — मेरी क्या औकात कि मैं अपने राजा का न्याय निपटाऊं ! राजा करे सो न्याय । सिंह ने मुस्करा कर कहा — बात तो तू सच कहता है, करूं जिसका न्याय मैं करूं, मेरा न्याय कौन कर सकता है ! यदि राजा का भी न्याय होने लगे तो फिर बात ही क्या हुई ! पर यह विवाद ऐसा ही है, तू डर मत । मैं तुझे आज्ञा देता हूं, तू निर्भय होकर न्याय निपटा । हम दोनों राजी खुशी तुझे अपना पंच बनाते हैं ।

ब्राह्मण ने सारी बात तरतीब से बताई । सियार जान गया कि ब्राह्मण बिल्कुल सच्चा है और सिंह झूठा, अपने वचनों से फिर गया है । मैं पंच होकर अन्याय कैसे करूं ? पर सिंह का स्पष्ट न्याय कौन करे ? ब्राह्मण से पहले मुझे खा जायेगा । फैसला करदूं पर मानना तो सिंह के हाथ में है । यह न्याय तो महंगा पड़ेगा । अन्याय करना नहीं चाहता और न्याय होता नहीं है । करूं तो क्या करूं ! अंत में उसने एक तरकीब निकाली । बोला—पंडितजी, मुझे आपकी बात पर विश्वास नहीं होता । तुम मनुष्यों की जाति ही निकम्मी होती है । मुझे तो अब तक यह समझ में नहीं आया कि इतने बलवान, वन के राजा कैसे एक पिंजरे में फंसे और कैसे तुमने उन्हें बाहर निकाला ? मैं तो अपनी आंखों घटना का स्थान देखना चाहता हूं । वहां चलने पर मुझे जो सूझेगी वैसा कहूंगा ।

सिंह राजी खुशी वापिस रवाना हुआ । सोचा कि न्याय तो मेरे ही पक्ष में होगा । पिंजरे के पास पहुंच कर सियार ने उसे चारों ओर घूम कर देखा । अच्छी तरह पिंजरे को भी देखा - परखा । फिर बोला— ऊं हूं, सिंह इस पिंजरे में कैसे आ सकता है ? यह बात तो उठी वहीं से झूठी ! सिंह सियार की बात सुनकर धीमे धीमे मुस्कराने लगा । सियार ने फिर कहा— मैं तो कानों से सुनी बात पर विश्वास नहीं करता । साक्षात अपनी आंखों से देखना चाहता हूं । फिर वह सिंह के सामने देखकर बोला — आप पिंजरे में कैसे घुसे हुए थे और ब्राह्मण ने कैसे दरवाजा खोला, यह मुझे प्रत्यक्ष दिखा कर बताइये ।

सिंह के पास इतनी देर कहां । वह तो उसी समय पिंजरे मे घुस गया । सियार ने झट बाहर से अर्गला मजबूत बन्द करके कहा—या तो न्याय झेलना नहीं और यदि झेल लिया तो सदा खरी बात कहना । यह तुम्हारा न्याय तो अपने आप ही निपट गया ।

सिंह ने पूछा — कैसे ? तब सियार ने कहा — अभी तक आपकी समझ में नहीं आई ? राजा को देर ही से समझ में आती है । आप अपने लच्छनों से ही वापिस पिंजरे में फंस गए । अब पंडितजी दरवाजा खोल दें तो उनको खा

जाना । नहीं तो इस पिंजरे में बैठे राम का भजन करो । प्राण बचाने वाले को भी आप मारने चाहते हो , इसका न्याय तो यही है । फिर ब्राह्मण की तरफ देख कर बोला — पंडितजी , आपको सोने के लोभ के आगे अपने जीव का भी ध्यान नहीं रहा , उसका मजा तो आपने चख ही लिया । बच्चों के भाग्य से बच गए उसका हर्ष मनाओ । फिर कभी ऐसा लोभ न करना । मैं बार बार न्याय करने के लिए कहां मिलूंगा !

उस सियार ने न्याय निपटाने से पहले वे कंगन अपने पास ले लिए थे । उन्हें ब्राह्मण के सामने करते हुए बोला — ये लो कंगन ! और अपना रास्ता नापो । इन कंगनों से सिंह फिर किसी को धोखा नहीं दे सके इसलिए आप ही ले जाओ । फिर उसने सिंह से कहा — वचन देकर तोड़ना राजा का काम नहीं है । अब जैसा किया वैसा भुगतो ।

सिंह ने बहुत मिन्नतें कीं पर न सियार ने पिंजरे का दरवाजा खोला और न ब्राह्मण ने । उसने हाथ जोड़े , लोभ दिया , धमकी दी, पर अब कौन विश्वास करता ! सियार और ब्राह्मण दोनों ही अपने अपने रास्ते गये । सिंह वहीं पिंजरे में तड़फता रहा । भूख प्यास से पंजर हो कर अन्त में पिंजरे में ही मर गया ।

सियार की बुद्धि का उजाला

किसी एक वन के भाग में एक सियार रहता था । वह बहुत होशियार और बेहद चतुर था । मौका आने पर उसकी बुद्धि बहुत चलती थी । एक बार उसे जंगल में एक विशाल और प्रचण्ड हाथी मरा हुआ मिला । उस सियार ने उस हाथी के चारों ओर बहुत से चक्कर लगाए परन्तु उसकी मोटी और कठोर

चमड़ी को चीरने की उसमें कोई युक्ति नहीं बैठी। चमड़ी चीरे बिना हाथी खाया कैसे जाय? वह इसी पशोपेश में था की एक सिंह घूमता हुआ उधर आ पहुंचा। सियार ने देखा कि यह तो मेरे से अधिक बलवान है। मेरी और सिंह की क्या बराबरी? अपने से ज्यादा शक्तिवान से हाथ जोड़ कर काम निकालना चाहिए। सिंह के पास पहुंचते ही उसने उसके सामने जमीन तक सिर नवाया, दंडवत की, और फिर हाथ जोड़ कर निवेदन किया — मैं आपका पीढ़ियों से नौकर हूं। आपके लिए इस मरे हुए हाथी की रखवाली करता हूं। अब कृपा कर आप इसका भोजन करें तो मैं निश्चिन्त होऊ। आपकी चीज आप संभाल लें।

सियार की नम्रता देख कर सिंह ने कहा — मैं तो मरी हुई मिट्टी नहीं खाता। दूसरों के किये हुए शिकार और अपने आप मरे हुए जीव में मैं मुंह नहीं डालता — यह मेरा नियम है। जा, तुझे यह पूरा हाथी बक्शीश किया। तू सर्दियों भर इसे खा।

यह कह कर सिंह तो वहां से रवाना हो गया। सियार ने मन में जाना, चलो पिण्ड छूटा; कि इतने में एक बघेरा वहां आ धमका। सियार ने मन में कहा — भूत मरा तो पलीत जग गया। सिंह के जाते ही यह दुष्ट कहां से आ गया? यह तो बड़ा खूंखार लड़ाका है। आसानी से मानेगा नहीं। इस पर तो भेद से काबू करना पड़ेगा। पुरखे कहा करते थे कि शूरवीर को पराजित करना तो भेद नीति से।

बघेरा पास आया तो वह तड़क कर बोला—मामाजी, आप बिना बिचारे मौत के मुंह में कैसे आये? इस हाथी को तो एक खूंखार सिंह ने पछाड़ा है। वह मुझे रखवाली करने को खड़ा करके नदी पर स्नान-ध्यान करने गया है। जाते जाते मुझे खास हिदायत कर गया है कि कोई बघेरा आवे तो मुझे चुपचाप समाचार देना। एक बार मेरा एक शिकार बघेरे ने जूठा कर दिया, उस दिन से मुझे बघेरों पर बेहद गुस्सा आता है। देखे नहीं छोड़ता। इस जंगल से बघेरों का नामोनिशान मिटा कर रहूंगा। देख, ऐसा नहीं हो कि कहीं तू गफलत कर जावे।

यह बात सुनते ही बघेरा तो एक दम डर गया। कांपता हुआ बोला: मेरे प्यारे भानजे, कैसे ही मेरे प्राण बचा। आज तो बैठे ठाले बुरे फंसे। मुझे जाने दे। मेरे जाने के बाद सिंह से मेरी चर्चा मत करना। तुझे इतनी ही प्रार्थना है।

यह कह कर बघेरा तो वहां से अपनी जान बचा कर चम्पत हो गया।

सियार ने मन में सोचा कि बला टली ; कि इतने में एक चीता आया । सियार सोचने लगा कि यह तो बड़े नीच स्वभाव का है । ताकतवर होते हुए भी निकृष्ट है । इसको कुछ ले दे कर खुश करूं तो ही ठीक है । इसके दांत और नाखून तीखे और मजबूत हैं । इसके द्वारा हाथी की कठोर खाल चिरवाने की युक्ति बैठाऊं । यह बात सोचकर उस सियार ने चीते से कहा— मेरे भानजे , बहुत दिनों बाद दिखाई दिया । आज तू मुझे बहुत भूखा लगता है ! क्या बात हुई ? मुंह उतरा हुआ कैसे ? मुझे तो लगता है तू सवेरे से अनखाया है ।

चीता धीरे से बोला — हां मामाजी , बात तो यही है । कल से एक बोटी भी दांतों के नहीं लगी है । भूखे मरते आंतें दुख रही हैं । आप कुछ नाश्ता-पानी करवाते हो तो कहिए , मेरे तो प्राण निकल रहे हैं ।

तब सियार मीठी बोली में कहने लगा — तेरा सत्कार नहीं करूं तो फिर किसका करूंगा तू तो मेरा प्यारा मेहमान है । इस हाथी का शिकार एक शेर ने किया है । वह मुझे इसकी रखवाली के लिए तैनात करके नदी में स्नान करने के लिए गया है । गये बहुत देर हो गई तो भी लौटने में अभी देर है । जब तक वह आवे , तू पेट भर कर नाश्ता करले । मैं सिंह के आने का ध्यान रखता हूं । आते ही तुझे इशारा कर दूंगा । फिर तू रुकना मत भाग जाना । वर्ना बेकार मारा जायगा । साथ में मुझे भी मरायेगा । यह सिंह जूठे शिकार में मुंह नहीं डालता और जूठा करने वाले को तीन भुवन में भी नहीं छोड़ता ।

सिंह के डर से चीते का मन डगमगाया । पर सियार के बहुत समझाने पर वह हाथी की कठोर खाल को चीर कर अपने योग्य मांस खाने को तैयार हो गया । बोला — मामाजी , आपकी मनुहार कैसे टाल सकता हूं ? परन्तु सिंह को दूर से देखते ही मुझे इशारा कर देना । कहीं ऐसा नहीं हो कि यह मेहमानदारी मुझे महंगी पड़ जाए । तब सियार ने कहा — अरे भानजे , कुछ तो विश्वास रख । मैं तेरा हित चिन्तक हूं ।

चीते ने डरते डरते हाथी को चीरना शुरू किया । जब सियार को इस बात का पूरा भरोसा हो गया कि उसने हाथी को अपने तीखे दांतों से फाड़ दिया है तो वह मन में बहुत खुश हुआ । वह तो इतनी ही राह देख रहा था । अपना काम बनने के बाद उसने चीते को मांस की एक बोटी भी नहीं खाने दी । दांतों के पूरी तरह खून लगा भी नहीं था कि वह उसी वक्त हड़बड़ाता हुआ आया और बोला—भानजे, आया, आया ! जान प्यारी हो तो भाग । सिंह लपका आ रहा है । " चीते ने तो पूरी बात सुनी ही नहीं । आया , आया , आया की

भनक कानों में पड़ते ही वह तो वहां से जान बचाकर भागा ।

अब तो सियार बड़े मजे से हाथी का मांस खाने लगा कि एक दूसरा सियार गुस्से से गुर्राता वहां आया । एक मुसीबत टली दूसरी तैयार ! पर वह अपनी जाति वाले को देख कर डरा नहीं । अपनी बराबरी का जान कर उसने मन में सोचा कि इससे तो प्रत्यक्ष युद्ध करके जीत का डंका बजाना चाहिए । वह उस नये सियार के सामने झपट कर बोला — मूर्ख , यहां क्या लेने आया है ? भला , तेरा यहां क्या पता लगेगा ! मैंने तो कई महारथियों के छक्के छुड़ा दिये हैं । तू बिना मौत मरने को क्यों आया है ?

यह बात कह कर वह सामने खड़े सियार पर झपटा । अपने तीखे दांतों से उसे चीर डाला । चारों दिशाओं में उसकी बोटी बोटी बिखेर दी । फिर उस विकराल हाथी को सर्दी भर निश्चित होकर धीरे धीरे खाता रहा । उस अत्यंत चतुर सियार ने शक्तिशाली शत्रु को हाथ जोड़ कर , शूरवीर शत्रु को भेद से , हीन बैरी को कुछ देकर और अपनी बराबरी वाले को युद्ध करके , अपना काम बना लिया ।

व्रती सियार

एक था हरिन और एक था कौवा । दोनों ही पक्के दोस्त थे । साथ खेलते , साथ खाते - पीते और साथ ही घूमते - फिरते । दोनों एक दूसरे को अपने जीवन से भी अधिक समझते । एक दूसरे बिना उनका मन नहीं लगता ।

एक बार एक सियार ने हरिन के चमकते पुट्ठों को देखा तो उसके मुंह में पानी भर आया । वह कैसे ही छल-बल से हरिन का मांस खाना चाहता था ।

पर कौए की होशियारी के सामने उसकी दाल नहीं गलती थी। उस सियार ने उन दोनों की दोस्ती में फूट डालने की कई कोशिशें कीं। पर उसकी कोई तरकीब पार नहीं पड़ी। अन्त में उसने छिप छिप कर हरिन से दोस्ती गांठली। रात दिन उसके साथ रहने लगा। बेचारे भोले भाले हरिन को मीठी बातों में भरमाने लगा।

कौवे ने हरिन को बहुत समझाया कि इस छली अनजान सियार का विश्वास मत कर। तेरे साथ धोखा करेगा। पर सियार ने तो हरिन पर ऐसा जादू किया कि उसने कौए की बात पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। सियार तो पहले से ही जानता था कि कौवा अपनी कोशिश बनते तो हरिन से दोस्ती नहीं करने देगा। उसने हरिन को पूरी पट्टी पढ़ा दी और हरिन था बिल्कुल भोला! वह सारे सफेद सफेद को दूध ही समझता था। अपने जैसा ही दूसरों को जानता था। सियार के बहकाने में आया हुआ उसने कौवे को जवाब दिया: कौवे भाई, तुझे तो अपने सिवाय दूसरे की दोस्ती सुहाती नहीं है। पहले तो सभी अनजान होते हैं। कौन किसे जानता है! व्यवहार से ही भाईचारा बढ़ता है। कौवा अच्छी तरह समझ गया कि हरिन सियार के फन्दे में आ गया है। उसने फिर हरिन को तो समझाना बन्द कर दिया पर खुद पूरा सावधान रहने लगा। हरिन का पूरा खयाल रखता।

कौवा, हरिन का दोस्त होते हुए भी पंछी था और सियार, हरिन के जैसा ही चौपाया। दोनों धरती के जीव! इसलिए दोनों में बहुत घुटने लगी। हरिन अब कौवे से ज्यादा सियार के साथ समय बिताने लगा।

सियार ने हरिन को जौ के एक खेत में ले जाना शुरू किया। सियार मन में जानता था कि रोज के नुकसान से परेशान होकर खेत का मालिक जरूर हरिन को जाल में फंसायेगा। गुस्से में आकर उसे मार डालेगा—फिर अपनी मन चाही हो जायेगी। हरियाली ही जानवरों को जिलाती है और हरियाली ही जानवरों को मरवाती है। अंत में रोज का हिला हुआ हरिन एक दिन जाल में फंस ही गया। छूटने की बहुत कोशिशें कीं पर उल्टा ज्यादा ज्यादा उलझता गया। अब करे तो क्या? सियार तो इसी चक्कर में था कि हरिन फंसा कि नहीं। थोड़ी ही देर में वहां आया ही। हरिन ने सोचा कि मेरा अजीज दोस्त सियार आ गया है तो अब चिंता किस बात की? यह तो मुझे तुरन्त छुड़ा देगा। उधर सियार ने जब हरिन को फंदे में फंसा हुआ देखा तो मन में बहुत खुश हुआ कि चलो मन चाही हो गई। बहुत दिनों बाद फंसा है। कब खेत का मालिक आवे

और कब उसे मारे ? कई दिनों तक नाश्ता चलेगा ।

हरिन ने सियार से कहा — कैसा संयोग है कि इधर मेरा फंसना हुआ और उधर मेरे दोस्त का आना हुआ ! अब जल्दी अपने तीखे दांतों से मेरा जाल काट । खेत का मालिक आता ही होगा ।

सियार तो महाधूर्त था । उसने दूर से ही पहचान लिया कि जाल चमड़े का बना हुआ है । उसने उसी समय मन में एक तरकीब सोचली पर बताई नहीं । तुरन्त जाल के पास आ कर गर्व से कहने लगा — भाई, तेरे लिए जाल नहीं काटूंगा तो फिर किसके लिए काटूंगा ! उसने जानते बूझते जाल को काटने के लिए मुंह खोला ही था कि बोला — अरे दोस्त, गजब हो गया ! यह जाल तो चमड़े का है ! मैं इसमें दांत नहीं लगा सकता । मेरे आज संक्रान्ति का व्रत है । यह व्रत तो मैं मरने पर भी नहीं तोड़ सकता । कल जरूर काट दूंगा, तू चिन्ता मत कर ।

सियार की बात सुनते ही हरिन का माथा ठनक गया यह तो इसी चंडाल की चाल है । पर अब क्या किया जा सकता है ? भरोसा नहीं होते हुए भी उसने कहा — मित्र के प्राण बचाने के लिए संक्रान्ति का व्रत तोड़ने पर भी कोई पाप नहीं लगेगा । तू तो कल की बात करता है, खेत का मालिक तो अभी आया रहेगा । आते ही मुझे मार डालेगा । मैं तो काल के जाल में फंसा हुआ हूं और तू मेरा अजीज दोस्त होकर भी कल पर बात टालता है ? मेरे लिए व्रत तोड़ और मुझे फंदे से बचा । पर सियार तो उसका मांस खाना चाहता था । वह क्यों जाल काटता !

अन्त में हरिन ने सोचा कि अब मर तो जायेंगे ही । सियार को खरी-खोटी सुनाता हुआ कहने लगा — दुष्ट, क्यों बहाने बनाता है ? तेरी तो आज मन चाही हो गई है ! तुझे तो मेरा मांस खाने की इच्छा है, व्रत का ढोंग क्यों करता है ? मुझे भी मेरे किये का ठीक फल मिला । कौवे की बात नहीं मानी उसका हाथोंहाथ फल मिल गया ।

सियार फीका पड़ता हुआ बोला—तू भरोसा नहीं करता है तो मत कर, पर मैं झूठ नहीं बोलता । संक्रान्ति का व्रत तोड़ दूं तो मुझे नरक में भी जगह नहीं मिले । मैं तो अब माला फेरने जाता हूं । कल सवेरे आकर तेरा जाल काट दूंगा । यह कह कर वह तो वहां से रवाना हो गया और पास ही की झाड़ियों में छिप कर हरिन के मरने की राह देखने लगा ।

कौवे ने अपने निवास पर जब हरिन के आने की वेला टलती देखी तो वह

उसकी खोज में वहां से उड़ा। संयोग की बात कि उड़ता उड़ता वह उसी जौ के खेत में आया। हरिन को जाल में फंसा हुआ देखा तो बोला—मैं अभी सियार को बुलाकर लाता हूं, मुझसे यह जाल काटा नहीं जायगा। तू निश्चिन्त रह, मैं अभी वापिस आता हूं। तब हरिन ने शुरू से अन्त तक कौवे को सारी बात बताई। कहा — तू कोई दूसरा उपाय कर। सियार ने तो किया सो किया। एक बार छूट जाऊं तो उससे बदला लूं।

कौवे ने कहा — मैंने तुझे पहले ही सावधान किया था, पर तुझे कुमति उपजी हुई थी। खैर, अब पहले तेरे छूटने की युक्ति करता हूं, फिर आराम से बातें करेंगे। कौवा बड़ा आशुबुद्धि होता है। उसने उसी वक्त उपाय बता दिया। बोला — खेत का मालिक आये, तब तू मरे हुए के समान पड़ जाना। वह तुझे मरा हुआ समझ कर बहुत खुश होगा। तुझे गालियां निकालता, बड़-बड़ करता, वह अपना जाल समेट कर जब काफी दूर चला जायेगा तो मैं कांव कांव करूंगा। तू मेरी आवाज सुनते ही खड़ा होकर भाग जाना। सावधानी रखना। अब तो बचने पर ही जीवन है।

खेत के किनारे किनारे मालिक को आता देखते ही कौवे ने हरिन को इशारा कर दिया। हरिन तो झट मुर्दे की तरह सीधा पड़ गया। सांस चढ़ा कर मरे हुए के समान हो गया। खेत का मालिक जाल में हरिन फंसा हुआ देखकर दूर से ही मुस्कराया। मन में कहने लगा — बहुत दिन हुए मेरा नुक्सान करते हुए! आज पंजे में फंसा है! वह अपने कंधे पर रखी हुई कुल्हाड़ी को तौलने लगा! जल्दी जल्दी चल कर हरिन के पास पहुंचा। देखा कि हरिन तो पहले से ही दहशत के मारे मर गया है। चलो, ठीक हुआ; मैं मारने के पाप से बच गया। तो भी उसने हरिन को गालियां निकालीं। काफी देर बड़बड़ाता रहा। बड़बड़ करता जाता और अपना जाल समेटता जाता। हरिन तो हिला ही नहीं। जब खेत का मालिक जाल समेट कर पचासेक कदम दूर चला गया तो कौवे ने कांव कांव मचाई। और कौवे की बोली के साथ ही हरिन तो उछल कर चौकड़ी भरने लगा। खेत के मालिक ने इस हड़बड़ में पीछे मुड़ कर देखा कि सीधे सादे हरिन ने तो कमाल का छल किया। बिना सोचे-समझे, जब हरिन पास की झाड़ी की ओट में उछला तो उसने जोर से उसके पीछे कुल्हाड़ी फेंक दी। हरिन तो बिल्कुल टल गया परन्तु उसी झाड़ी के पीछे जो सियार छिपा हुआ था उसकी खोपड़ी में कुल्हाड़ी की सीधी धार जा कर लगी। सियार झिझक कर एकदम खड़ा हुआ। चकरी खा कर पीछे मुड़ा।

आंखों के आगे फैलते अंधेरे में उसने देखा, हरिन तो फुदकता जा रहा है। उसने दौड़ने का मन किया परन्तु पग उठते नहीं थे। धग धग निकलते खून से उसका मुंह पुत गया। उसने जीभ निकाल कर अपना खून चखा। दो एक बार लप-लपाया होगा कि चक्कर खाकर नीचे गिर गया। मरते समय चार पांच बार शरीर ऐंठा और प्राण निकल गए!

संकराइत का व्रत किया और नहीं काट दी नाड़ी।
दगा दोस्त के साथ किया तो सिर पर चली कुल्हानी॥

रंगा सियार

एक सियार था। बहुत चंचल और शैतान! एक बार उसे ज्यादा भूख लगी तो वह गांव की बस्ती में खाना ढूंढ़ने आ गया। पर बस्ती में आते ही चारों ओर से कुत्ते उसके पीछे पड़ गए। वह तो एकदम घबरा गया। जिधर राह सूझी उधर ही अपना जीव बचाने के लिए भाग खड़ा हुआ। कुत्तों ने उसे जगह जगह काट लिया था। भागते भागते वह एक रंगरेज के घर में घुस गया, पर कुत्ते वहां भी उसी वक्त उसके पीछे आ पहुंचे। बचने का और कोई उपाय नहीं देख कर, वह रंग करने की कड़ाही में कूद गया। उसके सारे शरीर में रंगने का ऐसा पक्का रंग लग गया जो कभी हल्का नहीं हो सके। बहुत देर तक कड़ाही में रहने से रंग तो रोम रोम में फैल गया। सियार रात को चुपचाप

कड़ाही से बाहर निकला और डरता डरता जंगल में आ गया।

सूरज के उगने पर जब उसने जगह जगह से नोचे हुए अपने शरीर को देखा तो क्या देखता है कि उसका सारा शरीर आसमानी रंग का हो गया है। वह मन में बहुत खुश हुआ। कुत्तों के द्वारा काटे गए घाव उस आसमानी रंग में ऐसे दिखाई देने लगे मानो फूल बनाए गए हों। सियार शैतान तो था ही। वह इस अनसोचे रंग से फायदा उठाने की तरकीब सोचने लगा। सोचते सोचते आखिर उसे एक तरकीब सूझी। वह गर्व से पूंछ ऊंची करके मस्ती में जंगल के जानवरों के पास गया। सूरज के उजाले में उसका आसमानी रंग चमकने लगा तो ऐसा कि नजर नहीं ठहरती।

सिंह, हाथी, गेंडा, बाघ, चीता और लोमड़ी आदि जानवरों ने जब इस सियार को देखा तो खूब डरे। यह अनोखा जीव कहां से प्रकट हुआ! ऐसा जानवर तो न कभी देखा न सुना। यह तो बहुत विकराल है। अनसोची बला प्रकट हो गई।

सारे जानवरों को इस प्रकार डरते देख वह सियार तो मन में और मजबूत हो गया। रुआब से उनसे कहने लगा—इस जंगल में सिंह का अन्याय बहुत बढ़ गया है। सारे जानवरों की स्वर्ग में प्रार्थना पहुंची तो विधाता ने मुझे यहां शांति रखने के लिए भेजा है। मैं स्वर्ग का देवदूत हूं। विधाता ने मुझे तुम्हारा राजा बनाया है। मैं आज से इस जंगल का राजा हूं। तुम सब मेरी प्रजा हो। सिंह तक मेरी हाजरी में रहेगा। जो विरोध करेगा उसे उसी वक्त चीर डालने का हुक्म है। सिंह का अन्याय मिटने के बाद मैं फिर स्वर्ग में रहने चला जाऊंगा।

सियार की यह बात सुन कर सिंह के तो छक्के छूट गए। जमीन तक दण्डवत करके नये राजा की नौकरी मंजूर करली। सिंह के समर्पण करने के बाद दूसरे जानवरों की तो क्या बिसात? उस नीले महाराणा का डंका जमा पर जमा। उस नीले महाराणा ने एक सिंह को अपना दीवान बनाया। हाथी को कोठारी, बघेरे को मुनीम और गेंडे को अपना विशेष रसोईदार नियुक्त किया। सारे जानवर आठों पहर उसकी बंदगी करने लगे। सिंह तो उसके सामने बिल्ली बना हुआ हरदम पूंछ हिलाता रहता। कोई जानवर भूल-चूक से कोई गलती कर देता तो उसे दंड मिले बिना नहीं रहता। एक बार उस नीले महाराणा के सामने सिंह ने मुंह फाड़ कर जम्हाई खाली तो उसे धूप में दो घड़ी मुरगा बनना पड़ा। एक बार हाथी ने उसकी पूंछ पर हल्का सा पांव धर दिया तो उसकी खूब

पिटाई हुई। उसकी सूंड के बिच्छू चिपटा दिया गया। नीले महाराणा के सामने तो सारे जानवरों का जीव सांसत में रहता था।

उस रंगे सियार ने अपनी जातवाले सियारों को कभी मुह नहीं लगाया नीले महाराणा के दरबार में आने की उन्हें मनाही थी। उसने जंगल में चीते से यह डोंडी पिटवा दी कि यदि उसने सियार की बोली सुनली तो नीले महाराणा उन्हें जलती भट्टी में डाल देंगे। सियारों ने तो इस फरमान के बाद बिल्कुल बोलना ही बन्द कर दिया!

नीले महाराणा चांदनी रातों में सिंहनियों का नाच देखते और मौज मनाते। आनन्द से उनके दिन कटने लगे। छोटे बड़े सभी जानवर उनकी हाजरी में एक पग पर खड़े रहते।

यों करते करते वर्षा ऋतु आई। वर्षा की गर्मी के जोर से वन के सियार बोलना चाहते थे, परन्तु नीले महाराणा के फरमान के सामने उनके कलेजे धड़कते। बहुत मजबूत रहे पर एक दिन उनकी बोली खुल ही गई। वन के सारे सियार इकट्ठे होकर हुक्की हुक्की करके बोलने लगे। कई दिनों की रोक थी—ऐसे बोले कि आसमान को सिर पर उठा लिया। नीले महाराणा ने अपने जाति भाइयों को इस तरह जोर से बोलते सुना तो उनसे रहा नहीं गया। नीले रंग के प्रभाव से उनका रंग तो फिर भी बदल गया था पर उनका स्वभाव कैसे बदलता! बहुत दिनों की इच्छा दबी हुई थी। उनका जीव कसमसाने लगा। उसने तो भली सोची न कोई बुरी, ऊंचा मुंह करके हुक्की हुक्की करने लगा।

सारे जानवर देवदूत की यह अनसोची बोली सुन कर तुरन्त समझ गए कि यह तो सियार है। कमाल अन्धे बने। अब उनकी आंखों के सामने उजाला हुआ। अपने अपने तईं लगे सो नीले महाराणा की बोटी बोटी बिखेर दी। मुरगा बने हुए सिंह ने एक ही हत्थल में उसे स्वर्ग पहुंचा दिया। कोड़े खाये हुए हाथी ने सूंड में पकड़ कर उसका कचूमर निकाल दिया। नीले महाराणा की आंखें बाहर निकल आईं। पेट की आंतें कुचल गईं। इस प्रकार वह रंगा हुआ सियार बेमौत मारा गया। अपनी बोली से अपना न्याय कराया।

सियार की कुटिलता

एक था सियार, एक था चूहा, एक था लक्कड़बग्घा, एक था बनबिलाव और एक था बाघ। ये पांचों मिलकर शिकार करते। बांट बांट कर खाते। पर सियार स्वभाव से ही शैतान था। बंटवारे में कुछ न कुछ शैतानी किये बिना मानता ही नहीं। ऐसी सफाई से बदमाशी करता कि किसी को पता तक नहीं चलता। वह चुपचाप अपनी रोटी सेंक लेता।

एक बार उन सबने एक हरिन का पीछा किया। बहुत दौड़े, पर हरिन पकड़ाई में नहीं आया। तब सियार ने बाघ से कहा — खाली दौड़ने से कोई काम नहीं बनेगा। चालाकी से इसको मारो। उसने चूहे को पट्टी पढ़ाई कि जब हरिन थक कर झाड़ियों की छाया में सोता हो तो तू जाकर उसके पैरों की नसें कुतर लेना। फिर उससे दौड़ा नहीं जायगा और हम शिकार कर लेंगे।

हरिन दौड़ने से परेशान होकर झाड़ियों की ओट में सो गया। चूहे ने जाकर धीरे धीरे सोये हुए हरिन के पैरों की नसें काटली। फिर उससे भागा नहीं गया और डगमगा कर नीचे गिर गया। नीचे पड़े तड़पते हरिन को बाघ ने आसानी से मार डाला।

वे पांचों जानवर इकट्ठे होकर खाने का विचार करने लगे कि सियार के मन में कुटिलता जागी। उसने सोचा कि यह चमचमाता हरिन अकेला खाऊं तो कुछ बात बने। पांचों में बंटने के बाद तो इसका मांस दांतों में भी नहीं लगेगा। उसने अपने साथियों से कहा — यों आलसी की तरह इस शिकार को क्या खाते हो? कभी मांस खाया नहीं क्या? मैं तो स्नान करके आया हूं। जाओ, तुम सब भी नहा धो कर आओ। अब यह हरिन यहां से भाग थोड़े ही

जायगा ! नित्य - नियम नहीं पालने से पाप लगता है । जाओ , आराम से नहा कर आओ , फिर निश्चिन्त होकर खायेंगे । सियार की बात सब के मन भा गई । वे सब तालाब पर नहाने गए ।

इस बीच सियार ने सारी बदमाशी सोचली । सबसे पहले नहा कर बाघ आया । सियार मरे हुए हरिन के पास मुंह लटकाए बैठा था । बघेरे ने अपने मित्र सियार को इस तरह देखा तो पूछा — क्या बात है , ऐसे उदास क्यों ? तब सियार धीरे से सिर धुनता कहने लगा—भलाई का जमाना ही नहीं रहा । अभी अभी चूहे ने आकर कहा कि शिकार तो मैंने किया है और खाने के लिए सभी मुह धो रहे हैं ! बाघ जैसे खूंखार जानवर भी मेरे बल पर पेट भरते हैं ! मेरा जूठा खाते हैं ! मैं नहीं होऊं तो सब के सब भूखों मर जांय । चूहे की बात सुनकर मेरा तो मन फट गया । मैं तो इस शिकार के पीछे धूल फेंकता हूं ।

सियार की बात सुनकर बाघ को भी गुस्सा आया । क्रोध में विकराल हो कर कहने लगा — अब तो इसी बात पर मैं अपने हाथों किया गया शिकार ही खाऊंगा ! किसी दूसरे के शिकार में मरने पर भी मुंह नहीं डालूंगा । साले चूहे की यह ताकत कि मेरा पेट पाल सके। यह कहकर बाघ तो वहां से अपना शिकार खोजने चल पड़ा । मरे हुए हरिन की तरफ देखा तक नहीं ।

बाघ के बाद आया लक्कड़बग्घा । सियार तो उसी रूप में बैठा था । लक्कड़-बग्घे ने आकर पूछा — क्या बात है , यों उदास कैसे ? सियार एक गहरा निश्वास डालते हुए बोला — पराये दुख दुबला हो रहा हूं । तुम सब को समझा समझा कर थक गया कि आपस में उल्टा सीधा मत बोला करो , कभी झगड़ा हो जायगा । मिलजुल कर रहने में ही सुख है । पर तुम लोग मानते ही नहीं । मुझे खाते पीते मुसीबत हो जाती है । तूने बाघ को न जाने क्या गाली निकाल दी , जो वह गुस्से में लाल होकर अभी अभी तुझे ही ढूंढ़ने गया है । तुझे अब वह देखे नहीं छोड़ेगा । दोस्तों , योंही बोली में क्यों बैर पैदा करते हो ? तुम्हें क्या धन बांटना है ! मैं तो तुम लोगों के झगड़े के आगे दुखी हो गया हूं । बाघ आते ही तुझे मार डालेगा । इसलिए उदास हूं । तुम्हारे कारण अब कहां जाऊं ?

लक्कड़बग्धा तो इस भभकी से ऐसा डरा कि पूछो मत । उसने तो चूं भी नहीं की । अपने जीव की जो पड़ी थी ! जैसे आया वैसे ही भाग गया ।

लक्कड़बग्घे के बाद आया बनबिलाव । सियार तो वही बनाव बनाए बैठा था । बनबिलाव ने पूछा — क्या बात हुई , उदास कैसे ? आज तो मन

चाही शिकार हुई । खुश होना चाहिए । सियार भारी गले से कहने लगा—आज तो गजब की बात हो गई और तुझे शिकार की पड़ी है ! इस काली अमावस्या के दिन हमने इस गरीब जानवर की हत्या की — कितना पाप लगेगा ? इस पाप का भागी अब कौन बनेगा ? बाघ और लक्कड़बग्घा तो पाप धोने के लिए गंगाजी रवाना हो गए । मैं तेरी ही राह देख रहा था । तू इसे खाए तो खा, मैं तो प्रायश्चित्त करने जाता हूं । संभाल अपना शिकार ; मैं तो यह रवाना हुआ गंगाजी के लिए । यह बात कह कर सियार खड़ा हुआ और जाने की तैयारी करने लगा कि वनबिलाव ने कहा — तुम सब गंगाजी पाप धोने के लिए जाते हो तो मैं अकेला क्यों पाप ओढ़ूं ? मैं तो तुमसे भी आगे .... । बात पूरी करने से पहले ही बनबिलाव तो फुदकता हुआ भाग खड़ा हुआ । कहीं ऐसा नहीं हो कि सियार उसको मरा हुआ हरिन सौंप दे और खुद उससे पहले गंगाजी दौड़ जाय !

सबसे बाद में आया चूहा । सियार तो वैसा ही नाटक किये बैठा था । चूहे ने पास आकर पूछा — क्या बात हुई, उदास कैसे ? सियार बहाना करता बोला — दोस्त, तेरे कारण अब कहां जाऊं ? तुझे कितनी बार कहा कि तू छेड़खानी मत किया कर । पर तेरे तो हाथों पैरों में आग लगी रहती है । तूने वनबिलाव की मूंछें क्यों कुतरी ? वह गुस्से में लाल-पीला होकर आया था । आज वह तेरी बोटी बोटी तोड़ लेगा । वह तेरे पैरों के निशान निशान तुझे ढूंढने ही गया है । आज तुझे सपने में भी नहीं छोड़ेगा । तू मसखरी मसखरी में क्यों वैर मोल लेता है ?

सियार की बात सुनकर चूहे को तो कंपकंपी छूट गई । वह तो फद फद करता वहां से जान लेकर भागा । फिर उस कपटी सियार ने निःशंक होकर अकेले उस हरिन को खा लिया ।

उतर भीखा मेरी बारी

एक था ऊंट और एक था सियार । दोनों ही गाढ़े दोस्त थे । पर मौका मिलने पर सियार बदमाशी किये बिना नहीं मानता । ऊंट मस्त स्वभाव का था । सियार की शैतानियों की ज्यादा परवाह नहीं करता । जानता था कि यह तो सियारों का स्वभाव है । स्वभाव पालना है, पालने दो । समझदार ऊंट के कारण ही दोनों में निभ रही थी । दोनों आठों पहर साथ रहते और साथ ही खाने पीने को जाते ।

वे रोज ढलती रात में एक खेत में चरने जाते । ढलती रात की ठंडी हवा में वे खेत में घुसते और सवेरे आनन्द मनाते वापिस लौट आते । खेत का मालिक सारी रात आंखें फाड़े रखवाली करता । पर ढलती रात की ठंडी हवा में उसकी आंख लग जाती । फिर ऊंट और सियार निश्चिन्त होकर पेट भर खा लेते । बाकी सारा दिन खेजड़ी की छाया में मौज मनाते । पोल मिली पर मिली । खेत का मालिक सवेरे आंखें मलकर देखता तब खेत का नुकसान तो हो गया होता । वह पूरा हैरान ! रोज के नुकसान से वह पूरा परेशान हो गया । रोज तकलीफ पाना और रोज नुकसान । ऊंट और सियार के पैरों के निशान साफ होते पर वे कभी दिखाई नहीं देते ।

सियार को बहुत दिन हो गये ऊंट से मसखरी किए । उसका मन झुंझ-लाने लगा । अंत में एक दिन मौका पाकर उसने तो अपने स्वभाव का पालन किया ही । एक ढलती रात उसी खेत में वे मोठ खाने लगे । सियार का पेट भर गया । उसने ऊंट से कहा — भाई, मुझे तो हूंकने की मन में आई है । हूके बिना मेरा तो खाना हजम ही नहीं होगा । मेरा पेट फूल रहा है ।

बहुत दिन हो गए हूक दबाकर रखे हुए ; अब मेरे से नहीं रहा जाता ।

ऊंट अभी तक बिल्कुल भूखा था । उसने कहा—थोड़ी देर ठहर ले , मुझे पेट भरने दे, इतनी देर में तेरा पेट नहीं फूट जायगा । मैं तुझे हाथ जोड़ता हूं , थोड़ा रुकजा । नाहक खेत के मालिक को मत जगा । दोनों का पेट भरने के बाद सारे दिन मन की हौंस निकाल लेना । दूसरा काम ही क्या है ? पर सियार किसकी सीख मानता ! उसे तो शैतानी करनी ही थी । उसने कहा — भाई , चाहे राजी हो चाहे नाराज , हूंके बिना तो मेरा जी निकल रहा है । वह तो ऊंट के जवाब देने से पहले ही ऊंचा मुंह करके जोर से हुक्की हुक्की करने लगा कि खेत के मालिक की आंख खुल गई । वह एकदम लम्बी और मजबूत लकड़ी उठा कर आवाज की तरफ भागा । सियार तो छक्के पजे सावधान था । वह तो हुक्की हुक्की करता वहां से चम्पत हो गया । पर ऊंट ढीला मुंह करके बगड़ बगड़ मुंह भर रहा था कि खेत का मालिक सिर पर आ खड़ा हुआ । सामने के पैरों पर पूरे जोर से लाठी की दे मारी । ऊंट चेता , तब तक तो नाक पर चोट पड़ी । वह तो बिल्कुल हक्का - बक्का हो गया । आंखों के सामने अंधेरा आ गया । फिर क्यों पूछो, जगह जगह नगारे के समान डडे पर डडे बजने लगे । ऊंट को मार मार कर सीधा कर दिया । खेत के मालिक ने अपने हाथों की ताकत को खूब आजमाया । जगह जगह ऊंट के शरीर पर नीली लकीरें पड़ गई । सीधे सादे बिचारे ऊंट ने बड़ी मुश्किल से भाग कर अपनी जान बचाई ।

उधर एक झाड़ी की ओट में सियार तो छिपा हुआ बैठा ही था । ऊंट के शरीर पर आडी - टेढ़ी , सीधी - बांकी नीली रेखाएं देख कर सियार को फिर मजाक सूझी । ऊंट के पास आकर बोला—भाई, तूने तो शरीर पर तस्वीरें अच्छी बनवाई । पर ऊंट तो कुछ भी नहीं बोला । मन में गांठ बांधली । आज उसने बुरी तरह मार खाई थी । इन सुन्दर तस्वीरों का सियार को वापिस बदला चुकाने पर ही वह चैन की सांस लेगा । सियार भी बेशर्म की तरह उसके साथ हो गया ।

थोड़े दिन बीच में डाल कर ऊंट ने सियार से बदला लेने की सोची । एक बार वे दोनों चरने के लिए साथ जा रहे थे कि मार्ग में एक नदी आ गई । नदी भरपूर चढ़ी हुई । सियार ने कहा — नदी उतर जाय , तब तक सुस्ता लें , मेरे से पार नहीं उतरा जायगा । ऊंट ने मन में विचार किया कि आज मौका ठीक है । उस दिन की तस्वीरों का आज भुगतान हो जायगा । वह धीरे से बोला — राम जाने नदी कब उतार देगी , क्या भरोसा ? ऐसे सुस्ताने से पार

पड़ता है कहीं ? तू मेरे ऊपर बैठजा, मैं अभी नदी पार कर लूंगा। सियार उस दिन वाली बात भूल गया था। उसने सोचा कि इस पर बैठ कर नदी भी पार कर लेंगे और पानी से भी नहीं भीगेंगे। ऊंट अपने आप ही नीचे बैठ गया और सियार झट फुदक कर उस पर बैठ गया।

ऊंट थोड़ी देर तक तो मस्ती में गरजता रहा और फिर नदी के पानी में उतर गया। जान बूझ कर जहां गहरा पानी था वहां चलने लगा। नदी भर-पूर जोश में लहराती बह रही थी। ऊंट ठीक मंझधार में आ खड़ा हुआ। बोला—मेरे प्यारे दोस्त, मैं तो यहां लोटना चाहता हूं। ऐसा मौका फिर कब हाथ आएगा!

अब जाकर सियार का माथा ठनका। समझ गया कि आज तो बुरे फंसे। न ऊंट पर बैठा रह सकता हूं और न उतर सकता हूं। ऊपर बैठा ही कांपने लगा। नम्रता से बोला—भाई, मुझे उस पार उतरने के बाद तू मन करे जितना लोटना। ऊंट गरदन हिला कर कहने लगा—नहीं प्यारे, बिना लोटे तो अब मुझसे एक कदम भी आगे नहीं रखा जाता। मुझे तो इसी जगह लोटना पड़ेगा, नहीं तो कल का खाना मुझे पचेगा नहीं। सियार ने बहुत ही हाथ पांव जोड़े पर ऊंट तो नहीं माना सो नहीं माना। कहने लगा—भाई, तू क्यों रुकावट डालता है ? यह तो अपना अपना स्वभाव है। तुझे चरते हुए हूकनी आती है, मुझे पानी में लोटना आता है। मेरे शरीर पर बनी हुई नीली रेखाएं तुझे तस्वीरें नजर आती हैं। आज तू भी ठीक तरह स्नान ही करले।

सियार ने कहा — मैं तेरी गाय हूं। आज मुझे माफ करदे। अब कभी तेरे साथ बदमाशी नहीं करूंगा। यदि करूं तो मुझे राम देखे। उस दिन की मार ऊंट के कलेजे को अभी तक साल रही थी। बोला — नहीं भाई, सिर पर लेन देन कौन रखे। मुझे तो तेरा ऋण आज चुकाना है।

सियार के मना करते करते भी ऊंट तो बीच पानी में लोटा ही। नदी सगग सगग करती पूरी जोर से बह रही थी। सियार तो पानी में पड़ते ही गुचलकी खाने लगा। ऊंट ऊंचा मुंह करके डग डग हंसा। कहने लगा — देख दोस्त, मेरे शरीर पर कैसी सुन्दर तस्वीरें बनी हुई हैं! मित्र के साथ दगा करने वाला सियार तो वहीं डूब कर मर गया। ऊंट राजी खुशी नदी पार कर गया। उस दिन के बाद उसने किसी सियार को कभी अपना दोस्त नहीं बनाया।

गाने का प्रसाद

एक धोबी के पास एक गधा था। वह बहुत आलसी और जिद्दी था। धोबी उसे खूब मारता तो भी वह अपने मन के उपरान्त काम नहीं करता। मन करता तो चारे में मुंह डालता, पानी पीता और मन करता तब भार उठाता वर्ना कितने ही डंडों की मार पड़ती तो भी एक पैर आगे नहीं धरता। अन्त में दुखी होकर उसके मालिक ने उसकी ठीक तरह पूजा करके उसे घर से निकाल दिया। कहा — तेरा मन करे वहां मर, पर यदि इस बस्ती की तरफ मुंह किया तो तुझे जान से मार डालूंगा। गधे ने तो वहां से निकाले जाने के बाद वापिस मुड़ कर देखा भी नहीं। आंखों के सामने जो भी राह आई उधर चलता गया।

जाते जाते उस गधे को जंगल में एक सियार मिला। सियार ने गधे को नमस्कार किया, कुशल-क्षेम पूछी और कहा—मामाजी, कहां जा रहे हैं?

तब गधे ने अपनी सारी व्यथा बताई। अन्त में कहा — मर जाना मंजूर है पर वापिस धोबी की बस्ती की तरफ तो मुंह भी नहीं करूंगा। उसने मार मार कर मेरा कचूमर निकाल दिया। मैं तो वापिस उस दिशा की तरफ देखूंगा भी नहीं।

सियार ने उसे धीरज बंधाया, सान्त्वना दी। कहा — आज से मेरे तेरे धरम का रिश्ता। तू किसी बात की चिन्ता मत कर। यहां पास में ही ककड़ियों का खेत है। ढलती रात के ठंडे प्रहर में हम छिप कर ककड़ियां खाने चलेंगे। वहां एक दूसरे का जाब्ता रखेंगे।

गधे ने सियार से पूरा मेल कर लिया। दोनों आपस में मस्ती करते, मौज मनाते। रात को चुपचाप जाकर ककड़ियों का भोग लगा लेते। गधा तो

थोड़े दिनों में ही ताजा हो गया । मजा आया पर आया ।

एक रात वे दोनों ही ककड़ियां खा रहे थे कि गधे ने कहा— कैसी सुहानी चांदनी रात है, हवा के ठंडे झोंके आ रहे हैं । भाई, मेरा मन तो गीत गाने का कर रहा है । मैं एक बार जोर से आलाप लेकर गाऊंगा ।

सियार ने उसे बहुत रोका पर गधा किसकी मानता ! कहा — भैया, तू नाराज हो तो लाख बार होना, बिना गाये तो मेरा पेट फूल रहा है, देर करूंगा तो फूट कर आंतड़ियां बाहर निकल जायेंगी । सियार ने कहा — तेरे तो करम फूटे हुए हैं । ये कच्चे नारियल की तरह मीठी पकी हुई ककड़ियां तुझे नुकसान कर रही हैं । लाठी की मीठी चोटें अच्छी लगती हों तो गा, मेरे बाप का क्या जाता है ? बहुत ही सुहानी चांदनी रात है, ठंडी हवा चल रही है, पर गाना सुनकर खेत के मालिक ने डंडे मारे तो आंखों के सामने अंधेरा छा जायगा । फिर मुझे दोष मत देना ।

गधे ने कहा — बन्धु, तुझे दोष नहीं दूंगा । पर यह मेरे वश में नहीं है । बिना गाये मेरा गला घुटता है । मुझे तो गाना पड़ेगा । सियार ने देखा कि गधा तो कैसे भी नहीं मानने का । तब वह अपना बचाव करता हुआ कहने लगा — भैया, तू ऊंचे स्वर में गाया करता है जिससे मेरे कानों के पर्दे फट जाते हैं । मैं थोड़ी दूर पर खड़ा होकर सुनूंगा, तू तब तक ठहर जा । यह कह कर वह सियार तो खेत के दूसरे किनारे पर जा कर खड़ा हो गया । बाद में गधे ने ऊंचा मुंह कर के सातवें स्वर में गाना शुरू कर दिया ।

रोज का नुकसान होने से खेत का मालिक बहुत परेशान था । गधे की चीं-भौं चीं-भौं सुनकर वह उसी समय उठ खड़ा हुआ । एक डंडा लेकर दौड़ता आया । गधा तो अपनी स्वर-साधना करने में लीन था कि एकाएक उसके सिर पर बिजली गिरी । डंडा पड़ते ही आंखों के आगे उजाला हो गया । बहुत दिनों से क्रोध मे जलते खेत के मालिक ने अपने हाथों का सारा जोर लगा दिया । मार मार कर गधे का भूसा निकाल दिया । अंत में अधमरा करके छोड़ा । कहा: अब कभी भी इस खेत की तरफ मुंह किया तो जान से मार कर छोडूंगा । बहुत दिन हुए मस्ती से खेत चरते । मुंह पर ठोकर मार कर वह अपनी झोंपड़ी में चला गया ।

गधे का तो चलना ही मुश्किल हो गया । बहुत देर तक धीरे धीरे खिस-कता खिसकता बड़ी मुश्किल से खेत के बाहर निकला । दूसरे किनारे खड़ा सियार उसी की राह देख रहा था । सामने आकर प्रणाम किया । पूछा :

तूने एकाएक गाना बन्द करके नगारा बजाना शुरू कर दिया था क्या ? क्या सुन्दर नगारे बजने की आवाज आ रही थी ! फिर गधे के पास आकर उसने शरीर पर जगह जगह नीली धारियां बनी देखी । तब फिर कहा — खेत के मालिक ने शायद गाने से प्रसन्न होकर तुझे फूल मालाएं पहनाई लगती हैं ? आखिर कद्रदान ही कला की कद्र करना जानते हैं, मेरे जैसा मूर्ख क्या समझता !

गधा क्या जवाब देता ? शर्मिन्दा होकर गरदन झुका ली । तब सियार ने उसे फटकारते हुए कहा — भाई साहब, मैंने आपको कितना मना किया, पर आप किसकी मानने लगे । अब चख लिया गाने का प्रसाद ? कैसा मीठा लगा ? जाओ, अब अपनी मरजी हो वहां जाओ । तेरा मेरे साथ निभाव नहीं होगा । कभी तेरे कारण मुझे भी मार खानी पड़ेगी । मूर्ख गधे ने अपने कर्मों से ही मार खाई और अपने कर्मों से ही अकेला रह गया । ऐसे मूर्ख का कौन साथ करता ! सियार तो उससे अन्तिम नमस्कार करके वहां से रवाना हो गया । अब वह जाय तो कहां ! नीचा सिर करके वहीं खड़ा खड़ा सोचने लगा— बस्ती की तरफ जाऊं तो धोबी के डण्डे और खेत में जाऊं तो खेत के मालिक की मार !

कवि संगीत

मूल. ले. रवीन्द्रनाथ ठाकुर | अनु. अनुराधा बनर्जी

बंगाल में प्राचीन काव्य साहित्य एवं आधुनिक काव्य साहित्य के बीच कवियालों [कविता गाने वालों] का गान है । यह एक नूतन वस्तु है और अधिकांश नवीन सामग्रियों की तरह इसकी भी परमायु अधिक नहीं । जिस प्रकार किसी दिन अचानक गोधूली में आकाश पतंगों से छा जाता है , मध्यान्ह आलोक में भी उन्हें देखा नहीं जा सकता और अन्धकार होने से पूर्व ही वे अदृश्य हो जाते हैं—ये कविगान भी बंग साहित्य के क्षणस्थाई गोधूली आकाश में उसी प्रकार अकस्मात् दिखाई पड़े थे , उसके पहले भी उनका कोई अस्तित्व नहीं था और अब उनका कोलाहल सुनाई नहीं देता ।

गीतिकाव्य बंगाल में बहुत दिनों से चला आ रहा है एवं यह गीतिकाव्य ही बंग साहित्य का प्रधान गौरवस्थल है। वैष्णव कवियों की पदावली वसंत की अपर्याप्त पुष्पमंजरी जैसी है ; जैसा उसके भाव का सौरभ है वैसा ही उसके गठन का सौंदर्य है। राजसभा कवि रायगुणाकर का अन्नदामंगलगान जैसे राज कंठ में मणिमाला हो ; जैसी उसकी उज्वलता वैसा ही उसका शिल्प कौशल । हमारी वर्तमान समालोचना के अंतर्गत ये कविगान भी गान हैं, परन्तु इनमें भावों का वह गाढ़ापन व गठन का वह सौंदर्य नहीं है ।

नहीं रहने के कुछ कारण भी हैं। पूर्वकाल के गान या तो देवता के , या राजा के सम्मुख गाये जाते थे – इसलिए स्वतः ही कवि का आदर्श दुरूह था। इस कारण रचना के किसी भी अंश में तनिक-सी भी अवहेलना दिखाई नहीं पड़ती ; भाव , भाषा , छन्द , रागिनी सभी में सौंदर्य व नैपुण्य का प्रकाश था । उस समय कवियों को सृजन का और श्रोताओं को सुनने का प्रचुर अवसर था , तभी गुणी सभा में गुणी कवि के गुण का प्रकाश सार्थक था ।

किन्तु अंग्रेज की नवीनसृष्ट राजधानी में पुरातन राज-सभा नहीं थी। पुराना आदर्श भी नहीं था। तब कवि का आश्रयदाता राजा बना – सर्वसाधारण नामक एक अपरिणत मस्तिष्क वाला स्थूल व्यक्ति – और उस अचानक राजा बने हुए व्यक्ति की सभा का उपयुक्त गान हुआ कवि दल का गान। यथार्थ साहित्यरस की आलोचना का अवसर, योग्यता व इच्छा उस समय कितने जनों में थी ? तब नयी राजधानी का नवीन समृद्धिशाली क्लान्त वणिक-सम्प्रदाय सांध्यवेला की बैठक में दो घड़ी आमोद-प्रमोद की उत्तेजना चाहता था, साहित्य रस नहीं।

कवि दल उस अभाव की पूर्ति के लिए महफिल में उतरा। अपने पूर्ववर्ती गुणियों के गान में बहुत सारा पानी व थोड़ी सी चटक मिलाकर, उनके छन्दोबद्ध सौन्दर्य को जोड़ तोड़ करके सुलभ बना कर, अत्यंत लघु स्वर की चीत्कार में चार जोड़े ढोल और चार थाली जोड़ कर दल बल सहित चिल्ला चिल्ला कर आकाश विदीर्ण करने को तैयार हुआ। गीत सुनने और भावरस के भोग में जो सुख है केवल उसी से सभ्य-समुदाय सन्तुष्ट नहीं था — उस में लड़ाई व हार-जीत की उत्तेजना आवश्यक थी। सरस्वती की वीणा के तारों को झनझना कर झंकृत भी करना होगा और वीणा के काष्ठ दंड को ठकठका कर लाठी भी चलानी होगी। नये राजा के मनोरंजनार्थ यह अपूर्व नई सृष्टि हुई। पहिले नियम था, दोनों प्रतिपक्षी दल परस्पर पूछ-ताछ करके पहिले से ही उत्तर-प्रत्युत्तर लिख लाते। फिर उससे भी तृप्ति नहीं हुई, तब आमने-सामने बैठ कर वाग्युद्ध होने लगा। इस अवस्था में केवल प्रतिपक्षी को ही आहत किया जाता हो ऐसी बात नहीं थी ; भाषा, भाव, छंद सभी घायल होने लगे। श्रोतागण भी अधिक प्रत्याशा नहीं करते — रचना कौशल, अनुप्रास की छटा और प्रेषित उत्तर से ही सभा जम जाती ; उच्छ्वसित वाहवाही मिलती और एक जोड़ी ढोल, चार थालियों और सम्मिलित कंठ का प्राणपण चीत्कार ; निर्जनता प्रिय सरस्वती ऐसी सभा में अधिक समय तक कैसे टिक पाती ?

सौंदर्य की सरलता जिन्हें आकर्षित नहीं करती, भाव की गंभीरता में निमग्न होने का जिन्हें अवसर नहीं है, अनुप्रासों की पुनरावृत्ति उनके मन को शीघ्र ही उत्तेजित कर देती है। संगीत की बर्बर अवस्था में राग-रागिनियों का कितना भी अभाव हो, ताल-प्रयोग का कोलाहल यथेष्ट मात्रा में रहता है। सुर की अपेक्षा बारबार सशब्द-आघात से अशिक्षित चित्त सहज ही मस्त हो उठता है। एक श्रेणी की कविता में अनुप्रास उसी प्रकार का क्षणिक, त्वरित व सहज उत्तेजना की सृष्टि करता है। साधारण मनुष्यों के कान शीघ्र आकर्षित करने का इतना सरल उपाय कम ही है। अनुप्रास जब भाव, भाषा, छन्द का अनुसरण करता है तब

उससे काव्य की सौंदर्य-वृद्धि होती है, किन्तु जब वह इनका अतिक्रम कर मूढ़ों से प्रशंसा पाने के लिए आगे बढ़ती है तब उससे समस्त कविता दीनदशा को प्राप्त हो जाती है।

कवि दल के गानों में अनुप्रास अनेक स्थलों पर भाव, भाषा — यहां तक कि व्याकरण को भी दूर हटा कर, श्रोताओं के निकट प्रगल्भता व्यंजित करते हैं। किन्तु यथार्थ में उसका कुछ भी पुण्य नहीं है, क्योंकि उसे छन्दों की अथवा अन्य किसी भी नियम की रक्षा नहीं करनी पड़ती। परन्तु जो श्रोता केवल क्षणिक आनन्द चाहता है, वह इतना विचार नहीं करता और जिसमें विचार की आवश्यता हो ऐसी वस्तु की इच्छा भी नहीं करता।

गेल गेल कुल कुल, जाक कुल--
ताहे नई आकुल
लयेछि जाहार कुल, से आमार प्रतिकूल ॥
जवि कुलकुण्डलिनी अनुकूला हन आमाय।
अकूलेर तरी कूल पाब पुनराय ॥
एखन व्याकुल हये कि दुकूल हाराय सई।
ताहे विपक्ष हासिबे जत रिपुचय ॥

[मेरा कुल गया तो जाने दो। मैंने जिसका कूल लिया है, वह मेरे प्रतिकूल है। जब कुलकुण्डलिनी देवी प्रसन्न होंगी तब मेरी नौका फिर कूल पर पहुंचेगी। अभी व्याकुल होने से, हे सखी दोनों कूल [अर्थात् सभी कुछ] खो दूंगा। तब मेरे सारे शत्रु मेरी दुर्दशा देख हसेंगे]

पाठक देख रहे हैं कि ऊपर उद्धृत गीतांश में एक कुल शब्द का ही कूल मिलना दूभर हो गया है। किन्तु इसमें कुछ बड़ाई नहीं, क्योंकि अधिकांश स्थलों में वह एक ही अर्थ की पुनरावृत्ति करता है। लेकिन श्रोता इस विचार में नहीं पड़ते, वे अत्यंत सुलभ चतुराई से मुग्ध होने को तैयार हैं। यहां तक कि अनुप्रास की खातिर यदि कवि व्याकरण व शब्द-शास्त्र को सम्पूर्णतया उलट दें तो उसमें भी किसी को आपत्ति नहीं होगी। जैसे —

एके नवीन वयस, ताते सुसभ्य,
काव्यरसे रसिके,
माधुर्य गाम्भीर्य, ताते 'दाम्भीर्य' नाई,
आर आर बऊ जेमनधारा व्यापिके।

अधैर्य हेरे तोर स्वजनी , धैर्य धरा नाहि जाय ।
जदि सिद्ध हय सेई कार्य करब साहाज्य
बलि , ताई बले जा आमाय ।

एक तो वैसे ही बंगला शब्द में कोई भाव नहीं है , अंग्रेजी प्रथानुसार उसमें एक्सेण्ट नहीं है , संस्कृत प्रथानुसार उसमें ह्रस्व-दीर्घ मात्रा की रक्षा नहीं होती है और उस पर इन आलोच्य कवि - गानों में सुनियमित छन्द का बन्धन न रहने से इन रचनाओं को श्रोताओं के मन में मुद्रित कर देने के लिए बार बार अनुप्रासों की सहायता की आवश्यकता होती है । खड़ी दीवार पर लताएं उठाने के लिए जैसे बीच बीच में कीलें लगानी पड़ती हैं , ये अनुप्रास भी श्रोताओं के मन में कीलें ठोकने जैसे ही हैं , अनेक निर्जीव रचनाएं भी इस कृत्रिम उपाय से शीघ्र मन को आकर्षित कर लेती हैं । बंगला पांचाली भी इसी कारण अनुप्रासों से सराबोर है ।

आवश्यकतानुसार जनसाधारण का मनोरंजन करने के लिए इन कवियों ने छन्द व भाषा की विशुद्धता व नैपुण्य को विसर्जित कर केवल सुलभ अनुप्रास व सस्ते अलंकारों से ही काम खत्म किया है । उनके कवित्व में भाव की उत्कर्षता भी दिखाई नहीं देती । इन कवियों ने अपने पूर्ववर्ती शाक्त व वैष्णव महाजनों के भावों को अत्यंत तरल व फीके बना कर सस्ते दामों शहरी श्रोताओं को जुटाया है । उनके पास जो संयत था वह यहां शिथिल व विकीर्ण है । उनके कुंज वन में जो प्रफुल्लित पुष्प था वह यहां बासी व्यंजन बना हुआ है ।

कई वस्तुएं ऐसी होती हैं जिन्हें अपने स्थान से हटाने पर वे विकृत और दूषित हो उठती हैं । इन कवियों में भी वैसे कई भाव स्थानभ्रष्ट हो कलुषित हो उठे हैं । यह बात अवश्य स्वीकार करनी होगी कि वैष्णव पदावली में ऐसे कुछ अंश हैं जो सर्वथा निर्मल नहीं है किन्तु सब मिला कर वे एक प्रकार से शोभित हो उठे हैं । आलोच्य कवि उस भाव को उसके सजीव आश्रय से , उसके सौंदर्यमय परिवेष्ठन से विच्छिन्न कर जब अश्लील भाषा व शिथिल छन्द सहित हमारे सम्मुख लाते हैं तो वह गलित पदार्थ की भांति कुत्सित आकार धारण करती है ।

वैष्णव काव्य में प्रेम की विचित्र अभिव्यंजना में राधा की खण्डिता अवस्था का चित्रण भी है । इसका कोई विशेष आध्यात्मिक अर्थ व गौरव होगा , किन्तु साहित्य में श्रीकृष्ण की इस कामुक छलना द्वारा राधा - कृष्ण के प्रेम का सौंदर्य खण्डित हुआ है , इसमें कोई सन्देह नहीं । राधिका की इस अवमानना से काव्य श्री भी अपमानित हुई है ।

किन्तु प्रचुर सौंदर्यराशि में इन विकृतियों को हम आंख गड़ा कर नहीं देखते , सम्पूर्ण के सौंदर्य - प्रभाव से इनका दोष बहुत कुछ दूर हो जाता है । लौकिक अर्थ में वैष्णव काव्य में प्रेम का आदर्श कई स्थानों पर शिथिल हुआ है ; किन्तु सम्पूर्ण पाठ करने पर जिनके मन में

एक सुन्दर व उन्नत भाव की सृष्टि नहीं हुई हो , उन्होंने या तो उसे अच्छी तरह पढ़ा नहीं है और या वे यथार्थ काव्य - रसिक नहीं हैं ।

लेकिन हमारे उल्लिखित कवियों ने वैष्णव काव्य का सौंदर्य व गाभीर्य अपने व श्रोताओं की पहुच से दूर जानकर उसके जिस अंश का निर्वाचन किया है , वह अत्यंत अयोग्य है । इन गीतों के प्रमुख विषय हैं — कलंक व छलना । राधिका व उसकी सखियां कुब्जा अथवा अपरा को लक्ष्य कर बारम्बार तीव्र सरल परिहास द्वारा श्याम की लांछना करती हैं । इनकी रचना का एक और भी विषय है , स्त्री व पुरुषों का एक दूसरे के प्रति अविश्वास पूर्वक दोषारोपण करना , उस शौकीन झगड़े को सुनते सुनते मन में ग्लानि पैदा होती है ।

जिनका आत्मसम्मान यथार्थ ही दृढ़ है , वे अवज्ञा द्वारा अभिमान प्रकाश किया करते हैं । उनके मान को आघात लगने पर वे या तो उसका स्पष्ट प्रतिकार करते हैं , नहीं तो उसकी निशब्द उपेक्षा करते हैं । प्रेम में प्रियजनों से आघात पाने पर या तो चुपचाप उसे सहन करते हैं और या साक्षातरूप से उसकी सम्पूर्ण मीमांसा करते हैं । हमारे देश में सर्वदा ही यह देखने को मिलता है कि पराधीनता जिसका अवलम्बन है , वही अभिमानी भी है ; एक ओर से जो भिक्षुक है , दूसरी ओर उसके अभिमान का कोई अंत नहीं , जो सर्व प्रकार अक्षम है , वह बात बात में अभिमान प्रकट करता है । यह अभिमान बंगाली-प्रकृति में निर्लज्ज दुर्बलता का परिचायक है ।

दुर्बलता स्थल-विशेष व परिमाण-विशेष से सुन्दर मालूम होती है । स्त्रियों को स्वल्प उपलक्ष में मान अभिमान कभी कभी शोभा देता है । जब तक नायक के प्रेम पर नायिका का दावा यथार्थ हो तब तक कभी कभी क्रीड़ा-छल में अथवा छोटे अपराध के दंड-छल में पुरुष के प्रेमावेग को कुछ देर के लिए संयत करने के अभिप्राय से मान करने पर उस मान का माधुर्य प्रकट होता है । किन्तु गंभीर अपराध अथवा विश्वासघात से नायक जब उस प्रेम की जड़ पर ही कुठाराघात करता है , तब अभिमान करने बैठना अपना ही अपमान करना है , इसलिए उसका कोई सौंदर्य नहीं और वह काव्य में स्थान पाने योग्य नहीं है ।

दुर्भाग्यवश हमारे देश में स्वामीकृत सब प्रकार का असम्मान व अन्याय स्त्री को सहना व क्षमा करना पड़ता है । किंचित अश्रुजलसिक्त वक्र वाक्यबाण अथवा कुछ क्षण घूंघट में विमुख हो मौन रहने की अपेक्षा कोई अस्त्र नहीं , अतएव हमारे समाज में स्त्रियों का सर्वदा अभिमान करना सत्य है । किन्तु यह भी निश्चित है कि वह हमेशा सुंदर कदापि नहीं है ; क्योंकि जो अविमिश्र स्थाई हीनता प्रकाश करती है वह कभी सुन्दर नहीं हो सकती । कविदल के गानों में राधिका का जो अभिमान प्रकट हुआ है वह प्राय: ऐसा ही अयोग्य अभिमान है ।

साध क'रे करेछिलेम दुर्जय मान,
श्यामेर ताय हल अपमान ।
श्यामके साधलेम ना, फिरे चाईलेम ना,
कथा कईलेम ना रेखे मान ।
कृष्ण सेई रागेर अनुरागे, रागे रागे गो,
पड़े पाछे चन्द्रावलीर नवरागे ।
छिल पूर्वेर जे पूर्वराग, आबार ए की अपूर्व राग,
पाछे रागे श्याम राधार आदर भूले जाय ॥
जार मानेर माने आमाय माने, से माने,
तबे की करबे ए माने ।
माधवेर कत मान ना हय तार परिमाण,
मानिनी हयेछि जार माने ॥
जे पक्षे जखन बाड़े अभिमान,
सेई पक्षे राखते हय सम्मान ।
राखते श्यामेर मान गेल गेल मान,
आमार किसेर मान - अपमान ॥

[मैंने शौक से जो मान किया था उससे श्याम का अपमान हुआ। श्याम को मैंने मनाया नहीं, मुड़कर भी नहीं देखा, बात भी नहीं की। कृष्ण इस क्रोध में चंद्रावली से अनुराग तो नहीं करेंगे ! वे गुस्से में मेरा पिछला प्यार न भुल जायें। जिसके प्रति सम्मान से सब मुझे मानते हैं, वही यदि मेरा आदर न करे तो यह मान लेकर मैं क्या करूंगी।]

इन पंक्तियों में प्रेम का जितना भी इतिहास जिस किसी प्रकार से लिखा गया गया है उसे पढ़कर कृष्ण पर भी श्रद्धा नहीं होती, और न राधा के लिए; चंद्रावली के लिए भी अवज्ञा उत्पन्न होती है। केवल नायक-नायिका का अभिमान ही नहीं, माता-पिता के प्रति कन्या का अभिमान भी कविगानों में सर्वत्र दिखाई देता है। गिरिराज महिषी के प्रति उमा का जो अभिमान है वह पाठकों के चित्त में विरक्ति का उद्रेक नहीं करता। क्योंकि मातृ-स्नेह पर उमा का अधिकार यथार्थ है, इसमें कोई सन्देह नहीं। कन्या व माता के इस घात प्रतिघात से स्नेह-समुद्र सुन्दर रूप से तरंगित हो उठता है। मां-बेटा व नायका-नायिका का मान अभिमान कविदल के गानों का प्रधान विषय होने का कारण, पहिले ही कह चुका हूं, कि बंगाली की प्रकृति में अभिमान की मात्रा कुछ अधिक होती है, अर्थात दूसरे की प्यार भावना के प्रति

उसके अधिकार का दावा काफी ज्यादा है। वह प्रेम अप्रमाण हो जाने पर भी वह रो धोकर, गुस्से होकर अपना दावा किसी भी प्रकार से छोड़ना नहीं चाहता — एक और कारण यह भी है कि इस मान-अभिमान से उत्तर-प्रत्युत्तर की तीव्रता व जय-पराजय की उत्तेजना नष्ट नहीं होने पाती। इन कवियालों का प्रधान लक्ष्य साहित्य सृष्टि की अपेक्षा क्षणिक उत्तेजना का उद्रेक करना है।

धर्मभावना के उद्दीपन के लिए भी नहीं, राजा के संतोष के लिए भी नहीं, केवल साधारण व्यक्ति के अवसर-विनोद की खातिर वर्तमान बंगाल के कवि ही सबसे पहिले गीतों की रचना प्रारम्भ करते हैं। अब साहित्य के ऊपर जन साधारण का ही आधिपत्य है, किन्तु इस बीच उनकी प्रकृति में परिवर्तन हुआ है; और उस परिवर्तन के साथ साथ साहित्य ने भी गंभीरता प्राप्त की है। उसकी सम्यक् आलोचना के लिए अलग निबन्ध लिखने की आवश्यकता होगी, अतएव यहां उनका प्रयोजन नहीं।

किन्तु जन साधारण में रुचि का कितना ही उत्कर्ष और शिक्षा का कितना ही विस्तार क्यों न हो उनके आनन्द की खातिर स्थाई आनन्द एवं आवश्यकता की पूर्ति के लिए तथा समय गुजारने की दृष्टि से क्षणिक साहित्य का प्रयोजन तो हमेशा ही रहेगा। आजकल समाचार-पत्र व नाट्यशालाएं शेषोक्त प्रयोजन को पूरा कर रही हैं। कविदल के गानों में जिस प्रकार उच्चादर्श का शैथिल्य व सुलभ अलंकारों का बाहुल्य देखा गया है, आधुनिक समाचार-पत्रों व अभिनय के लिए रचित नाटकों में कुछ परिवर्तन के साथ यही बात दिखाई पड़ती है। इस क्षणस्थाई अल्पायु साहित्य में भाषा व भाव की अश्लीलता, सत्य व साहित्य नीति का व्यभिचार और सभी विषयों में रूढ़ता व असंयम की भावना दिखलाई पड़ती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि थोड़े ही समय में जनसाधारण की ऐसा उन्नति होगी कि उसके रंजन-विनोद में भी भद्रोचित संयम, सत्य का गांभीर्य एवं दुरूहतर आदर्श दिखाई देगा।

हमने साधारण व समग्र रूप से कविदल के गान की समालोचना की। स्थान स्थान पर इन गानों में सौंदर्य व भावों की उच्चता भी है; किन्तु सब मिलाकर इनमें क्षणस्थाईत्व रस की तरलता व काव्य कला के प्रति अवहेलना ही लक्षित होती है — और वैसा होने का कारण है इनका क्षणिक उत्तेजना के लिए रचित होना।

तथापि इन विगत आयु कविदल का गान हमारे साहित्य व समाज के इतिहास का एक अंग है — और अंग्रेजी राज्य के आरंभकाल में आधुनिक साहित्य ने राजसभा छोड़कर सामान्य जन-सभा का जो आतिथ्य ग्रहण किया है, ये गान उसी के प्रथम पथ-प्रदर्शक हैं।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के लोक साहित्य का दूसरा अध्याय समाप्त — क्रमश

गेय पहेलियां — एक टिप्पणी

कोमल कोठारी

लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं के अथाह समुद्र में ज्यों ज्यों गहरे पैठने का प्रयत्न करते हैं — त्यों त्यों लोक जीवन की वैविध्य पूर्ण अभिव्यंजनाएं आंखों के सामने तैरने लगती हैं। इन अभिव्यंजनाओं के बिंब-प्रतिबिंब, प्रतीक और अर्थ को सामाजिक रीति-रिवाजों के साथ मिला कर देखने का उपक्रम करते हैं तो 'सहज' लोक साहित्य अत्यन्त दुरूह जटिल प्रयास दिखाई देने लगता है। बालकों की सहज और निरर्थक दिखाई देने वाली पद्यात्मक पंक्तियां अपने अर्थ गौरव की चुनौती को लेकर खड़ी हो जाती हैं। मानस के किसी अंधियारे अचेतन में उनका चेतन-प्रकाश गंभीर प्रश्न बन जाता है। सहज और दैनन्दिन काम में आने वाली वस्तुओं को शब्द और अर्थ के जाल में बुन देने वाली पहेलियां पहिले तो केवल आमोद-प्रमोद की परिकल्पना ही लगती हैं लेकिन एक के बाद एक पहेली सामने आने लगती है तो लोक का सृजनात्मक मानस और उसकी अभिव्यंजना की शैली केवल प्रश्नोत्तर का रूप ही नहीं रहती अपितु वह बल-पूर्वक साहित्य-सृजन के अनेकानेक तत्वों की ओर धकेल देती है। शब्द क्या है ? शब्द में अर्थ-गौरव किस प्रकार आ जाता है ? उपमा क्या है ? रूपक क्या है ? सांगोपांग चित्रण हम किसे कहें ? एक ही शब्दावली में किस प्रकार दो तीन अर्थों के गूढ़ तत्व को छिपाया जा सकता है। शब्दों के मेल में अर्थ को छिपाने की प्रवृत्ति क्यों है ? शब्दों के ही प्रयोग द्वारा एक ही छद्म अर्थ को व्यक्त करने की लालसा क्यों जागृत होती है ?

इन प्रश्नों का उत्तर ढूंढते हैं तो यही महसूस होता है कि सामान्य जन अपने साहित्य के सृजन में उन सभी प्रकार की व्यंजनाओं और विधाओं को उपयोग में लेते रहे हैं जो सम्भ्रांत शास्त्रों में गहन विवेचनाओं के साथ साहित्य की कोटि में तो स्वीकार कर लिए गये हैं किन्तु

उन विवेचनाओं से यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि लोक जीवन की अनुभूति पूर्ण संवेदनाओं में किस प्रकार उनका बीज अंकुरित हुआ है और किस प्रकार उसी भूमि से शास्त्रीय साहित्य ने अपना कलेवर ग्रहण किया है।

पहेली एक प्रश्न है। पहेली का एक उत्तर है। पहेली का निर्माण शब्द गत है, जिसमें अभिधात्मक अर्थ है किन्तु उस अर्थ से एकदम भिन्न ही उसका उत्तर है। पहेली के एक एक शब्द को बार बार समझने का प्रयास करने पर ही, उसके संकेत को आत्मसात किया जा सकता है। पहेली – एक समस्या है और उसका निदान जीवन के दैनन्दिन अनुभव में निहित है। अपने चारों ओर फैला हुआ संसार, उपयोग में आने वाली छोटी छोटी वस्तुएं, खाने-पीने, पहिनने की चीजें, पेड़, पौधे, सूर्य-चंद्र - तारे और सामाजिक - आर्थिक तंत्र के उपकरण उसकी अभिव्यक्ति के साधन हैं। पहेली वस्तुतः एक ऐसा रूपक है जिसमें उपमेय छद्म रहता है। किन्तु रूपक के अन्वय से उसका उपमान निखर उठता है। एक के साथ दो या अधिक अर्थों तक पहुंचाने वाली पहेली का वस्तुतः अर्थ एक ही होता है।

पहेली के सृजन में कहीं शब्द-विन्यास, कहीं उपमेय-उपमान व्यवस्था, कहीं अर्थ संकेत की पद्धति तो कहीं अन्य भाषायी अलंकारों के प्रयोग के द्वारा अर्थ को संकेतिक करने का प्रयास किया जाता है। पहेली का रूप उसकी साहित्यिक एवं भाषायी गरिमा का पक्ष है।

दूसरी ओर पहेली का एक रूप केवल शाब्दिक-व्यंजना तक ही सीमित नहीं रहकर, सामाजिक रीति-रिवाजों के साथ अविच्छेद्य रूप से जुड़ा हुआ है। आज इस निबन्ध में उन्हीं पहेलियों को समझने का प्रयत्न करना है।

राजस्थान में विवाह के अवसर पर दूल्हे को पहेलियां पूछने का एक आम रिवाज है। आधुनिक शिक्षा के प्रसार एवं विवाह के प्रति बदले हुए विचारों के कारण नगरों से पहेलियों का क्रम विशृंखलित हो गया है किन्तु ग्राम्य समाज के विवाहों में पहेलियां पूछने का साम्राज्य आज भी छाया हुआ है। विवाह के पूर्व दूल्हा बनकर जाने वाला युवक जगह-जगह से पहेलियों को सुनता है, उनके अर्थों को याद करता है, अपनी बुद्धि को पैनी करता है और तब वह अपनी सालियों और पत्नी की सहेलियों के बीच बुद्धिमानी का सितारा बुलन्द करना चाहता है। राजस्थान के व्यापारिक प्रकाशनों में 'मुकलावा बहार और पाळियां [पहेलियों] पर अनेक छोटे छोटे प्रकाशन निकले हुए हैं। उनका प्रचार-प्रसार भी खूब है। ये प्रकाशन इस बात के पुष्ट प्रमाण हैं कि राजस्थान के जनजीवन के अन्तराल में बहने वाले प्रवाह में 'पहेलियों की बुद्धि' का एक आतंक और आनंद समाया हुआ है।

सर जेम्स फ्रेजर ने अपने अध्ययन में उन पहेलियों के प्रति विस्मय प्रकट किया है जो

वर्ष के किन्हीं निश्चित समय एवं अवसर पर पूछी जाती हैं। दक्षिण अफ्रीका के बंतू नामक आदिवासी जाति के वर्षा काल से संबंधी पहेलियां का एक अनुष्ठानिक रूप प्राप्त होता है। नग्न स्त्रियां 'वर्षा हो' कहती हुई नाचती हैं और यदि उनके क्षेत्र में कोई पुरुष पहुंच जाता है तो उसकी खूब पिटाई करने के बाद पहेलियां पूछी जाती हैं। इन पहेलियां के उत्तर अश्लील होते हैं। इसी प्रकार पूर्वी हिन्देशिया में चावलों की खेती काटने पर पहेलियां पूछने का क्रम चलता है। पुनः खेती के बोने तक पहेलियां पूछने की कठोर वर्जना भी है। मध्य एशिया के तुर्की देश में कंवारी लड़कियां अपने भावी पति से पहेलियां पूछती हैं और सही उत्तर न मिलने पर उन्हें दंड दिया करती हैं।

कर्मकाण्डीय व्यवस्था एवं अनुष्ठानिक क्रियाओं में भी पहेलियों ने प्रवेश किया है। दुर्गा भागवत ने अपनी पुस्तक 'द रिडल इन इन्डियन लाइफ, लोर एंड लिटरेचर में गोंड आदिवासियों की मृत्यु संबंधी पहेलियों का उल्लेख किया है। किसी व्यक्ति की मृत्यु के बाद पुरुष मिल कर गांव से दूर एकान्त स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं। यहां स्त्रियों का प्रवेश निषिद्ध है। एकत्रित समूह दो भागों में विभाजित हो जाता है और गेय रूप में पहेलियां के प्रश्नोत्तर प्रारंभ होते हैं। जीवन की विवेचना के रूप में पहेलियों का प्रयोग किया गया है।

राजस्थान के वैवाहिक अवसरों पर पहेलियों का पूछा जाना वस्तुतः अनुष्ठानिक कार्य व्यापार है। ऐसी पहेलियां के लिए विद्वानों का अभिमत है कि यह समानता मूलक अभिचार का प्रतिफलन है। किसी भी कठिन अवसर पर जब एक प्रकार का निर्णय जीवन की संपूर्ण गति को बदल सकता है, उस समय पहेली का सही सही अर्थ बता देने में आभिचारिक अथवा जादुई शक्ति का अनुमान निहित हो सकता है। सही अर्थ बताना, जीवन के सही मार्ग अथवा निर्णय के समानतामूलक अभिचार [जादू] वृत्ति का पोषक बन जाता है। वर्तमान में विवाह की सफलता-असफलता की कामना की पृष्ठभूमि से निश्चय ही ऐसे अवसर कम होते जा रहे हैं, जब नजर लग जाने से बच जाने के लिए काले डोरे या मांगलिक चावलों के उछालने के कार्यों को प्रचुर रूप से किया जाता था।

राजस्थान में निश्चित ही आज विवाह के अवसर पर पहेली पूछना एक रूढ़ि-मात्र ही है। किन्तु इसी रूढ़ि की पृष्ठभूमि में किसी न किसी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का शेषांश अवश्य निहित है। विवाह के अवसर पर वधू के घर पर ही पहेलियां पूछी जाती हैं और इस अवसर पर सामान्य वार्तालाप या कथोपकथन की पहेलियां भी होती हैं और गेय पहेलियां भी!

गेय पहेलियों में गीतात्मकता के कारण उनकी पंक्तियां के साथ कुछ स्तोभात्मक शब्द एवं ध्वनियों का होना भी आवश्यक बन गया। किन्तु साथ ही साथ प्रत्येक पहेली के साथ

एक 'गेयात्मक टेक' अवश्य जुड़ी हुई प्राप्त होती है। ऐसी टेक की पंक्तियों में एक चुनौती होती है कि या तो अर्थ बता दो और नहीं बता सकते तो स्वयं को मूर्ख मान लो, अपनी हार मान लो, अपना अज्ञान मान लो। यदि यह नहीं तो किसी बुद्धिमान से अर्थ पूछ लो। अर्थ बताकर ज्ञान का उजाला कर लो। अर्थ बताने में सफल हो जाओ तो सालियों से सस्नेह अभिवादन कर लो।

इन गेय-पहेलियों के रचना विधान को देखने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि इनका पद्यात्मक सृजन आरोपित है अर्थात पहेलियों की गुत्थी का निर्माण पहिले एवं पद्यबद्धता एवं गेयता का निर्माण बाद में हुआ है। ठीक ये ही पहेलियां सामान्यतया अगेय रूप से पूछी भी जाती हैं। गेय-रूपात्मक गठन के कारण ही प्रस्तुत रूप निःसृत हुआ है।

इन्हीं पहेलियों के सर्जित रूप में लोकगीतों की छाया भी स्पष्टतः पहिचानी जा सकती है। एक पहेली की कल्पना तो अनेकानेक लोकगीतों में ज्यों की त्यों मिलती है :

चांदा थारै चांनणं, सूती पिलंग बिछाय
जद जागूं तद अेकली, मरूं कटारो खाय।

इसका अर्थ है : स्वप्न। विरहणी नायिका स्निग्ध चांदनी में प्रिय-मिलन की उत्कंठा में सोने का प्रयास करते हुए भी सफल नहीं होती। निद्रा की गोद में उसका जीवन स्वप्न में ही प्रिय मिलन के हर्षातिरेक से उत्फुल्ल हो उठता है। किन्तु बैरिन आंखों के खुलते ही प्रियतम वायवी होकर आकाश में समा जाता है और वह प्रियतम विहीन अकेली बच जाती है। यही कल्पना काव्य-रूढ़ि के रूप में अनेक गीतों एवं दोहों में ज्यों की त्यों प्राप्त होती है। लोक गीतों एवं गेय पहेलियों के इस सामंजस्य से भी प्रहेलिकात्मक सृजन-क्रिया को समझा जा सकता है।

विवाह के अवसर पर राजस्थान में गेय पहेलियों का ही प्रयोग होता हो — सो बात नहीं। विवादात्मक रूप से प्रश्न-उत्तर की प्रणाली भी प्रचलित है। ऐसी पहेली की उक्ति में प्रश्न द्वयार्थक होता है किन्तु उसका सहज उत्तर हास्यात्मक अथवा अश्लील भी हो सकता है। एक पहेली है : जब आप जमीन पर बैठते हो तो सबसे पहिले क्या टिकाते हो? इसका सुन्दर उत्तर है : अपनी नजर। ऐसे अनेक प्रश्न-उत्तर विवाह के अवसर पर दूल्हे को सुनने-पड़ते हैं। ऐसी पहेलियों में पति द्वारा भी वधू की सखि-सहेलियों से प्रश्न पूछे जाते हैं। सुन्दर प्रश्नों या पहेलियों के उत्तर इन्हीं महिलाओं को देने होते हैं।

इसी सामाजिक अनुष्ठान के अवसर पर वधू के घर से 'गालियां' नाम से गीत भी गाये जाते हैं। अधिकांशतया इन गीतों की पंक्तियां अश्लील अर्थ का द्योतन करती हैं किन्तु

गीत की पंक्ति के मुड़ाव के कारण वही अर्थ स्तुतिपूर्ण बन जाता है । निंदा-स्तुति का यह गीत-प्रकार भी पहेली का एक रूप ही मानना चाहिये ।

प्रस्तुत संग्रह की पहेलियों में प्रकृति से सूर्य , तारे एवं वर्षा की कल्पना , वनस्पति से मेंहदी , सांगरी , काचर की बेल , राई , मिर्च , कपास जैसे उपकरण और सामान्य जीवन में खूब काम में आने वाली वस्तुओं में से बिलोवना , काच , शराब की बोतल , कज्जलदान जैसे अर्थ संकेतित हैं । इन सभी उपकरणों को जिस शाब्दिक अथवा अर्थ की कल्पना के साथ जोड़ा गया है , वह अत्यंत सूक्ष्म , संक्षिप्त एवं स्पष्ट है । इनका आनन्द उसी जगह निहित है जहां कल्पना गत उपमान का आरोपण अर्थ के साथ ही अपने विवेक को जागृत कर देता है । एक ऐसा गुलाब का फूल जो खूब महकता है , वह न तो माली के यहां उपजता है और न राजा के महलों में पहुंचाया जा सकता है । कौन सा है यह फूल ? अर्थ है – सूर्य । गुलाब के फूल और सूर्य के उपमेय-उपमान में एक अभेदत्व स्थापित करने के साथ ही फूल की कुछ क्रियाओं से उसे भिन्नत्व दे दिया गया है । फूल के इस सामान्य धर्म की अस्वीकृति के कारण ही छद्म 'सूर्य' का उपमान स्पष्ट हो सकता है ।

सामान्य जन-समाज की लोकाभिमुख परिकल्पना में पहेलियों का गठन काव्यात्मक गुणों को आत्मसात करके ही बन पाया है । इसीलिए प्रत्येक पहेली अपनी कल्पना में एक संपूर्ण तथ्य को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने में सफल हो सकी है ।

[गेय-पहेलियों के कुछ चरण निरंतर पुनरावृत्त होते हैं । प्रस्तुत पहेलियां साध एवं भांबी जाति की महिलाओं से संग्रहीत की गई हैं । साध जाति की महिलाओं की पहेलियों में 'अरथ-गरथ री गांठड़ी' से लेकर 'ग्यांन दौ नीं म्हारा राज' के चरण हर पहेली के साथ गाये जाते हैं । इसी प्रकार 'अंतर कवडी मौ' से 'करलौ सिलांम' तक की पुनरावृत्त पंक्तियां भांबी जाति की महिलाओं में प्राप्त होती हैं । पहेली के पूर्ण रूप को प्रथम पहेली के साथ ही दिया गया है । पाठक प्रत्येक पहेली के पूर्ण गेय-रूप को समझने के लिए उसे पूर्ण करके देखें ।]

गैरौ फूल गुलाब रौ जी ढोला
जगमग झोला खाय ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
नीं माळी रै नीपजै जी ढोला
नीं राजा रै जाय ओ राज
अरथ गरथ री गांठड़ी जी ढोला
पटकौ पंचां मांय ओ राज
जे थांनै ग्यांन नीं ऊपजै जी ढोला
मूरख मोटा गिवार ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज **सूरज**

कांकड़ मिरगौ मारचौ जी ढोला
लाया गाडा घाल ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज

शब्दार्थ : **ढोला**—दामाद के लिए सम्बोधन । **मांय**—अन्दर । **कांकड़**—जंगल । **मिरगौ**—मृग ।

खावै ब्रांमण बांणिया जी ढोला
खावै जुग संसार ओ राज नारियल

चार खुणा री बावड़ी जी ढोला
भरी हिबोळा खाय ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
हाथी घोड़ा डूबिया जी ढोला
पिणघट खाली जाय ओ राज दर्पण

कुऔ खुदोजै मेड़ते जी ढोला
सारण सांगानेर ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
पांणतियौ पाली बसै जी ढोला
सींचारौ अजमेर ओ राज[1] बिलोवना

रतन कुऔ मुख सांकड़ौ जी ढोला
डोल्यां पड़ै रे पचास ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
सौ गोरचां रौ सायबौ जी ढोला
अेकण रौ भरतार ओ राज[2] कूंपली, कज्जलदान

[1]**व्याख्या :** दही बिलोने का बिलौवना कहीं दूर घड़ा जाता है, चमड़े का नेतरा कहीं दूसरी जगह तैयार होता है। दही बिलोने वाली कोई दूसरी है और छाछ डालने वाली कोई और ही। पहेली में वर्णित शहरों के नाम दूरी के संकेत मात्र हैं।

[2]**व्याख्या :** कूंपले का मुंह संकड़ा होता है। काजल सारने के लिए पचासों अंगुलियां कज्जल-दान में डोलियों के समान प्रवेश करती हैं। सौ सुन्दरियां उससे काजल सारती हैं, किन्तु उस पर अधिकार तो एक ही स्त्री का होता है।

शब्दार्थ : **खुणा**—कोने। **सारण**—कुए से सटी हुई ढलान जहां पानी सींचने के लिए बैल चला करते हैं। **पांणतियौ**—खेत को पिलाने वाला। **सींचारौ**—कुए से पानी सींचने वाला।

तीन पगां रौ टोडियौ जी ढोला
दौड़्यौ सरवर जाय ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
झेक्योड़ौ झीकै नहीं जी ढोला
तड़च खाय पड़ जाय ओ रज[3] **तिवावल।**

काकी रै दोय कांनड़ा जी ढोला
काकौ बूटौ बचाक ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
काकी हिलाया कांनड़ा जी ढोला
काकौ पड़्यौ रे दटाक ओ राज[४] **चाबी व ताला**

सांझ पड़ी तिल जेळिया जी ढोला
ऊगा धारौधार ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
पौ फाटी पगड़ौ हुवौ जी ढोला
लाटौ दियौ रे लटाय ओ राज **आकाश के तारे**

[3]**व्याख्या :** खलिहान में धान साफ करते समय तिवावले की जरूरत पड़ती है। तीन पैरों की इस तिपाई पर खड़े होकर धान नीचे जमीन पर डाला जाता है। हल्का घास-फूस हवा में उड़कर दूर चला जाता है और ठोस धान वहीं नीचे इकट्ठा होता जाता है। यह तीन पैरों वाला एक अजीब ही ऊंट है, जो झेकाने पर भी नीचे नहीं बैठता, गिर भले ही जाय।

[४]**व्याख्या :** प्राचीन छड़ वाले लम्बे तालों की चाबियों के मुंह पर कानों की तरह दो हिस्से जुड़े रहते हैं। ताला बिल्कुल सीधा व सपाट सा होता है। चाबी घुमाने की क्रिया ऐसी है मानो चाची ने चाचे के कान हिलायें और चाचा एकदम नीचे गिर गया। साफ मतलब है कि चाबी लगने पर ताला खुलकर नीचे आ गिरता है।

शब्दार्थ : **पगां**—पैर। **टोडियौ**—ऊंट का बच्चा। **झेक्योड़ौ**—ऊंट को बिठाने की क्रिया। **काकी**—चाची। **बूटौ बचाक**—कनकटा। **जेळिया**—छांटे। **लाटौ**—खलिहान।

मया बंधण री चूंदड़ी जी ढोला
सिरै बजारां सूखै ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
मायड़ व्है तौ मोलवं जी ढोला
धीव अलूंणी जाय ओ राज — मेंहदी

नैंन्हा कण री बाजरी जी ढोला
सोवतड़ां डुळ जाय ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
नैंन्हौ गोरी रौ सायबौ जी ढोला
पटलियां में रळ जाय ओ राज — राई

नव जाया नव पेट में जी ढोला
नव नांनेरै जाय ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
मतौ करूं तौ फेर जिणूं जी ढोला
काळ पड़्यां कांई खाय ओ राज[४] — काचरे की बेल

अबै समै री डावड़ी जी ढोला
नैंन्ही नखरादार ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज

[४] **व्याख्या :** काचरों की बेल पर न जाने कितने ही काचरे पैदा होते हैं। यदि बेल चाहे तो और भी कई पैदा कर सकती है, किन्तु वह इसी लक्ष्य से नियोजन किये हुए है कि अकाल की विभीषिका में वे खायेंगे क्या ? व्यंजना यह है कि अकाल पड़ने पर बेल सूख जाती है और काचरे लगते ही नहीं।

शब्दार्थ : **मया**—बारीक। **मायड़**—मां। **धीव**—पुत्री। **अलूंणी**—निराश, दुखी, उदास। **सोवतड़ां**—सोते हुए। **रळ जाय**—छिप जाना। **जाया**—पैदा किये। **नांनेरै**—ननिहाल। **मतौ**—इच्छा। **काळ**—अकाल। **कांई**—क्या। **डावड़ी**—लड़की।

चूंपां ऊपर घूघरा जी ढोला — मिर्च
गुलफी आंटादार ओ राज

मोती जितरो माळियौ जी ढोला
तिल जितरा किंवाड़ ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
मांय पंखेरू रम रह्या जी ढोला — आंख
राजन रै उणियार ओ राज

चांदा थारै चांनणै जी ढोला
सूती पिलंग बिछाय ओ राज
समझौ नीं ग्यांन दौ नीं म्हारा राज
जद जागूं जद अेकली जी ढोला — स्वप्न
मरूं रे कटारी खाय ओ राज

नाडी में पाडो चरै, जी जंवायां
चरै आनोखौ चार,
ग्यांनी हो तो ग्यांन करो, जी जंवायां
बैठा करो विचार
पाडौ उणरा पेट में, जी जंवायां
दही दिसावर जाय,
अंतर कवडी सौ, जी जंवायां
गैर गुमांनी सौ

शब्दार्थ : मालियौ—महल। जितरौ—जितना। किंवाड़—कपाट। रम रह्या—खेल रहा है। उणियार—सदृश। नाडी—तलैया। पाडो—भैंस की बच्ची। दिसावर—विदेश।

इण आडी रौ अरथ बताय , जी जवायां
सालेलियां सूं करलौ सिलांम[6] — कपास का डोडा

चार आंगळ रो लाकड़ी , जी जवायां
आठ आंगळ रौ पूठौ
ग्यांनी हौ तौ ग्यान करौ , जी जवायां
बैठा करौ विचार
इण आडी रौ अरथ नीं जांणौ , जी जवायां
नाक बढ़ायर ऊठौ — **उस्तरा**

पतळी सी आ पानळी , जी जवायां
ऊभी हरिया हेट
ग्यांनी हौ तौ ग्यान करौ , जी जवायां
बैठा करौ विचार
इग्यारै देवर फिर गया , जी जवायां
लेग्यौ जेठ रौ जेठ[7] — **खेजड़ी की सांगरी**

चंदण केरी लाकड़ो , जी जवायां
पड़ी चतर रै हाथ ,
ग्यांनी हौ तौ ग्यान करौ , जी जवायां
बैठा करौ विचार

[6] **व्याख्या :** डोडे के भीतर का बिनौला गर्भाशय के बच्चे की तरह है । और रुई विभिन्न मंडियों में दूर दूर बिकने को जाती है ।

[7] **व्याख्या :** सांगरी एकदम पतली होती है । हरी खेजड़ी पर ही लगती है । गर्मियों के दिनों केवल जेठ महीने में फलती है । वर्ष के ग्यारह महीने ग्यारह देवरों के समान हैं, जिनके सांगरी हाथ नहीं आती । जेठ [अर्थात जेठ मास] उन्हें तोड़ ले जाता है ।

शब्दार्थ : सालेलियां—सालियें व उनकी साथिनें । **पूठौ**—पीछे का हिस्सा । **बढायर**—कटा कर । **पतळो**—छरहरी

बारै तौ बाजोट घड़्या, जी जंवायां
अेक घांणी री लाठ
ग्यांनी हौ तौ ग्यांन करौ, जी जंवायां
बैठा करौ विचार
ऊबरतौ री आरा घड़्या, जी जंवायां
तीन सौ नै साठ[1] वर्ष

काजळिया री कांचळी, जी जंवायां
मांय नरमा नंग
ग्यांनी हौ तौ ग्यांन करौ, जी जंवायां
बैठा करौ विचार
मांचै बैठौ डावड़ौ, जी जंवायां
मोट्यार रौ मन्न शराब की बोतल

केसर भर्‌यौ बाटकौ, जी जंवायां
पड़्यौ पिलंग रे हेट
ग्यांनी हौ तौ ग्यांन करौ, जी जंवायां
बैठा करौ विचार
नीचै लुळनै लेवतां, जी जंवायां
देखै देवर जेठ केसरिया पगड़ी

[1]व्याख्या : एक वर्ष के बारह महीनों और तीन सौ साठ दिनों की बाजोट व आरों की सादृश्यता प्रदान की गई है।

घांणी—कोल्हू। **लाठ**—कोल्हू की गोल व लम्बी लकड़ी। **ऊबरती**—बची हुई, शेष। **आरा**—लकड़ी की वह छोटी पटरी जो गाड़ी के पहिये की गड़ारी और पुट्ठी के बीच में जड़ी रहती है। **काजलिया**—काले रंग का। **कांचली**—कंचुकि। **मांय**—अंदर। **मोट्यार**—नौजवान। **बाटकौ**—कटोरा। **लुळनै**—झुक कर।

आज की आवश्यकता

राजस्थान के मुख्य मन्त्री

श्री मोहनलाल सुखाड़िया का उद्‌बोधन

उत्पादन

हमें उत्पादन में अधिक से अधिक वृद्धि के कार्य को एक राष्ट्रीय कर्तव्य मानकर खेतों, कारखानों व खदानों में कार्य करना है जिससे कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को मजबूत बना सकें और हमें अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं के लिए बाहरी सहायता पर निर्भर नहीं रहना पड़े। देश के हर नागरिक को, चाहे वह किसी भी कार्य में लगा हो, यह मानकर कार्य करना चाहिये कि वह देश की शक्ति और समृद्धि बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है।

परिवार नियोजम

परिवार नियोजन का उद्देश्य परिवार, समाज व देश के कल्याण के लिए परिवार को सीमित करना है। हमें उतने ही बच्चे पैदा करने चाहिये जिनका भरण-पोषण माता-पिता भली-भांति कर सकें, उन्हें अच्छी शिक्षा दे सकें और अच्छे वस्त्र तथा स्वास्थ्यप्रद भोजन उपलब्ध कर सकें। यदि हमने ऐसा किया तो हम हर परिवार को समाज की एक समृद्ध और सुखी इकाई बना सकेंगे।

अल्प बचत

हमारे साधनों में अल्प बचत का विशेष महत्व है। यह न केवल पारिवारिक जीवन में बचत की आदत डालती है बल्कि इससे योजना की क्रियान्विति हेतु आवश्यक धन राशि भी प्राप्त होती है। इस वर्ष अल्प बचत योजना के अन्तर्गत हमें अधिक से अधिक धनराशि एकत्रित करनी होगी। इस लक्ष्य की पूर्ति होने से राज्य को विकास कार्यों के लिए उपयुक्त धन प्राप्त होगा और हम विकास के क्रम को जारी रख सकेंगे।

ज. स—निदेशालय द्वारा प्रसारित— डी. ३७०।६८।१०६८८ | ११०८६ बी

डाक पंजियक संख्या जे. ५६४



अन्तर्राष्ट्रीय लोक कथा साहित्य
की अभूतपूर्व परम्परा में

बातां री फुलवाड़ी

कुल बीस भागों में प्रकाशित करने की योजना

नौ बृहत भाग प्रकाशित
प्रति भाग का मूल्य पन्द्रह रुपये

रूपायन संस्थान


লোকসংস্কৃতি

चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया